लोहगढ़

•

ऐतिहासिक उपन्यास

लोहगढ़

गुरु गोबिन्द सिंह के जीवन पर आधारित ऐतिहासिक उपन्यास

हरनामदास सहराई

रूपान्तरकार

डॉ० बदरीनाथ कपूर

लोकभारती प्रकाशन

१५-ए, महात्मा गाधी मार्ग, इलाहाबाद-१

लोकभारती प्रकाशन
१५ ए महात्मा गांधी मार्ग,
इलाहाबाद १ द्वारा प्रकाशित

•

संस्करण १९८३

•

मूल्य ३०.००

•

आवरण शिवगोविन्द पाण्डे

•

लोकभारती प्रेस
१८, महात्मा गांधी मार्ग,
इलाहाबाद १ द्वारा मुद्रित

भूमिका

'लोहगढ' उच्च कोटि का ऐतिहासिक उपन्यास है और पंजाबी के प्रसिद्ध तथा यशस्वी लेखक श्री हरनामदास सहराई के 'लोहगढ' नामक उपन्यास का स्वतन्त्र रूपान्तर है। गुरुमुखी मे 'लोहगढ' के तीन-चार संस्करण हो चुके हैं और पंजाबी पाठक उसे बहुत चाव से पढते हैं।

सहराई जी पंजाबी भाषा के ऐसे लेखक हैं, जिनकी लेखन-शैली और वर्णन-शैली का मुकाबला कुछ इने-गिने लेखक ही कर सकते हैं। उनकी भाषा बहुत ही चलती हुई, चटपटी और रंगीन होती है और वे कहीं-कहीं तो प्राकृतिक दृश्यो तथा व्यक्तियो के चरित्रो का चित्रण करने मे कमाल ही कर दिखाते हैं। इस कथन के प्रमाण पाठको को 'लोहगढ' मे भरे हुए दिखाई देंगे।

'लोहगढ' की घटनाएँ उस समय से सम्बद्ध हैं जब मुगलो के अत्याचार बहुत अधिक बढ़ गये थे और सारे देश के हिन्दू बुरी तरह से त्रस्त हो रहे थे। इसी अत्याचार और त्रास से जन-साधारण की रक्षा करने के लिए पंजाब मे सिक्ख गुरुओ ने अपूर्व आत्म-त्याग करते हुए बड़े-बड़े कष्ट सहे थे। इस प्रतिक्रिया की पराकाष्ठा उस समय हुई थी जब आदरणीय गुरु गोविन्दसिंह जी ने सिक्खों को एक प्रबल सैनिक-शक्ति का रूप प्रदान किया था और उन्हें जमकर अत्याचारो का अन्त करने के लिए खड़ा किया था। 'लोहगढ' मे मुगलो और सिक्खो के उसी संघर्ष का जीता-जागता चित्र प्रस्तुत किया गया है। आशा है, इस उपन्यास से पाठकों का मनोरंजन तो होगा ही, साथ ही साथ वे उस समय की अनेक ऐसी ऐतिहासिक घटनाओ से भी परिचित होंगे जो अभी तक कुछ इतिहासो के पृष्ठो मे ही छिपी और दबी पड़ी थीं।

—रामचन्द्र वर्मा

आमुख

अभी कल की बात है। मेरे एक विद्वान् मित्र ने जो स्थानीय एक विश्वविद्यालय मे हिन्दी के अध्यापक हैं, अपने बिस बीस मित्रो से पूछा कि आप लोग हिन्दी के तीन सर्वश्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यासो के नाम बताइये। प्रश्न साधारण सा था, वैसा ही जैसा साधारणत: दसवीं कक्षा के छात्रो से किया जाता है और वह पूछा गया था ऐसे लोगो से जिनमें से एक भी ऐसा न था जिसे पी. एच. डी. की उपाधि प्राप्त न हो। परन्तु सहसा उक्त प्रश्न का उत्तर देते किसी से भी न बन पड़ा। थोड़ी देर बाद किसी ने बहुत सोच विचार कर उत्तर दिया भी तो उस पर लम्बी बहस छिड़ गई और वह इस बात का प्रमाण हो गई कि हिन्दी मे ऐतिहासिक उपन्यासो का दयनीय अभाव है।

वास्तव मे यदि बंकिमचन्द्र राखालदास आदि के बँगला, कन्हैया लाल मुन्शी तथा रमण लाल देसाई के गुजराती और हरिनारायण आप्टे के मराठी ऐतिहासिक उपन्यासो के 'हिन्दी अनुवादो' को छोड़ दिया जाय तो हिन्दी मे राहुल सांकृत्यायन के 'सिंह सेनापति' और 'जय यौधेय', वृन्दावनलाल वर्मा के 'गढ़कुण्डार' और मृगनयनी', भगवती चरण वर्मा के 'चित्रलेखा', यशपाल के 'दिव्या', चतुरसेन शास्त्री के 'वैशाली की नगरवधू' और हजारी प्रसाद द्विवेदी के 'बाणभट्ट की आत्मकथा' नामक उपन्यास ही उसमे उल्लेख्य रह जाते हैं।

उक्त उपन्यासो में भी अधिकतर के सम्बन्ध मे हिन्दी के विद्वानो और आलोचकों की दृढ़ धारणा है कि वे ऐतिहासिक उपन्यास न होकर ऐतिहासिक रोमान्स मात्र हैं। ऐसी स्थिति मे यह जानने का कुतूहल स्वाभाविक ही माना जायगा कि हिन्दी में ऐतिहासिक उपन्यासों के इस अभाव का कारण क्या है?

यों तो उपन्यासो के सामाजिक, वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक, राजनीतिक आंचलिक आदि जितने रूप हैं उन सभी मे ऐतिहासिक उपन्यास लिखना अपेक्षाकृत सरल माना जाता है क्योकि उसकी रचना मे कथावस्तु का एक ढाँचा बना बनाया तैयार मिलता है। परन्तु उक्त भ्रम उस समय सहसा मिट जाता

होता है कि सामने उपस्थित प्रचुर ऐतिहासिक सामग्री का उचित उपयोग न कर पाने के कारण लेखक ऐतिहासिक उपन्यास लिखने के स्थान पर ऐतिहासिक विवरण पत्र मात्र प्रस्तुत कर जाता है। वृंदावन लाल वर्मा का झाँसी की रानी' नामक तथोक्त ऐतिहासिक उपन्यास देखने पर उक्त कथन की सत्यता प्रमाणित हो जायगी।

वस्तुत ऐतिहासिक उपन्यास लिखना अपेक्षाकृत कठिन है। कथावस्तु सम्बन्धी जिस सुविधा का ऊपर उल्लेख किया गया है वही ऐतिहासिक उपन्यास की रचना मे सबसे अधिक कठिनाई भी उपस्थित करती है। प्रचुर ऐतिहासिक सामग्री मे से अनुकूल घटनाओं, परिस्थितियो और पात्रो का चुनाव लेखक के लिए एक समस्या बन जाता है।

ऐतिहासिक उपन्यास की रचना मे दूसरी बाधा यह होती है कि जहाँ अन्य प्रकार के उपन्यास लेखक अपने भावानुरूप घटनाओ और पात्रो के सर्जन में स्वतन्त्र होते हैं वही ऐतिहासिक उपन्यास लेखक ऐतिहासिक घटनाओ और पात्रों के विकट व्यूह मे इस प्रकार फँसा रहता है कि उसे एक पग भी इधर-उधर रखने की स्वतन्त्रता नही रह जाती। वह तनिक भी मनमानी नहीं कर सकता। उसे तो एक निश्चित पद्धति द्वारा ही उक्त व्यूह का भेदन करना पडता है। यह बात दूसरी है कि निश्चित पद्धतियो मे से कोई एक पद्धति चुन लेने और उसका अनुसरण करने के लिए ऐतिहासिक उपन्यास लेखक पूर्ण स्वतन्त्र है।

पद्धति भेद के कारण ऐतिहासिक उपन्यासो के अनेक रूप हो जाते हैं। उन रूपो मे मुख्यतया कुछ पात्र प्रधान होते हैं, कुछ घटना प्रधान होते हैं और कुछ केवल वातावरण प्रधान। पात्र प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों मे ऐतिहासिक चरित्रो का प्राधान्य होता है। ऐतिहासिक दृष्टि से ऐसे उपन्यासो के पात्र प्रामाणिक होते हैं। उनके ऐतिहासिक कार्यकलाप के बीच मे कुछ काल्पनिक घटनाओ की भी उद्‌भावना ऐसे उपन्यासो मे कर ली जा सकती है।

घटना प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासो मे यह आवश्यक होता है कि उनमे वर्णित घटनाएँ इतिहास की दृष्टि से प्रामाणिक हो। यदि ऐसी घटनाओ के पात्र कुछ हद तक काल्पनिक भी हो तो यह बहुत बडे दोष की बात नही मानी जाती।

वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासो मे कुछ ऐतिहासिक पात्रो और कुछ ऐतिहासिक घटनाओ का समावेश करने के बावजूद लेखक अपनी सारी शक्ति इतिहास के एक काल विशेष का समूचा और सटीक वातावरण उपस्थित

करने में लगाता है। ऐसे ही उपन्यास साधारणतया ऐतिहासिक रोमान्स की कोटि में आ पड़ते हैं।

उक्त तीनों प्रकारों के ऐतिहासिक उपन्यासों के अतिरिक्त वे विशुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास भी होते हैं जिनमें पात्र, घटना और वातावरण सभी को इतिहास की दृष्टि से प्रामाणिक रखने का प्रयत्न किया जाता है, चूंकि वे उपन्यास होते हैं, इतिहास नहीं, इसलिए उनमें कल्पना के पूर्ण विहार की भी पूरी पूरी छूट रहती है। श्री हरनामदास सहराई के प्रस्तुत उपन्यास 'सोहगढ़' की गणना भी इसी कोटि के उपन्यास में की जानी चाहिये।

प्रस्तुत उपन्यास मूलतः पंजाबी भाषा की रचना है। पंजाबी भाषा और गुरमुखी लिपि से अनभिज्ञ रहने के कारण इसका मौलिक रूप पढ़ने की सुविधा नहीं मिली फिर भी इतना ज्ञात है कि इसकी रचना मूलरूप में 'सोहगढ़' नाम से हुई थी। लेखक के मूल उद्देश्य को देखते हुए उक्त नामकरण उचित था। लेखक पंजाबी है। उसने पंजाब के ऐतिहासिक रंग-मंच की एक प्रमुख अभिनेता जाति के जीवन चरित्र का एक वीर्य पूर्ण स्वर्णिम पृष्ठ उपन्यास के रूप में लिखने का प्रयत्न किया है। उस स्वर्णिम पृष्ठ पर जादू के अक्षरों में लिखा हुआ नाम है—सोहगढ़। यह नाम सिक्खों को आकर्षित करता है उन्हें अपने पूर्वजों की कीर्ति का स्मरण कराता है और अपनी ध्वनि से उनके हृदय के प्रत्येक तार में झंकार भर देता है। फलतः पंजाबी उपन्यास 'सोहगढ़' से लेखक ने जैसी आशा की थी वह भलीभांति पूरी हुई है। पंजाब और पंजाबी भाषियों ने इसका दिल खोलकर स्वागत किया है और पंजाबी साहित्य में लेखक अमर हो गया है। परन्तु प्रस्तुत उपन्यास के राष्ट्र भाषा में अनुवादित होने पर पुस्तक के नाम को राष्ट्रीय रूप देना भी आवश्यक था। पंजाब के बाहर अन्य भाषाभाषियों के लिए 'सोहगढ़' नाम में केवल इसी एक सहज कारण से कोई आकर्षण नहीं है क्योंकि वे उससे अपरिचित हैं।

भारत के इतिहास में गुरु गोविन्द सिंह जी और पंजाब के इतिहास में बन्दा वैरागी अपने विद्युत व्यक्तित्व से इतिहास के पाठकों की आँखों में बराबर चकाचौंध उत्पन्न करते रहे हैं। प्रस्तुत लेखक ने अपने उपन्यास के प्राणपूर्ण पात्रों के लिए इन्हीं का चुनाव किया है और इन्हीं की श्रेणी में लाकर खड़ा कर दिया है अपनी कल्पना से निर्मित पात्र राजगुरु को। गुरु गोविन्द सिंह जी का देहावसान हो जाता है। पाठक दुखी तो होता है परन्तु उन्हें शीघ्र ही भूलकर कथा के प्रवाह में बह चलता है। गुरु का बन्दा विजयी वैरागी भी एकबार सदा के लिए पराजित हो जाता है। यह पढ़कर पाठक के मन पर

उदासी छा जाती है। न चाहते हुए उसे भूलने का प्रयत्न वह करने लगता है। परन्तु राजगुरु बारूद का विस्फोट कर ऐसा समुद्भासित हो उठता है कि उसे भूल जाना कठिन ही है। वह पाठकों के चित पर अपने व्यक्तित्व की अमिट छाप छोड़ जाता है। ऐसे चरित्र की सृष्टि करने के कारण लेखक साधुवाद का पात्र है।

जहाँ तक इश्याकन का प्रश्न है लेखक की सफलता सन्देहातीत माननी चाहिये। चूँकि उपन्यास के उपयुक्त उद्धरण दे कर पुस्तक का कलेवर बढ़ाना अभीष्ट नहीं, अत: इतना बता देना आवश्यक है कि गोदावरी के मेले, महफिल और युद्ध-स्थानों के वर्णन वस्तुतः हृदयग्राही हैं। उनमें कहीं कहीं गद्य काव्य के पाठ का आनन्द मिलता है। भाषा सूक्तिमयी है। प्रभावपूर्ण ओरदार भाषा की सुन्दरता में लेखक की सूक्तियाँ चार चाँद सा लगाती प्रतीत होती हैं। कितनी अच्छी हैं ये उक्तियाँ संसार में हर कोई विष्णु बनने का इच्छुक होता है जिससे कि लक्ष्मी उसकी अर्द्धांगिनी बनी रहे' 'बूढ़ी तूफानों की जन्म-दात्री होती है।' 'रहम करनेवाली हुकूमत बोदा होती है, 'चोट खाई हुई साँपिन और हारा हुआ सिपाही अविश्वसनीय होता है' आदि।

अन्त में इतना निवेदन कर देना अप्रासंगिक न होगा कि विद्युत गृह से तारों का जाल बिछाकर नगर के घर घर में बिजली पहुँचाई जा सकती है। प्रस्तुत उपन्यास लेखक के हृदय में भी आग है और वह स्पष्टतः चाहता है कि उसके शब्दजाल के माध्यम से यह आग उसके हिन्दी के पाठकों के हृदय में भी पहुँच जाय। यह सही है कि आग कभी-कभी जला भी डालती है परन्तु वह प्राय: भोजन पकाती है और शरीर की ठंडक दूर कर उसमें गरमाहट भी लाती है। मैं आशा करता हूँ कि प्रस्तुत उपन्यास हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासों के पाठकों की भूख मिटावेगा और उन लेखकों के हृदय में ऐतिहासिक उपन्यास लिखने की गरमाहट लावेगा जिनमें ऐसे उपन्यास रचने की शक्ति है।

मैं सहराई के प्रस्तुत उपन्यास का स्वागत करता हूँ।

— रुद्र काशिकेय

लोहगढ़

•



लोहगढ़

प्रतिज्ञा

अहमस्मि सपत्नहेन्द्र इवारिष्टो अक्षत: ।
अध: सपत्ना मे पदोरिमे सर्वे अभिष्ठिता: ॥

—ऋग्वेद

मैं शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाला हूं। इन्द्र के समान पराक्रमी हूं। मुझे न तो कोई मार सकता है, न प्रपीड़ित कर सकता है। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है, मानो मेरे सभी शत्रु मेरे पैरों तले रौंदे पड़े हुए हैं।

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्,
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चय: ।

—भगवान् कृष्ण

यदि मर गए तो स्वर्ग मिलेगा, यदि जीत गए तो पृथ्वी का शासन करोगे। इसलिए हे अर्जुन ! उठो और युद्ध के लिए तैयार हो जाओ।

देहि शिवा वर मोहि इहै, शुभ करमन ते कबहू न टरौं,
न डरौं अरि सों जब जाए लरौं, निसचय कर अपनी जीत करौं।
अरु सिख हौं अपने मन को एह, लालच हऊ गुण तव नित उचरौं,
जब आव की आउध निदान बने, अति ही रण मे तब जूझ मरौं।

—गुरु गोबिन्द सिंह

१

□□□

जय जय गोदावरी

गोदावरी के किनारे चाहे प्रतिदिन मेले लगते रहते हों परन्तु शिवरात्रि के दिन जो मेला उसके किनारे लगता है वह कोई लुका-छिपा नहीं रहता। दक्षिण भारत के बच्चे-बच्चे की जबान पर इस मेले की चर्चाएँ गूँजती रहती हैं। वृद्ध तथा युवा इस मेले का नाम सुनते ही नाचने लगते हैं। उनके हृदयों में इस मेले का चाव चिकोटियाँ काटने लगता है। तरुणियाँ बनाव-शृंगार कर बन बैठती हैं। पूरे वर्ष में एक दिन ही तो मेला देखना होता है। जीवन में कोई कितने अधिक मेले देख लेगा!

आधी रात से मेला जुट रहा था। गोदावरी की लहरों में भी जैसे नाचने की उमंग गुदगुदा रही हो। वह भी कदाचित् पायल पहनने की तैयारी में लगी थी। मेले पर जवानी का नशा छा रहा था। इठला-इठला कर उठने वाली लहरें इस प्रकार मद्धिम पड़ जातीं जैसे किसी तारे की लौ ने उन्हें अलमस्त कर दिया हो अथवा सोम-रस के नशे में वे झूम उठी हों। नील कंठ (शिव जी) के मन्दिर की दीवारों से लहरें टकरा रही थीं, फल-स्वरूप धतूरे तथा भांग के नशे का जादू उनके सिर चढ़कर बोलने लगा था। पर कभी-कभी वे छिगड़ैल साँड की भाँति धर-मस्तियाँ करने लगतीं, मानो नदी का आवेग लहरों में प्रवेश कर रहा हो। लहरें कभी मस्त सुरों की लय में गाती-आतीं तो कभी कर्ण-कटु शब्द करने लगतीं। आज गोदावरी कुछ मदहोश-सी प्रतीत हो रही थी। मेले का आकर्षण उसके पैरों में घुंघरू बाँध रहा था। पायल की झंकार से धरती झूम तो उठती परन्तु उन यात्रियों का आखिर क्या होता! कदाचित् इसी लिए नादेड़ की धरती नाचना नहीं चाह रही थी। आसावरी की लय और आलाप पर उसका मन रीझ रहा था। यात्री अपनी धुन में नाचते-गाते उसके निकट से निकल जाते, और उनके बोल गूँजते 'मैं राम नाम धन पायो'।

प्रतिज्ञा

अहमस्मि सपत्नहेन्द्र इवारिष्टो अक्षतः ।
अधः सपत्ना मे पदोरिमे सर्वे अभिष्ठिताः ॥

—ऋग्वेद

मैं शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाला हूं। इन्द्र के समान पराक्रमी हूं। मुझे न तो कोई मार सकता है, न प्रपीड़ित कर सकता है। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है, मानो मेरे सभी शत्रु मेरे पैरों तले रौंदे पड़े हुए हैं।

हतो व प्राप्स्यसि स्वर्गंजित्वा व भोक्ष्यसे महीम्,
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः ।

—भगवान् कृष्ण

यदि मर गए तो स्वर्ग मिलेगा, यदि जीत गए तो पृथ्वी का शासन करोगे। इसलिए हे अर्जुन ! उठो और युद्ध के लिए तैयार हो जाओ।

देहि शिवा वर मोहि अहै, शुभ करमन ते कबहु न टरों,
न डरों अरि सो जब जाए लरों, निसचय कर अपनी जीत करों।
अरु सिख हों अपने मन को एह, लालच हऊ गुण तव नित उचरों,
जब आव की आउध निदान बने, अति ही रण मे तब जूझ मरों।

—गुरु गोबिन्द सिंह

१
□□□
जय जय गोदावरी

गोदावरी के किनारे चाहे प्रतिदिन मेले लगते रहते हों परन्तु शिवरात्रि के दिन जो मेला उसके किनारे लगता है वह कोई लुका-छिपा नहीं रहता। दक्षिण भारत के बच्चे-बच्चे की जबान पर इस मेले की चर्चाएँ गूंजती रहती हैं। वृद्ध तथा युवा इस मेले का नाम सुनते ही नाचने लगते हैं। उनके हृदयों में इस मेले का चाव चिकोटियाँ काटने लगता है। तरुणियां बनाव-शृंगार कर बन ठनती हैं। पूरे वर्ष में एक दिन ही तो मेला देखना होता है। जीवन में कोई कितने अधिक मेले देख लेगा!

आधी रात से मेला जुट रहा था। गोदावरी की लहरों में भी जैसे नाचने की उमंग गुदगुदा रही हो। वह भी कदाचित् पायल पहनने की तैयारी में लगी थी। मेले पर जवानी का नशा छा रहा था। इठला-इठला कर उठने वाली लहरें इस प्रकार मद्धिम पड़ जाती जैसे किसी तारे की लौ ने उन्हें अलमस्त कर दिया हो अथवा सोम रस के नशे में वे झूम उठी हों। नील कंठ (शिव जी) के मन्दिर की दीवारों से लहरें टकरा रही थीं, फल-स्वरूप धतूरे तथा भांग के नशे का जादू उनके सिर चढ़कर बोलने लगा था। पर कभी-कभी वे बिगड़ैल सांड की भांति धर-मस्तियां करने लगती, मानो नदी का आवेग लहरों में प्रवेश कर रहा हो। लहरें कभी मस्त सुरों की लय में गाती-जाती तो कभी कर्ण-कटु शब्द करने लगती। आज गोदावरी कुछ मदहोश-सी प्रतीत हो रही थी। मेले का आकर्षण उसके पैरों में घुंघरू बांध रहा था। पायल की झंकार से धरती झूम सी उठती परन्तु उन यात्रियों का आखिर क्या होता! कदाचित् इसी लिए नादेड़ की धरती नाचना नहीं चाह रही थी। आसावरी की लय और आलाप पर उसका मन रीझ रहा था। यात्री अपनी धुन में नाचते-गाते उसके निकट से निकल जाते, और उनके बोल गूंजते 'मैं राम नाम धन पायो'।

गोदावरी मधु थी अथवा चुम्बक, मैं कुछ भी न जान सका। यात्री उसकी तरफ ऐसे खिचे चले आते थे जैसे लोहा चुम्बक की ओर और मक्खियाँ मधु की ओर। मेले की लगन और शिवशक्ति उनके हृदयो मे उमंग ला रही थी। यात्री जुट रहे थे जैसे तरुणी की पायल की झकार अखाडे मे अपने प्रेमियो को ललकारती हो और वे घर से ही भगडा* नाचते हुए निकल पडे हों। घुघरुओ की झकार और एडियो की ताल तरुणियो के नृत्य मे एक स्वर हो जाती। तरुणियो की टोली गिद्धे* का शृगार उसी प्रकार बन जाती जैसे यात्री गोदावरी के शृगार थे। आभूषणों के बिना सुन्दरी और यात्रियो के बिना तीर्थ शोभा नही पाता।

गोदावरी दक्षिण प्रदेश मे पवित्रता के लिए प्रसिद्ध है। चाहे जल सभी नदियो का पवित्र माना जाता हो पर तपस्वियो को मुक्ति गोदावरी ही प्रदान करती है। दक्षिण प्रदेश के प्राय. सभी तीर्थ गोदावरी के तट पर स्थित हैं। बालकेश्वर से नासिक तक, नासिक से नादेड तक यह पतित-पावन गगा मैया यात्रियो का मन मोह लेती है। मन-मोहक है यात्रियो के लिए और जीवनदात्री है किसानो के लिए। यात्रियो को मोक्ष और पवित्रता का दान तथा किसानो को अन्न देती है, जिसके द्वारा श्वासो की माला फिरती रहती है।

नादेड की धरती यात्रियो से खचाखच भरी थी जैसे जाल मे फसी हुई मछलियां। लगता था जैसे गोदावरी ने यात्रियो की नाक मे नकेल डाल दी हो। धूम-धाम से यात्री नादेड की धरती पर इस प्रकार बढ रहे थे जैसे आवेश से भरा हुआ लहरो का काफिला।

नादेड तीर्थ-स्थल है। यहां मनुष्य उतने नही, जितने देवता हैं। जमाने का रुख बदला, भावी के चक्र ने माला के मनके उलटे फेरने आरम्भ कर दिये। मन्दिरो मे शखो की गूंज का गला रुंध गया। शखो की जबान गले म ही जकड गई। स्वर तथा लय को कठ मे ही हलाल किया गया तो भी पुजारियो ने चूँ तक न की। उनके माथे पर टीके के स्थान पर महराबो की चोटो की छापें उसी प्रकार चमक उठी जैसे स्वर्ण मुद्रिकाओ मे रांगे के नग। आरती अजान की जबान मे गूजने लगी। मन्दिरो को मस्जिदो का बुरका पहनाया गया, पर आज भी शिव मन्दिर गोदावरी की गोद मे पहले की भाँति ही स्थित था। पवित्र भक्ति के बल पर पुजारी गुलाम बन बैठे थे लक्ष्मी के। वे त्यागी राम नही रह गये थे, बल्कि विष्णु के पद के स्वप्न देखने लगे थे।

ससार मे हर कोई विष्णु बनने का इच्छुक होता है जिससे कि लक्ष्मी उसकी अर्धांगिनी बनी रहे। वह रगरलियाँ मनाता रहे जैसे गोपियो मे कान्ह।

*पजाबियों के प्रिय लोक-नृत्य।

त्यागी का इस संसार में कोई ठिकाना नहीं। दुनिया उसे मार-मारकर नंगा कर देती है और वह चूँ तक नहीं कर पाता। गोपालन एक यात्री से यह सब कह रहा था।

मेला भर गया था। यात्री बाढ़ की तरह आगे बढ़ रहे थे। पग-पग पर भीड़ से दम घुटने का भय बना हुआ था। पर यात्री ठेलम-ठेल करते गोदावरी की तरफ बढ़ रहे थे जैसे तूफान की लहरें धरती के वक्षस्थल पर उछल-कूद मचा रही हों।

—'अभी तक क्या तुम जल भी नहीं चढ़ा सके! बलिहारी रे बहादुर! क्या चूके तब नाम तुम मुगलों की सेना में भरती होकर? रहने दो सूरमा! क्यों आबरू डुबो रहे हो।' रेड्डी ने गोपालन से कहा।

—'आज किसी की क्या बिसात कि वह मन्दिर तक पहुँच जाए। सारे यात्री शायद तीन दिनों में जाकर जल चढ़ा सकेंगे। मेला है, कोई नटों का जमघट नहीं। आज तो बड़े-बड़ों की सिट्टी भूल गई है, हमारी क्या बिसात। मंदिर तक पहुँचना बदरीनाथ की यात्रा में किसी प्रकार कम कष्टकर नहीं। अनगिनत आदमियों को चीरकर जल चढ़ाना जने-खने का काम नहीं। हाँ तो तुम रुस्तम पहलवान जरा जल चढ़ाकर तो देखो।' गोपालन ने रेड्डी से ताने के स्वर में कहा।

रेड्डी के माथे पर बल पड़ गये। तुच्छ तेवर और भीतर गुस्सा, जैसे सनख की रस्सी जल चुकी हो और उसकी ऐंठन बाकी रह गई हो। जली हुई रस्सी के बलों की तरह उसके तेवर उभर रहे थे। रेड्डी का चेहरा लाल-पीला हो रहा था। उसका खून गुस्से से खौलने लगा था। पर यात्रियों की भीड़ देखकर उसकी धोती का फेंटा ढीला पड़ने लगा। वह हथियार डालना ही चाहता था कि किसी वृद्ध ने उसके कंधे पर हाथ रखा। 'क्यों रेड्डी, जल चढ़ाने नहीं चल रहे हो?'

—'इतनी भीड़ में! राम राम!' रेड्डी ने वृद्ध यात्री की ओर देखकर कहा।

—'तुम तो जुग-जुग बूढ़ों से भी गए गुजरे हो जो भीड़ के डर से जल चढ़ाने का संकल्प छोड़ रहे हो। जवान बनो। शिवलिंग पर जल चढ़ाने से तुम शक्ति प्राप्त करोगे। तुम्हारी आत्मा पवित्र होगी। भूष्टिनाथ तुम्हारी रक्षा करेंगे। व्रत का पुण्य तब तक नहीं मिलता, जब तक जल न चढ़ाया जाए। क्या व्रत भंग कर बैठे हो?' बूढ़ा यात्री कह रहा था।

—'नहीं बाबा! अभी तो मैंने जल भी नहीं पीया। दिल्लगी कर रहा था। मैं तो यह देखना चाहता था कि भीड़ देखकर यही बड़े का संकल्प टूट तो

नही गया। जवानी के ढलने के साथ-साथ नही खून भी पतला तो नही हो गया। *प्रतिज्ञा के बन्धन की गाठ कही ढीली तो नही पड गई।*' रेड्डी ने गोदावरी की ओर देखते हुए उत्तर दिया।

—'जवानो की कच्ची हड्डियो मे खून का जोश होता है, पर बूढो की हड्डियाँ लहू चूस-चूस कर पक्की हो चुकी होती है। कच्ची गुरच की तरह टूटती नही, बल्कि शहतूत की डाल की तरह लचक जाती हैं। हरे पेड का तो कोई शहतीर ही नही होता, सूखे पेड का ही बाजार मे मोल लगता है। भीड मुझे प्रतिज्ञा से डुला नही सकती। जय गोदावरी माता! बम महादेव!' बूढे यात्री ने जोश में आकर जय-ध्वनि की। हवा मे उसकी सफेद दाढी लहरा रही थी।

जैसे-जैसे दिन चढ रहा था वैसे-वैसे भीड बढती जा रही थी। जन-समूह की बाढ आई हुई प्रतीत हो रही थी। आदमी का गुजरना तो दूर किनार, तिल का धरती पर गिरना भी मुश्किल हो रहा था। मुझे ऐसा प्रतीत होता था कि कई यात्रियो के पाँव भी धरती से नही लग रहे थे। रेला उन्हे अपने साथ आगे लिये जा रहा था। इसी प्रकार वे अपने लक्ष्य तक पहुचने की आशा बाँधे हुए थे।

गोदावरी में जल बढ रहा था। वह कदाचित् यात्रियो के सग नाचने को उतावली हो रही थी। किसका जी मेला देखने को नही चाहता। जीवन म मेला ही तो एक स्वर्ग है। जवानी में मेले और बुढापे मे पूजा ही आनन्द देती है।

—'बाबा! गोदावरी मे जल बढ रहा है। यात्रियो का क्या होगा?' रेड्डी ने बूढे यात्री से पूछा।

—'चिन्ता मत करो रेड्डी! शिव-शभु सभी के रखवाले हैं। प्रति वर्ष मेले के समय इसी तरह पानी चढा करता है। *जब लहरो के छीटे शिवलिंग तक* पहुच जाते है और एक बार शिव शभु को स्नान करा देते है तब अपने आप पानी उतर जाता है और गोदावरी की लहरे अपनी सामान्य गति प्राप्त कर लेती हैं। डरने की क्या बात है। जल है, कभी चढता है कभी उतर जाता है। शिव-शभु की माया है। उसकी लीला न्यारी है। उसे तो देवता भी नही जान सके फिर हम किस गिनती मे ठहरे।' बूढे यात्री ने पूर्ण विश्वास और भक्ति भाव से उत्तर दिया।

—'बिगडे बैल और चढते पानी के आगे किसी का जोर नही चलता। कौन जाने कल इनका नशा बढ जाये। बैल की मस्ती और पानी का बहाव अनियन्त्रित नशे हैं। किसी का बस इनके आगे नही चलता। युक्तियो की छालें इनके आगे मात हो जाती हैं। अनभिज्ञ यात्री कही पानी की लपेट मे न आ जाए! मेला कही मृत्यु का आलिंगन न बन जाये।' रेड्डी अन्दर से तो घबरा

रहा था परन्तु फिर भी अपना साहस बटोर कर मुख से कह रहा था—'बम बम भोले, कैलाशपति तेरी सदा ही जय हो।'

× × × ×

आज जुमा था, और पास की शाही मस्जिद मे एक हाकिम नमाज अदा करने के लिए आने वाला था। जिस रास्ते से उसकी सवारी निकलने को थी उसी रास्ते से यात्रियो की भीड गोदावरी की ओर बढ रही थी। अभी सवारी के आने म चार घटे की देर थी फिर भी मुगल सिपाही अभी से रास्ता बनाने की कोशिश कर रहे थे। इधर शिव-भक्ति की लगन थी और उधर हुकूमत का नशा। उनके कोडे यात्रियों पर इस प्रकार बरस रहे थे जिस प्रकार किसी अरथी घोडे पर किसी निर्दयी कोचवान का चाबुक। भीड के आगे उन सिपाहियो की कुछ चल नही रही थी। किसी की गगाजल से भरी गगरी सिर से लुढक रही थी और कोई गिरते ही पाँवो से चकनाचूर हो रही थी। सिपाही रास्ता चाहते थे भले हो यात्रियो के शव पर से होकर उन्हे क्यो न जाना पडे। रास्ता खाली होना चाहिए। भले ही यात्रियों का जल शिवलिंग पर चढे या न चढे। शिव शभु के मतवाले राह छोडकर जाए भी तो किधर! दूसरी राह भी कोई न थी। नगरी की गोद यात्रियो से भरी थी।

—'पहले तो नमाज जामा मस्जिद मे पढी जाती थी, आज शाही मस्जिद मे न जाने क्यो नमाज की पढने की डुगडुगी पिटवाई जा रही है। मुगल क्या यात्रियो की यात्रा भग करना चाहते हैं? क्या वे नादेड की ईंट से-ईंट बजाना चाहते है? क्या हुकूमत का नशा भगवान् से भी नहीं डरता बाबा! क्या यह अन्धेर नही है!' रेड्डी-ने घबराते हुए बूढे यात्री से प्रश्न किया।

—'गरम लहू मे उबाल आते हैं। जवानी मे अहकार का नशा चर मस्ती करता है। दीवानी जवानी कुछ देखती नही। करना जानती है पर सोचना नही। अपन आगे किसी की दाल नही गलने देती जिसमे उसका सिर नीचा न हो। अवसर चूकने पर पश्चात्ताप करती है। समय स्वय उसे रास्ते पर ले आता है।' बूढे यात्री न सिपाहियो की ओर देखकर आँखें नीची कर ली।

—'बाबा! इन पुराने विचारों ने बहुतो के गले पर छुरी चलवाई है। धर्म के मतवालो ने तिस पर भी सी तक नही की। सोमनाथ के मन्दिर के टुकडे-टुकडे हो गये। उसके रत्नो ने बेगमो के शृगार म योग दिया। गजनी की नर्तकियो के पैरो मे वही हीरे चमके जो किसी समय भगवान् सोमनाथ के गले मे चमकते थे। किन्तु पुजारियो की आँखें गीली तक नही हुई। निरीह गौएं इसलिए जबह की गईं कि वे पुजारियो के लिए पवित्र और पूजनीय देवियाँ थी। मुगलो ने ममाले लगा लगाकर उनके कबाब बनाये। अल्हड बालिकाओ, तरुणियो और लज्जालु मुदगियो को बीच बाजार मे नीलाम किया गया। कोई किसी के बगल का शृगार हुई। कोई राजदरबारो मे नर्तकियो की तरह नाची पर पुजारियों

के माथे पर सिकुड़न तक न पड़ी। अपितु वे स्वयं पायल की झनकार पर मतवाले हो-होकर गिरने लगे। उन्होंने इसी लिए हर बात पर सिर झुका दिया क्योंकि सोमनाथ के वे पुजारी जो ठहरे! वे किसी का वध करना तो पाप समझते थे पर माँ-बहनो, पुत्रियो, पुत्र-वधुओ का अपमान देखना पाप नहीं समझते थे। वे समझते थे कि स्त्रियाँ तो पुरुषों के मनोरंजन का साधन ठहरी। यदि आज नहीं तो कल उन्हें किसी न किसी का पहलू तो गरम करना ही होगा। चाहे वह मुगल हो चाहे सोमनाथ के मन्दिर का महन्त।' रेड़ी की क्रोधाग्नि म तूफान झाँक रहा था।

'जवानी का जोश मुह की खाता है बेटा। युवक जवानी मे होश भुला बैठते हैं। शीघ्रता के आगे गड्ढे। हुकूमत के सामने सिर उठाने का अर्थ है उसे कटवा देना। शक्ति से नीति बलवती होती है। नीतिवान युक्ति से काम लेते हैं, शक्ति से नहीं। जल्दबाजी मे मर्खता का संकेत होता है, और धैर्य सफलता का लक्षण है। जलती चिता मे कूदना विफलता का मुह देखना है। तुम जल चढ़ाने का प्रयत्न करो, यो ही खड़े-खड़े मुह मत ताको। एक काम से निवृत्त होकर दूसरे मे प्रवृत्त होना बुद्धिमत्ता है। समय की प्रतीक्षा करो। चलो रेड्डी! आगे बढ़ो!' बूढे यात्री ने रेड्डी की पीठ थपथपाते हुए कहा।

—'ये कौन हैं लाल-पीली पगड़ियो वाले? बहुत बेरहम दीखते हैं। क्या इन्हें भगवान् का ज़रा भी डर नहीं है बाबा? क्या ये भगवान् के कोप स भी नहीं डरते?' एक अन्य यात्री कह रहा था। बूढा यात्री बोला—'इनके लिए महादेव पत्थर की मूर्ति मात्र हैं और देवता हैं बटखरे पंसेरी के। इनकी दृष्टि म बटखरे और देवताओ मे कोई अन्तर नहीं। जो पत्थर बोलता है न हिलता। जो स्वयं अपनी रक्षा नहीं कर पाता वह किसी की क्या रक्षा करेगा। यह इसी सिद्धान्त के मानने वाले हैं। मक्का ससार का सबसे बड़ा बुतखाना था और उसके पुजारी की एक सन्तान ही इस्लाम की प्रवर्तक थी। बाद म उन्होंने तोड़-फोड़ कर उसे काबा शरीफ के नाम से पुकारा। अब वे हम से अलग होकर दूर जा बैठे हैं। भूमी खाने वाला बछड़ा साँड बनकर अब चने का भक्षक बन बैठा है। यात्री महादेव के यात्री हैं, इस्लाम के नहीं। जो इस्लाम और उसके उसूलो पर इमान नहीं लाते वे सब काफिर हैं। फिर वे चाहे भाई हो या बाप। मुगले-शाही हैं बच्चो की हुकूमत नहीं। मुगल सम्राट के शासन मे ये चालें नई नहीं हैं। यदि वे ऐसी बातें न करें तो उनकी धाक कैसे जमे। नरमी राज्य के लिए दीमक है और शान्ति राज्य के लिए घुन। यात्रियो तुम लोग अपना काम सवारो और उन्हें अपना काम करने दो।' बूढे यात्री की आँखें अब भी मुगल सिपाहियो के कोडो पर लगी हुई थी।

हो सकता है बाबा हम लोग भी इसी तूफान की लपेट मे आ जाए तो फिर किसकी माँ को पुकारेंगे? यदि अभी से हम अपने बचाव का कोई उपाय

निकाल लें तो फिर किसी का डर नही रहेगा। चाहे हम एक दो दिन के मुसाफिर हों तिस पर भी हमें नादेड से प्रेम होना चाहिए। यह देव-स्थान है। भोली-भाली गौओ का रूप धारण किये हुए यात्री कितने दिन यहाँ टिके रहगे। अति और ईश्वर म विरोध है।' हैरानी से बूढे यात्री की आवाज गले ही मे रुध गई।

—'देखो बाबा, इस पठान का कोडा इस प्रकार खाल उधेड रहा है, जिस प्रकार मूसल मे तरुणि धान कूट रही हो। बाबा! यह बडा अनर्थ है।' आँसू ढुलकते-ढुलकते उसकी आँखो मे कठिनता से रुके। जय गगे, जय गोदावरी, जय शिवशम्भू के जयकारे जो भक्ति और प्रेम के जोश मे भरे हुए होते थे दूर से ही सुनाई पड रहे थे। लग रहा था कि इन्होने अपनी ओढ़नी की ओट मे नादेड को छिपा लिया है। हो-हल्ले मे इनकी आवाज कभी-कभी मद्धिम पड जाती थी। पग-पग पर यात्री धक्के खाते, गिरते, कुछ समलते भी तो फिर गिर जाते। इतने पर भी उनके मन मे आगे बढने की धुन बनी हुई थी। मेले की दूसरी ओर से आर्तनाद सुनाई पड रहा था। बूढे यात्री ने दूसरी ओर अपनी दृष्टि घुमाई। कोडे हवा म नाच रहे थे जैसे जहरीले नाग बाँबी के चारो ओर चक्कर काट रहे हो। उनकी सनसनाहट दूर तक सुनाई दे रही थी। जयकारो मे यह सनसनाहट और यात्रियो का आर्तनाद इस प्रकार विलीन हो जाता था जैसे शखों और घडियालो के नाद मे पुजारी के बोल।

कोडे खाकर यात्री आगे बढ जाते और उनके स्थान मे उसी क्षण दूसरे यात्री आ पहुचते। सिपाही भी प्रहार करते-करते थक गये थे। उनके बाजू फूल गये थे पर यात्रियो की भीड उनके काबू मे न आ सकी। धीरे-धीरे सिपाहियो की शक्ति जवाब देने लगी थी और यात्री कुछ साहस से आगे बढने लगे थे। दूर तक यात्रियों का एक लम्बा जाल बिछा हुआ था।

—'आज रास्ता बन नही सकता। अब बाहो मे दम नही रह गया। थकी बाहें यात्रियो को नही रोक सकती। यात्री बढ़ते चले आ रहे हैं। उनके कम होने की कोई सूरत ही नही दिखाई देती। या अल्ला! ये मरदूद हमारी जान भी छोडेंगे या नही? कहो भाई नवाब बख्श! अब क्या किया जाए?' एक मुगल सिपाही दूसरे सिपाही से कह रहा था।

—'इनके आगे तो हमारी कुछ चल नही रही है। अच्छी आफत मे जान आ फँसी है। यदि हिम्मत हार बैठें तो हमारी शामत आ जाएगी। साँप के मुँह मे छुछुन्दर, निगले तो अन्धा उगले तो कोढी।' पठान सिपाही अपनी पगडी सम्भालते हुए कह रहा था।

—'पता नही आज इस हाकिम के सिर पर कैसा भूत सवार हुआ है जो यह जामा मस्जिद को छोडकर शाही मस्जिद मे नमाज पढने की सोच बैठा है।

जामा मस्जिद में तो नमाज पढ़ना स्वाब (पुण्य) है, खुदा के बन्दों से जान-पहचान होती है, प्रजा और हाकिम एक पंक्ति में मिलते हैं। हदीस की शरह पर चलकर आदमी गाजी और वलीअल्लाह बनता है।' एक मौलवी ढंग का सिपाही कह रहा था।

—'भीड़ आज छँट नहीं सकती। मजहबी जोश के आगे किसी की ताकत चल नहीं सकती। तलवारों की धारें भोथरी पड़ जाती हैं, पर मजहबी जोश नहीं रुकता। इससे बचे रहना ही बुद्धिमानी है। छोटी-सी बात के लिए दुश्मन खड़े कर लेना अपनी नींव खोखली करना है। घर के भेदी और पड़ोसी प्रबल आक्रमणों से भी अधिक भयानक होते हैं। आलमगीरी सल्तनत के ऊँचे मीनार उसी अवस्था में खड़े रह सकते हैं जब पड़ोसी उनके रखवाले और शुभ-चिन्तक बने रहें। दिल्ली के शाही मीनारों का प्रकाश तभी दक्षिण भारत में प्रविष्ट होगा जब उसके रास्ते में एक भी शत्रु बाधक न हो। दिल्ली दूर है। दक्षिण अन्य देश है। परदेश में अपनी ताकत का डंका चाल से तो बजाया जा सकता है, परन्तु अत्याचार और मूर्खता से नहीं। बछड़ा खूँटे के बल पर ही नाचता है अपने बल पर नहीं।' नवाब बख्श ने सुँघनी की डिबिया दूसरे सिपाही की ओर बढ़ाते हुए कहा। धक्का लगने से सुँघनी की डिबिया नीचे गिर पड़ी। सुँघनी के हवा में उड़ने से फलस्वरूप यात्रियों को छींकें आने लगीं। एक यात्री कहने लगा—'वाह! वाह! सुँघनी क्या है अचरज है। हम लोगों ने हवा में सुँघनी सूँघी है, यदि भूल से कहीं चुटकी भर ले लें तो घर तक छींकों से जूझते सड़ते हुए ही पहुँचेंगे। निछावर जाए भैया इस बावली सुँघनी पर।'

—'क्या हुआ? शर्म नहीं आती सुँघनी सूँघते। मुट्ठी भर यात्री रास्ते से हटा नहीं सके। शर्म करो! डूब मरो!' सिपाहियों का जमादार कड़ककर कह रहा था।

थके-माँदे सिपाही सावधान हो गए। एकाएक कोड़े हवा में फिर से नाच उठे। उनकी वर्षा पुनः यात्रियों पर होने लगी। यात्रियों की भीड़ अपनी धुन में जय गंगे, जय गोदावरी, जय शम्भु करती हुई पहले की तरह बढ़ती जा रही थी। च्यूँटिया के घरौंदे में च्यूँट की दाल नहीं गलती! कुछ ऐसी ही दशा मुगल सिपाहियों की यात्रियों की भीड़ में थी।

—'हमीद खाँ! गुलाम हैदर! अमीर बख्श! अफजल खाँ! हैदर अली! शमशेर खाँ! तुम सभी सामने वाले सिपाहियों की सहायता करो और मैं यहाँ और घुड़सवार भेजता हूँ और देखता हूँ कि ये मरदूद कैसे रास्ता नहीं छोड़ते। जल्दी करो।' गुस्से में जमादार भुनभुना रहा था, जैसे फुफकार रहा हो।

—'नौकरी में नखरा कैसा।' एक सिपाही ने जाते हुए दूसरे सिपाही से कहा। चौक वाले सिपाही चौक छोड़कर दूसरे सिपाहियों की सहायता के लिए

चले गए। चौक सिपाहियों से खाली था। यात्री और भजन मण्डलियां गुजर रही थी। रेड्डी, गोपालन और वह वृद्ध यात्री अभी तक अपनी जगह पर खडे थे। उन्होंने गोदावरी की ओर एक पग भी नही बढ़ाया था। पठान सिपाहियो की बहादुरी के कारनामे वे वहीं खडे होकर देख रहे थे। चौराहे पर हुकूमत के नशे का नगा नाच हो रहा था। यात्री आते हुए तो दिखाई पडते परन्तु लौटते हुए कम ही दिखाई पड रहे थे। शायद रास्ता जाम था या मुगल सिपाहियो की टुकडी वहा पर आ धमकी थी। रेड्डी आगे बढना चाहता था और वृद्ध यात्री उसे रोक रहा था।

—'तुम स्वय तो जल चढाने जाओगे नही बाबा, पर हमे क्यो भूखो मारने लगे हो। धक्को की बौछार हम सह लेंगे। हम मत रोको। सूर्य सिर पर आने को है। कल की रोटी खाई है। अब तो पेट म चूहे कूदने लगे हैं। चलो गोपालन हम लोग चलें।' रेड्डी ने गोपालन को उत्साहित करते हुए कहा।

गोपालन पहले ही बारूद का पलीता था। झटपट कूदकर यात्रियो की भीड मे जा घुसा। रेड्डी उसके साथ था। बूढे यात्री ने उन्हे रोकने का भरसक प्रयत्न किया। पर उसकी किसी ने न सुनी। अब गोपालन और रेड्डी यात्रियो की भीड के बीच म थे जहा धक्को की भरमार थी। धरती से कही किसी का पैर भी नही लगता था।

घुडसवार चौक मे पहुच चुके थे। भाले सूरज के प्रकाश मे चमचमा रहे थे। जगी पोशाक की चमक धूप मे सही नही जाती थी। सवार क्या थे देव थे कोह काफ के। घोडे ऐसे नाच रहे थे जैसे जलते बालू पर किसी के नगे पैर कभी उठते और कभी पड़ते है।

घोडो के भीड मे पहुचते ही यात्रियो मे भगदड मच गई। घोडो की टापो से यात्री मुँह के बल गिर रहे थे। यात्री खून से लथ-पथ हो रहे थे। घोडो के खुरो पर खून की मेहदी लग रही थी। उन घोडो ने स्थान तो खाली करा दिया, परन्तु यात्रियो का ओज ठण्डा न कर सके। जितनी देर मे घोडे एक तरफ से दूसरी तरफ जाते उतनी देर मे वह स्थान फिर यात्रियो से भर जाता। यात्री और मुगल मानो कबड्डी खेल रहे थे। बूढा यात्री टीले पर खडा-खडा यह तमाशा देख रहा था। जब भीड न रुकी तब सिपाही भालो की नोकों से यात्रियो को बीधने लगे।

—'हुजूरेवाला की सवारी आ रही है। जवानो जरा रास्ता रोके रखो। सावधान! कोई यात्री आगे न बढने पावे।' जमादार गरज रहा था।

सूबेदार का हाथी झूमता हुआ आ रहा था। नगारे बज रहे थे। शहनाई का मुँह चूमा जा रहा था।

—'होशियार ! बा मुलाहिजा होशियार। आला हजरत की सवारी आ रही है।' दूर से यह आवाज सुनाई दे रही थी।

भीड़ कभी रुकती तो कभी बे-काबू हो जाती। सवारी बूढ़े यात्री के आगे से गुजरी। हाथी बढ़ रहा था। भीड़ का धक्का लगने पर गोपालन औंधे मुँह हाथी के पावों में जा गिरा। उसकी हड्डिया चूर-चूर हो गई। गोपालन तड़प कर घड़ी भर म ठण्डा हो गया। उसके दिल के अरमान दिल ही म रह गए। भीड़ मे से रेड्डी ने उसे बचाने का भरसक प्रयत्न किया, पर घुड़सवारो ने उसका चारा न चलने दिया। हाथी के पीछे आने वाले घोड़े, ऊँट और सिपाही भी शव के ऊपर से निःसकोच गुजर गए। किसी ने नीचे देखने की आवश्यकता नही समझी।

रेड्डी गोपालन के शव के पास खड़ा था। यात्री सहमे हुए थे। रेड्डी क्रोध से जल रहा था। उसके माथे पर बल पड़े हुए थे। बूढ़े यात्री ने वहा पहुच कर रेड्डी के कन्धो को थपथपाते हुए कहा, .'धैर्य धरो मेरे बेटा ! इस खून को व्यर्थ मत समझो। इसमे देश की स्वतन्त्रता छिपी है।'

—'धीरज और सोच ने खून और पानी को एक ही काँटे पर तोल रखा है बाबा ! निर्दय हाकिम का क्रूर हाथी गोलापन के पैरो से कुचलकर चला गया, पर किसी ने घूमकर भी नही देखा। किसी के मुँह से एक शब्द तक न निकला। बोलो बाबा ! इस चुप्पी का क्या कारण है !' रेड्डी बूढ़े यात्री को झकझोर रहा था।

बूढ़े यात्री के होठ खुले—'चुप्पी तूफानो की जन्मदात्री होती है। विद्रोह चुप्पी की गोद मे पलते हैं। गरजने वाले बादल कभी बरसते नही, गड़गड़ाकर पास मे निकल जाते हैं। चितकबरी बदली को ही क्षण भर मे जल-थल का श्रेय प्राप्त होता है। गुस्सा पीते चलो और सी तक न करो। दबी चिनगारिया ही अँगारे बनेंगी और अगारे लपटो का रूप धारण कर लेंगे। लपटें ज्वाला बनकर घड़ी भर मे ऊँचे मीनारो को राख के ढेर बना देंगी। गुस्सा चण्डाल होता है। च्यूँटी हाथी का मुकाबला नही कर सकती, पर यदि धैर्य से काम लिया जाए और नीति को हाथ से न निकलने दिया जाए तो फिर देखो क्या होता है। हाथी की मौत का कारण फिर वही च्यूँटी बनती है।' बूढ़े यात्री ने रेड्डी को धीरज देते हुए कहा।

—'यह अन्धेर है। घोर अत्याचार है। हाथी के पैरो से गरीब पिस जाए और हाकिम के कान पर जूँ तक न रेंगे।' एक यात्री कह रहा था। अन्य यात्री अपनी धुन मे बढ़ रहे थे। बूढ़े ने रेड्डी को गोपालन के खून का तिलक लगाते हुए कहा—'रेड्डी तुम्हे इस खून की सौगन्ध है यदि तुम इस खून को भूलो।

समय आने पर इसका बदला तुम्हे लेना होगा' जब तक तुम इस खून का बदला नही ले लोगे तब तक इसकी मृत आत्मा भटकती रहेगी।'

गोपालन की लाश उन्होंने अर्थी पर सजा ली। चार आदमी अर्थी उठा कर चलने लगे। बूढ़ा यात्री कह रहा था—'राम नाम सत्य है' और लोग यही ध्वनि दोहराने लगे।

× × ×

उधर शाही मस्जिद म नमाज पढी जा रही थी। उसके नीचे से भजन मण्डलियाँ गाती हुई महादेव के मन्दिर की ओर बढ़ रही थी। मन्द, सुरीली तथा लय स भरी आवाज म गाती हुई कीर्तन मण्डलियाँ गाती हुई मौज भरा नाच नाच रही थीं।

यह देख सिपाहियो की छाती पर सांप लोटने लगा। क्रोध उनके माथे की सिलवटो म साप की तरह कुण्डली मार कर जा बैठा। नम्र टूस वे खून की भान्ति रक्त वर्ण के हो उठे।

—'मरदूद काफिरो की जबान खीच लो। इन्होंने हमारी नमाज म खलल डाला है। घोड़ो की टापो म इनका सुरमा बना डालो'—शाही मस्जिद के द्वार पर खड़ा जमादार बड-बड़ा रहा था।

घुड़सवार यात्रियो पर टूट पड़े। मधुर स्वर-ताल पर होने वाला नाच खून की होली खेलन लगा। सुरीली ध्वनियाँ विल्लाहटो म परिवर्तित होने लगी। करुणापूर्ण भाव बताने वाले हाथ छाती पीटने लगे। घुंघरू खून म लथ-पथ हो गए। इन चीत्कारो से नमाज मे कोई रुकावट न पड़ी।

नमाज शाही मस्जिद म पढ़ी जा रही थी। मोमिनो की जमात सिजदे मे लिए झुक रही थी और इधर भगवान् के दरबार म हाहाकार मचा हुआ था। साजो दम तोड़ा न बची-खुची चीजों का भी गला घोट डाला। वह गया वह मधुर सगीत। मतवाली लय सदा के लिए मौत की गोद म जा सोई। रेड्डी और वृद्ध यात्री चुप-चाप पास से जा रहे थे। गोदावरी म जोश बढ़ रहा था। उसकी लहरे उमड़-उमड़ कर शिवलिंग तक पहुच रही थीं।

मुल्ला ने वाइज (धर्मोपदेश) का अंतिम वाक्य पढ़ा और जमात अमीन-अमीन करने लगी। काजी मस्जिद से बाहर निकलने लगे। खून से शाही मस्जिद की सीढ़ियों पर होली खेली गई थी।

—'काफिरों ने मस्जिद की सीढ़ियाँ नापाक कर दी हैं।' एक मुल्ला कह रहा था और भौहें ताने हुए सीढ़ियो पर से उतर रहा था।

वीर बैरागी और उनके कुछ साथी भी यह तमाशा देख रहे थे। खामोशी उनके चारो ओर छाई हुई थी। बैरागी के दात एक बार कटकटा उठे और उसके माथे पर बल पड़ गए। न जाने वह क्यों चुप रह गया। उसके चेहरे

पर मुरदनी छा गई। जबान पर ताला-सा लग गया। उनके माथे पर की सिलवटें मिटने लगी। वह धीरे-धीरे आगे बढने लगा।

...'वली अल्लाह! मस्जिद के पास से निकले जा रहे हो। बिना किसी वजह के तुम्हारे चेहरे पर उदासी के आसार दिखाई दे रहे हैं। आखिर तुम्हारी इस उदासी की वजह क्या है?' जमादार का दहकता हुआ चेहरा मुस्करा रहा था। उसकी जबान कैंची की तरह चल रही थी।

वैरागियो की मान्यता मुसलमानो मे भी उतनी ही थी जितनी हिन्दुओं मे। हिन्दू उन्हे सन्त, महात्मा और योगी मानते थे और मुसलमान उन्हे बुजुर्ग, फकीर और वली अल्लाह। इनके सामने कोई भी सिर नही उठा सकता था। वैरागियो की हर बात पर फूल चढाये जाते थे।

—'निहत्थे परदेसियो का खून मुसीबत न बन जाए।' वैरागी ने सरसरी तौर पर कहा और आगे बढने लगा।'

—'नमाज मे खलल डालने वालो को माफ नही किया जा सकता, चाहे वे कितने ही अजीज क्यो न हो। रसूलेपन की दरगाह मे वह आदमी मुजरिम है जो शरैयत मे खलल डालता है। कल को अगर मैं भी कोई ऐसा कार्य करूँ तो मेरा भी यही अजाम होगा।' जमादार ने कहा।

—'अच्छा जैसा करोगे वैसा पाओगे।' यह कहकर वैरागी आगे बढ गया।

जय शिव शभु, जय महादेव, कराहती हुई लाश वैरागी के पावो से टकराई। अभी तक य लाशें ठण्डी नही पडी थी। जुल्म और पाप का घडा भरने पर ही फूटता है, वैरागी चलते-चलते बड-बडा रहा था। उसके हाथ दूर से ही हिलते दिखाई पड रहे थे।

गोदावरी की लहरें बादल की तरह उमडी और आँधी की तरह छा गईं। कई सिपाहियो और यात्रियो को वे समेट कर अपनी गोद मे बहा ले गईं।

वृद्ध और रेड्डी अपने आश्रम की ओर लौट रहे थे। सूर्य ढल रहा था। अत्याचार देखकर गोदावरी की लहरो म तूफान उठ खडा हुआ। वैरागी के पाव अपनी कुटिया की ओर मुडे। गोदावरी पुण्य-पाप को अपनी गोद मे समेट ले गई।

—'गेहू के साथ घुन भी पिस रहा है।' साहब गुरु गोविन्द सिह जी कह रहे थे।

—'सत् गुरु! आज का खूनी काण्ड सूर्य भगवान् भी देख-देखकर उकता गए और उन्होने अपना मुँह रात की अन्धेरी चादर म छिपा लिया। अन्धेर नगरी और चौपट राजा वाली कहावत चरितार्थ हो रही है।' भाई दया सिह कह रहे थे।

सभी अपने-अपने विश्राम-स्थलो की ओर जा रहे थे।

२

□□□

देवता की मौत

घने बादलों का चंदोआ गोदावरी और सम्पूर्ण नांदेड़ नगरी को घेरे हुआ था। मीठी-मीठी फुहार पड़ रही थी। गोदावरी नदी का जल शिव मंदिर की सीढ़ियों का मुख चूम रहा था। गोदावरी की उछल-कूद अकारण नहीं थी। उसका शरीर क्षत-विक्षत हो रहा था और उस पर जुल्म की सांटें उभर रही थीं। गोदावरी अपनी चीत्कार नांदेड़ निवासियों को ही नहीं, बल्कि उन प्रदेशों के निवासियों को भी सुना रही थी जो उसके मार्ग में पड़ रहे थे। सोते हुए नवयुवकों को वह सजग करती और ललकारती हुई चली जा रही थी। क्रोध से वह चीत्कार करती थी पर नव-युवक अभी सो रहे थे। वह नांदेड़ से रामेश्वर तक बसे हुए देश वासियों को अत्याचार का भान कराना चाहती थी। वह जुल्म के विरुद्ध बगावत के झंडे गाड़ना चाहती थी। वह चाहती थी कि शूर-वीर खड्गों की मूठें दृढ़ता से पकड़ लें। वह भालों को सिरों से दो इंच ऊंचा उठा हुआ देखना चाहती थी। चिंगारी फेंकी जा चुकी थी और स्थान-स्थान पर आग भी सुलगने लगी थी। सुलगती हुई आग फूंक-फूंक कर ज्वाला का रूप देने के लिए वह प्रयत्नशील थी।

गोदावरी पवित्रता की देवी भी है और दुर्गा भवानी भी। रण-भूमि में वीर रस की शक्ति भी है, और रनिवास में शृंगार रस की मेनका भी। गोदावरी की लहरों में छिपी ज्वालाएं भड़क तो उठीं पर वे मुंह से कुछ बोल नहीं सकीं। विद्रोही हृदय की पुकार उसके संकेतों में निकलती तो अवश्य थी पर उसे किसी ने न तोड़ा। उसका जोश अन्दर ही अन्दर उबाल खाने लगा। उबाला! जिन्हें लोग तूफानों की सज्ञा देते हैं। तूफान जिसमें बगावत की आग छिपी रहती है। वह चाहती थी इस ज्वाला को सारे देश में बाँट देना। वह चाहती थी कि अनाज में विद्रोह के कीटाणु भर देना जिससे अन्न खाने वालों में विद्रोह की आग भड़क उठे। तथा वे टूट पड़ें उन अत्याचारियों पर जो देश

के लिए कलंक स्वरूप हैं, और जो उनकी पवित्रता को नष्ट कर रहे हैं। वह शासन देश के लिए अभिशाप है जिसमें मानव के अन्तकरण (ज़मीर) की हत्या कर डाली जाए, जिसमें आत्मिक शक्ति के खंड-खंड हो जाए, और जिसमें पुण्य भी पाप में परिवर्तित हो जाये। गोदावरी माता है। वह अपने सपूतों को ललकार रही है। अन्न का दान देकर उनमें शक्ति भर रही है। उस शक्ति में अनख और आन पर मर-मिटने की भावनाएं सन्निहित होंगी। वह एक बार अपनी ओर सब को खींच लेगी। एक दिन भगवे झंडे के नीचे एकत्र होकर सभी एक स्वर में कहेंगे—जय गोदावरी! जय हिन्दू धर्म। फिर उसी के तट पर मेले लगने लगेंगे—आज़ाद और स्वतन्त्र मेले। तब उनका रास्ता कोई नहीं रोक सकेगा। यात्री निर्भय होकर कीर्तन करते हुए महादेव जी के मन्दिर में जल चढ़ा सकेंगे। उनकी ओर कोई आँख उठाकर देख तक न सकेगा।

गोदावरी के वक्ष स्थल पर लहरों के बल ऐसे जान पड़ते थे जैसे किसी कृषक ने धरती की छाती को चीर कर हल चला दिया हो अथवा किसी मुग़ल ने किसी तरुणी की सुभग चोटी की अलकें बिखेर दी हों। यौवन चूस लिये जाने पर फैंकी हुई सीठी के समान गोदावरी तड़प रही थी। कदाचित् वह प्रतिज्ञा कर रही थी कि जब-तक मेरे केशों में उस हत्यारे के गरम रक्त का तेल नहीं पड़ेगा तब तक मैं कभी नहीं कढ़ूगी। जब तक अत्याचारों से बदला न ले लूं तब तक अपने को विधवा समझूंगी। उसने अपनी माँग का सिन्दूर पोंछा हुआ था।

सती का शाप कैलाश को भी हिला देता है। द्रौपदी ने केवल वेणी के संहार के लिए महा-भारत जैसे भयानक युद्ध का बीज बोया था। गोदावरी तड़प रही थी। वह किनारों से इस प्रकार टकरा रही थी जैसे कोई साँड सींगों से दीवार तोड़ रहा हो। लज्जा से वह अपना माथा फोड़ लेना चाहती थी। शिव मंदिर के चारों ओर लहरें चक्कर काट रही थी। आरती आरम्भ हो रही थी। भक्त मंदिर की ओर जा रहे थे। शंख बज रहा था। घड़ियालों की छाती पर हथौड़ों की चोट पड़ रही थी। पुजारी आरती कर रहे थे। लहरें घुंघरू बजा रही थी। कभी कभी उनमें तूफान भी आ जाता था, पर पुजारी अपनी लगन में आरती करते जा रहे थे।

—'कदाचित् यह शिव मंदिर की अन्तिम आरती है।' बूढ़े यात्री ने कुटिया में से निकलते हुए कहा।

—'क्यों बाबा! यह क्या आकाशवाणी है! शताब्दियों से चले आते हुए मंदिर की क्या यह आखिरी आरती होगी! यह कैसे हो सकता है। मर्यादा कैसे बदल सकती है।' कुछ देर चुप रहकर रेड्डी फिर बोला—'बाबा! तुमने यह कैसे समझ लिया!'

—'मुझे आज लहरो की नियत बिगडी हुई जान पडती है। इन मे तूफान और भूकम्प का अश दिखाई देता है। मैंने अपने जीवन म ऐसी बाढ कभी नही देखी। मुझे इस नदी के तट पर वास करते हुए बीस वर्ष हो गये पर मैंने इन लहरो की ऐसी खर-मस्ती पहले कभी नही देखी। सावन भादो म मतवाली लहरें अवश्य उछल कूद मचाती हैं परन्तु न तो उससे पुजारियो का नाको दम होना है और न नगर वासियो का। पर आज तो पुजारी भी घबरा उठे है। देखो' वे आरती तो कर रहे हैं पर लहरे उन्हे धक्को से विह्वल कर रही हैं। रेड्डी ! यदि लहरो का यही हाल रहा तो नादेड मे कुछ ही घटो म भूत नाचने लगेंगे।' बूढे ने चिन्तित भाव से कहा।

—'तूफान लहरो की गोद मे है और तूफान की गोद मे है मदिर। कदाचित् साथ के अन्धकार मे कल कोई घोर पाप हुआ है। निर्दोष यात्रियो, विधवाओं और गोपालन की कचन जैसी स्त्री का क्रदन तथा उसकी बूढी माता का आर्त्तनाद इसके प्रमाण हैं। गोपालन की बहनो ने अभी तक अपनी भाभी का लाल चूडा जी भर भी नहीं देखा था कि उसकी कलाई सूनी हो गई। उसकी माग का सिन्दूर इस प्रकार पु[illegible] गया है जैसे पुजारियो ने पूरा हुआ और मुगलो के भय से मिटा दिया हो। उसके हाथो की मेहदी का रग भी अभी मद नही पडा था कि उसकी मधुर भावनाओ का गला घोट दिया गया, जैसे किसी बहेलिये ने किसी पक्षी की गर्दन मरोड दी हो। उसके चाव कुआरे ही रह गये। दिन-दहाडे उसका सुहाग लूट लिया गया। दुनिया उसके लिए अन्धकारमय हो गई। बहारें उसके लिए पतझड का रूप धारण कर बैठी। सुहाग के फूल काटे बनकर उसे चुभने लगे। उस अबला के आसू, उस निरीह की आह क्या निरर्थक ही रह जायेंगी ? मरे बकरे की खाल स लोहा भस्म हो जाता है। उस अबला की आह तो नादेड को ही फूक कर राख कर देगी ! राज उलट जायेगा ! धरती काप उठेगी।' रेड्डी के ये शब्द थे।

सूर्य सिर पर चढ आया पर लहरो का जोश मद न पडा। सूर्य बदलियो की चादर मे से कभी निकलता तो कभी फिर उन्ही मे अपना मुह छिपा लेता। पुजारी पानी के थपेडे सहकर भी आरती कर रहे थे। लहरें ऐसे बढ रही थीं जैसे तैमूर की सेनाए बादलो की तरह पजाब पर छा रही हो। और पंजाब निवासी अपनी आँखें इस प्रकार मूदकर बैठ गये हो जैसे बिल्ली के डर से कबूतर वे अध-विश्वासी तैमूर का मिक्का इस लिए मानते गये कि भगवान् स्वय ही कभी सहायक होंगे। सर्व शक्तिमान स्वय अवतार धारण करके भक्तो का कल्याण करेंगे। इसी प्रकार बेचारे पुजारी भी मग्न थे आरती मे। वे न तो पानी से ही बचना चाह रहे थे और न किसी मुगल सिपाही के सामने आँख ही उठाना। पुजारियो के सामने महमूद गजनवी ने सोमनाथ के मन्दिर

लूटा किन्तु किसी ने उसके सिपाहियो का हाथ न रोका। यही हालत नादेड के शिव मन्दिर के पुजारियो की थी। वे दान-दक्षिणा भर लेना जानते थे। दान तो निकम्मा बना डालता है। दान लेकर दान देने से बुद्धि मलिन हो जाती है, हड्डियो म पानी भर जाता है, अनख भर जाती है।

—'बाबा! देखो! आरती समाप्त हो गई। पुजारी लौट रहे हैं! पानी मन्दिर की परिक्रमा म चक्कर काट रहा है। लहरें बिगडती जा रही हैं। इतनी तेजी से चलने वाला यात्री भी थक जाता है किन्तु इन लहरो की तो कोई मजिल ही नही है। ये तो थहो साम लेने का नाम भी नही लेती। अन्त म कही ये लहरे कुछ अनहोनी न कर बैठें बाबा! इन लहरो के सिर भूत सवार है। इनके मुह म खून लग चुका है। ये खूनी बन चुकी हैं। अवश्य कोई उपद्रव खडा करेंगी। फिर क्या होगा बाबा!' घबराई हुई आवाज म रेड्डी कह रहा था।

—'अभी पानी किनारो के होठो तक नही पहुचा। जब यह किनारो से बाहर छलकने लगेगा तब भले ही सकट उपस्थित हो सकता है। नादेड ऊचाई पर बसा हुआ है। पानी निचाई की ओर जाता है, ऊचाई की ओर मुह भी नही उठाता। शक्ति वालो का सात कोडी का सौ होता है। जिसकी लाठी उसकी भैंस। शक्तिमान के आगे कोई सिर भी नही उठाता। पानी भी ऊचाई की ओर चढने से डरता है।' बूढे ने कहा।

हवा मे कुछ तेजी आ गई। पेडो की शाखाए धरती को छूने लग गईं।

—'मुझे ऐसा लग रहा है कि यदि दो घडी हवा इसी तरह चलती रही तो पेड जडो सहित गिर पडेंगे। धरती फट जायेगी। कोलाहल मच जायेगा। नादेड के भाग्य मे दुख ही दुख बदा हुआ प्रतीत होता है। इसने मुगलो की तरह मोती दान नही किय, पापो की अजुलि देवता को अर्पित की है। चलो रेड्डी चलकर कुछ खाने-पीने का प्रबन्ध करो। दिन सिर पर चढ आया है और तुम भूख से व्याकुल हो रहे हो। साधुओ का बडा कठिन जीवन है बेटा! जाओ! घर जाकर मौज उडाओ! साधु सन्तो के साथ रहकर तुम्हे क्या लेना है।' बूढे ने कहा—

—'गेरुए वस्त्र, माला के मनके और पेट पूजा ही इनका धधा है।' एक यात्री व्यगपूर्वक कह रहा था।

रेड्डी बोला—'मुझे घर की ऊची अट्टालिकाए अच्छी नही लगतीं। खुले आगन मुझे काटने को दौडते हैं।'

रेड्डी सन्त तो बन बैठा पर घर का मोह उसे अब भी सताता था। वह नित्य नियमपूर्वक घर जाता था। वह खेत और हल जोतने क भय स साधु नही बना था बल्कि उसकी सगति आरम्भ स ही साधु-सन्तो से थी। वह कोई

साधारण जमींदार न था। उसके पास बहुत बड़ी जमींदारी थी। इस समय भी उसके बीस हल चलते थे। भक्ति रस में उसने अपने प्राण देवता को अर्पित कर दिये थे। *अत्याचार* के विरुद्ध उसने जान तक दे देने की प्रतिज्ञा कर रखी थी। उसने अपने हृदय के आँगन में बलिदान के पौधे का बीज बो रखा था। अनखपूर्वक जीने और अत्याचार के विरुद्ध उसने तलवार उठाने की सौगन्ध खा रखी थी। गोपालन की जलती चिता की आँच अभी तक रड्डी की नसों में जोश ला रही थी।

—'बावले ! तुम बात-बात पर गोपालन को याद कर बैठते हो। मुझे भय है कि कहीं तुम भी गोपालन की तरह जान जोखिम में न डाल बैठो। मुगल सेना के लिए मनुष्य के रक्त का कुछ मूल्य नहीं। जिसके हाथ में तलवार होती है वह इच्छानुसार किसी की भी गर्दन काट सकता है। उसकी दृष्टि में घोड़ा मनुष्य से कहीं अधिक मूल्यवान है। फौजी आदमी पन्द्रह रुपए का गुलाम है परन्तु घोड़ा पचास रुपयों का आता है। अच्छी नसल का घोड़ा ढूंढने के लिए ईरान का कोना कोना टटोलना पड़ता है किन्तु जवान सिपाही के लिए पन्द्रह रुपये ही बहुत समझे जाते हैं। वे भी एक महीने के बाद देने पड़ते हैं। मुगल सेना घोड़े का ध्यान अधिक रखती है मनुष्यों का कम। बेकारी पन्द्रह रुपयों के वास्ते नवयुवकों को बिकने के लिए मजबूर कर देती है। पन्द्रह रुपयों में भाई-भाई का रक्त पीने लगता है। भूख सब कुछ करने के लिए विवश कर देती है। मुसलमान काबुल, कंधार गजनी और ईरान से नहीं आये बल्कि वे हमारे ठुकराये हुए भाई ही मुसलमान बन गये हैं। हमारे नेताओं की मेहरबानियों ने ही मुगल हुकूमत की नींव पाताल तक जमा दी है। मुहम्मद बिन कासिम केवल ७२ मुसलमान लेकर भारत आया था। जो कोई भी लुटेरा भारत आया उसके इने-गिने ही आदमी होते थे। क्या उन्हीं मुट्ठी भर मुसलमानों ने हिन्दुस्तान के चारों ओर अपनी हुकूमत की कनात नहीं तानी ? बल्कि हमारे भाइयों ने उनकी डोरियों पर मजबूती की गाँठ लगाई। राजपूत जितने लड़ाकू थे उतने ही कोमल हृदय भी। अकबर के झांसे में आ गये और उन्होंने अपनी बहनें और लाडली बेटियाँ मुगलों को ब्याह दीं। और भारतीय ललनाएं भी अनख और वीरता के चारों पल्ले झाड़कर डोलियों में चढ़ बैठीं। राजपूत चाहते थे कि हमारे भानजे और नाती राज-सिंहासनों के वारिस बनें। हिन्दू लक्ष्मी के पुजारी हैं, अनख के नहीं। दौलत के हाथों वे अपना सब कुछ बेच सकते हैं। भले ही राजपूतों को बहादुरी उत्तराधिकार के रूप में मिली हो परन्तु उन्हें दौलत के लोभ की घुट्टी बचपन से ही मिल जाती है। दौलत के लोभ में भाई-भाई का और पिता पुत्र का साथ छोड़ देता है। प्रताप अनख में जान गवां बैठा। अकबर के आगे उसने सिर नहीं झुकाया। यदि वह चाहता तो बहुत कुछ किन्तु हथिया लेता उसने आजादी के एक दिन के जीवन को भी गुलामी के—

सौ वर्षों से भी अधिक मूल्यवान समझा। मान सिंह की तरह स्वर्ण का सौदा नहीं किया। अमर सिंह राठौर, दुर्गादास और आल्हा-ऊदल भी प्रताप की माला के ही मनके थे। लड़ते-लड़ते अपने प्राण गवा दिये पर अपनी आबरू को भरे बाजार नीलाम न होने दिया। दौलत को उन्होंने हाथों की मैल समझा और गुलामी को जीवन का कलंक। अनख उनके सिरों पर कलगी बनकर चमकी। स्वतन्त्र मरना मनुष्यता है, गुलामी की मौत तो पशु मरते है। मरद तो आजाद जीते और आजाद मरते हैं।' बूढ़े यात्री ने रेड्डी की आँखों म आँखें डालते हुए कहा।

वर्षा के मन्द पड़ने पर तटवासी यात्री झोपड़ियों से बाहर झांकने लगे जिनमें माधव दास बैरागी भी थे। कुछ दूर हट कर सिक्खों का डेरा था। वे यात्रा करते-करते इतने थक चुके थे कि उनका कोई आदमी डेरे के बाहर दिखाई नहीं देता था। केवल चार सरदार और कलगी वाले महापुरुष डेरे के अन्दर बैठे हुए दूर से दिखाई पड़ते थे। ये कलगी वाले महापुरुष गुरु गोविन्द सिंह थे। ये भविष्य वक्ता और त्रिकालज्ञ भी थे।

—'अधभरे जख्मों के साथ आपका नादेड़ छोड़ना खतरे से खाली नहीं है सतगुरु! बहादुरशाह ने मुसवूस से काम लिया है। हमें नादेड़ में आराम करने के लिए विवश कर दिया है। यदि ताव से काम लेते तो हो सकता था कि यह अधभरे जख्म पुनः खुल जाते और फिर शाही जर्राह इन्हें सीने की हिम्मत न करते। तो फिर क्या होता। हमारा तो करतार ही रक्षक था।' भाई दयासिंह कह रहा था।

—'भाई दया सिंह! तुम तो बात-बात पर विकल हो जाते हो, यह परदेश है घर नहीं। यहाँ शत्रु से प्रत्येक क्षण सावधान रहने की आवश्यकता है।

—'हमारी थोड़ी सी नरमी और लापरवाही ने उस पठान के बच्चे की हिम्मत बढ़ा दी है। छुरा भोंकते समय उसका हाथ जरा भी नहीं कांपे।'

—'हम तो उसे बहादुर समझते हैं जो जान-बूझकर आग में हाथ डालता है और इस बात का ख्याल छोड़ देता है कि ऐसा करने से मेरा हाथ भी जल सकता है। क्या हुआ जो हमने उसे यह दहलीज भी लांघने न दी और ढेर कर दिया। पर उसकी जवाँबाजी की दाद देनी पड़ती है। उसने अपनी जान का सौदा करके आलमगिरी हुकूमत की एक अड़चन को निकाल देना चाहा था। यह और बात है कि उस करतार ने हमारा हाथ थाम लिया। पर उस मन-चले की वीरता का झंडा हमारे मन में लहरा रहा है शाबास रे बंदे खान! धन्य है तुम्हारी माता जिसने तुम्हें जन्म दिया! बलिहारी उस माता की जिसने हमारे शत्रु को पाला पोसा!' गुरु गोविंद सिंह भाई दया सिंह से बातें करते हुए बीच में चुप हो जाते और फिर उसी की प्रशंसा करने लग जाते हैं।

—'सतगुरु ! यह तो धोखा है। सोते आदमी पर वार करना भी कोई वीरता है। शेर खूंखार होने पर भी सोये हुए शिकार पर नही झपटता। ललकार कर, जगाकर, फिर भले ही हमला करे। जगल के पशुओ म भी इतनी सूझ है तो मनुष्य किस तरह इस बात को बहादुर समझ बैठे। मच्छर जिसकी जान हवा का एक थपेडा भी नहीं सह सकती वह भी सोते मनुष्य को ललकारता है, उसके कान म डके की चोट करने मे पीछे नही हटता। उसने आपकी छाती मे छुरा झोंककर अपनी बहादुरी का झडा नही गाडा बल्कि सदा के लिए उसने बहादुरी का सिर झुका दिया है।' पाच प्यारो म से एक ने कहा।

— अपने से बलवान् को मारने के लिए धोखे से काम लेना राजनीति है। क्या आलमगिरी फौजो का मुकाबला शिवा जी कर सकते थे ? कदापि नही। मुकाबला करना तो दूर रहा मुकाबले का नाम लेना उनके लिए मौत से भी अधिक भयकर था। ऐसी अवस्था म उन्होंने राजनीति से ही काम लिया। औरगजेब का नाक म दम कर दिया। शिवा जी की शह से औरगजेब जीवन भर पीछा न छुडा सका। बीजापुर की आदिलशाही हुकूमत की नीव शिवाजी ने खोखली कर दी। औरगजेब ने बीजापुर को घेरने के लिए सारी शक्ति लगा दी। सारी दिल्ली बीजापुर पर टूट पडी। किन्तु उसका बाल भी बाका न कर सकी। शिवाजी के नाम से बीजापुर का बच्चा-बच्चा डरता था। शिवाजी की ताकत के सामने आदिलशाही हुकूमत न झुकी, पर उनकी राजनीति के आगे उसे घुटने टेकने पडे। चाणक्य की राजनीति ने ही चन्द्रगुप्त को भारत का सम्राट् बनाया। सेल्यूकस ने चन्द्रगुप्त को अपनी कन्या ब्याह कर अपनी जान बचाई। चाणक्य की राजनीति पर चलने वाला ही मुगलो के दात खट्टे कर सकता है। बहादुरशाह भले ही मैत्री का दम भरता हो, पर है तो सपोला ही। साप के बच्चे को दूध पिलाने पर भी क्या आप विश्वास कर सकते हैं कि वह काटेगा नही। कदापि नही। उसे घुट्टी मे ही डक मारने की शिक्षा मिली होती है। वह सज्जन और दुर्जन को नही देखता। मुगल भाई कितने ही विश्वसनीय क्यो न बने उनका कुछ भी विश्वास नही। न जाने कब नीयत बदल जाए। मित्रता वैर के रूप मे परिवर्तित हो जाए। पठान का बच्चा हमे छुरा भोककर गाजी बन गया। उसके पाप को काजी पुण्य की सज्ञा देते हैं। रहम करने वाली हुकूमत भीरू होती है। मित्रता म विश्वासघात करना उनके धर्म म पाप नही। वे समझते हैं कि दुश्मन विश्वासघात से ही मारा जा सकता है दुश्मनी से नही। यदि वे रहमदिल होते तो भारत का सम्राट् और ही कोई होता। मुगलो के सिर शाही ताज न विराजता।' गुरु गोविन्द सिंह जी की आवाज म जोश उमड रहा था।

—'सतगुरु! अभी घाव के टांके कच्चे हैं, आप हिलें-डुलें नही। कहीं ये टांके टूट गए तो कोई अच्छा जर्राह भी यहा नही मिलेगा। आप आराम करें

आवेग में बोलने की चेष्टा न किया करें। पंजाब से दूर विंध्याचल की गोद में यदि कुछ अनहोनी हो गई तो हमारा कौन रखवाला होगा।' दूसरा सिक्ख कह रहा था।

· 'सतगुर !'

—'ईश्वर की इच्छा के आगे सिर झुकाना चाहिए। अब तो जख्म में अंगूर भी आ गए हैं। हम एक-दो दिन में चंगे हो जाएंगे। घबराने की कोई आवश्यकता नहीं। सिंह सपूत छोटी बातों से साहस नहीं छोड़ते।' धैर्य बँधाते हुए गुरु जी ने कहा।

—'सतगुर ! गोदावरी की लहरों में तूफान नाच रहा है। वह मन्दिर को ठोकरों से गिराना चाहता है। आज तो किनारे भी उसकी लहरों से पनाह मांग रहे हैं। तूफान के ओठों में से फेन छूट रहा है। भगवान् जाने इतना पानी गोदावरी में कहां से आ गया है।' एक सिक्ख मल्लाह ने आकर कहा और पीछे हटकर खड़ा हो गया।

वैरागी के आश्रम में भी गोदावरी की बाढ़ की चर्चा हो रही थी। सिक्खों का डेरा वैरागी के आश्रम से कुछ दूर हट कर था। वृद्ध यात्री और रेड्डी भी गोदावरी के तट के ही निवासी थे। उनकी झोंपड़ियां वैरागी के आश्रम से कुछ दूर थीं। वैरागी का आश्रम वही था जिसे आज नगीना घाट कहते हैं, गोदावरी का पानी बाढ़ के दिनों में कभी-कभी आश्रम के पैर छू लेता था। गोदावरी की बाढ़ की चर्चा स्थान-स्थान पर हो रही थी। जितने आश्रम और साधुओं की झोंपड़ियां थीं वे सभी गोदावरी के तट पर ही थीं। सब शिव मन्दिर को देख रहे थे। जो कोई झोंपड़ी या आश्रम से बाहर निकलता, सबसे पहले उसकी दृष्टि शिव मन्दिर पर ही पड़ती। इसलिए ऊषा की पहली किरण फूटते ही शिव मन्दिर के दर्शन हो जाते। पानी की लहरें बीन की स्वर लहरी पर नाचते हुए फनीयर सांप की तरह मतवाली हो रही थीं।

—'पानी की अति हो गई है। गोदावरी भी जल को सम्भाल नहीं पा रही है। कहीं गोदावरी उछल पड़ी, तब हमारा ईश्वर ही रक्षक होगा।' वैरागी का एक शिष्य अपने गुरु भाई से कह रहा था।

—'तुम्हारी कौन सी खेती डूबी जा रही है जो इतनी चिन्ता कर रहे हो। न अगाड़ी न पिछाड़ी हो एकदम मस्त-मलंग। भांग रगड़ कर मेंहदी बना दो। यदि आज भी मोटी रही तो तुम्हें भी सिल बट्टे में धर दिया जाएगा। विजया पीकर स्वर्ग का आनन्द लूटो प्यारे। यह समय फिर हाथ आने का नहीं।' दूसरे चेले ने उत्तर दिया।

—'पियो भंग और घूमो बाग, पिछले जीएँ अपने भाग। बलिहारी रे

बहादुर। भाग देखकर सिसोदा बन गए और देखते ही आ छिपते। भाग पर लट्टू मत हुआ करो।' तीसरे चेले ने कहा।

—'अभी तो आकर बैठा ही हूं। तुम तो मेरे पीछे हाथ धोकर पड़े रहते हो। सिल-बट्टे की आवाज सुनकर पानी तो तुम्हारे मुंह में भर आया है।' पहले ने उत्तर दिया।

—'उधर तूफान में मौत अठखेलियां कर रही है और इधर तुम्हें भाग छानने की पड़ी है। कुछ तो अक्ल करो।' एक हृष्ट-पुष्ट शिष्य ने कहा।

बैरागी सोच रहा था—आज गोदावरी की बाढ़ अवश्य कुछ आफत ढायेगी। गोदावरी की बौखलाई हुई लहरें ललकार रही हैं कि जो हमारी मार में आया उसका मटियामेट कर देंगी। गोदावरी की लहरों में क्रोध दिखाई दे रहा है। निर्मल और पवित्र जल में इतना पाप घुल चुका है कि वह गन्दला और मैला हो गया है। इसीलिए उसकी पवित्रता की शक्ति पर पाप ने सिंहासन जमा लिया है। वह पाप की मदिरा उगल देना चाहती है जिससे वह पुनः पवित्रता का दान दे सके। यह तपोवन है। देवताओं का निवास स्थान। अब यहां म्लेच्छ छा गए हैं। यथा राजा तथा प्रजा। एक पापी हो तो उसे रोका भी जा सकता है। यहां तो कुनबा ही वह चल. है। रोका भी जाए तो किसे। गोदावरी के तट पर तपस्वी नहीं अब चण्डाल बस रहे हैं। औरंगजेब ने दक्षिण में प्रवेश क्या किया संसार की मर्यादा को हिला दिया। चाहे वह स्वयं भी चैन से न बैठ पाया हो पर उसने दक्षिण वालों का जीना भी हराम कर दिया। गोलकुण्डे से उसने जान की बाजी लगा रखी थी किन्तु तानाशाह ने तीस वर्ष उसकी कुछ न चलने दी। उसके हथियार डालने से पहले औरंगजेब चल बसा था। अहमदनगर के बुखार ने उसे जो पकड़ा कि उसे सदा की नींद सुला दिया। दौलताबाद के किले में दफनाया हुआ औरंगजेब अब भी गोलकुण्डे और बीजापुर के स्वप्न देख रहा है। नादेड़ में उपद्रव मचाने वाले भी तो उसके अनुचर हैं। बहादुरशाह अपने हाथ भाइयों के खून की मेंहदी से रंगकर भी निर्दोष बना बैठा है। उसके पापों का प्रायश्चित हमें करना पड़ रहा है। हमसे हमारी गोदावरी रूठ रही है। हमारा इष्ट हमसे मुख मोड़ रहा है। वे अपने गुनाहों की चादर को पुण्य के साबुन से धोकर निर्मल नहीं बनाना चाहते, बल्कि अत्याचारों से उसे और मलिन करते जा रहे हैं। जब से तपोवन में इनके पांव पड़े हैं तब से मृग चौकड़ी भरते दिखाई नहीं पड़ते। इनके भय से युवतियों के शरीर की त्वचा सूख गई है। कोई अच्छी दूध देने वाली गाय अब दिखाई नहीं देती। ये हम से दूध, पूत, जवानी, गैरत, इज्जत सब कुछ छीनते चले जा रहे हैं। क्या गजनी से ऐसे ही इन्सान बसते हैं। कोई बात नहीं। आप तो डूबे ही चौबे जी और साथ में यजमानों को भी ले डूबे। मुझे दिल्ली की ऊंची मीनारें खोखली नजर आती हैं। मछुआ लालच में जाल फैंक देता है पर उसे खींचते

समय उसकी बाहें जवाब दे देती हैं। मछलियाँ पकड़ता-पकड़ता वह जाल भी हाथ से खो बैठता है। मुगलशाही के अगुआ भी ऐसे ही किसी मछुए की सन्तान हैं। खोखली नींवो पर विशाल भवन नही टिक सकता। बहादुर शाह दक्षिण मे भी दिल्ली के शीश-महलो के स्वप्न देखना चाहता है। तख्त-ताउस के मजे वह दिल्ली मे तो ले सकता है पर दक्षिण मे नही। जिसका सेनापति भँगेडी और शराबी हो उससे क्या आशा की जा सकती है। जिसके घर मे पिछवाडे मे सेंध लगी हो और चोर मकान मे घुस चुके हो वह खजाने की तालियों के गुच्छे को कमर में लटकाए हुए किस प्रकार कह सकता है कि मेरा खजाना सुरक्षित है। मुगल नरेश सम्राट् बनना चाहते हैं। भाड़े की फौजें जान हथेली पर रखकर तब तक नही लड़ती, जब तक खून का नाता न हो। मुट्ठी भर मराठो ने (जिन्हें औरंगज़ेब पहाडी चूहे कहता था), शाही फौजो के कई बार दांत खट्टे किए। वे दिन-दिहाड़े डाका मारते थे, प्रजा पर नही, बल्कि उनके रखवाले फौजी सिपाहियों के डेरो पर। शाही सिपाहियो मे इतना दम नही था कि वे किसी अकेले-दुकेले मराठे वीर को पकड़ सकें। दुबला-पतला मराठा भी मोटे जैसे पठान का खून पी लेता था। शाही फौज किसी दूल्हे की बारात से कम नही थी। शाही नगाडे बजने बन्द हो चुके थे और उनकी जगह तबले और शहनाइयाँ बजती थी। तलवारो की झनझनाहट के स्थान पर जब चूड़ियो की झनकार होती थी। अनख वाले जवानो की पदचाप के स्थान पर पायलें झनकने लगी थी। अखाडो म बादामो की ठडाई के स्थानो पर अब मादक पदार्थों पर नौजवान मतवाले होकर झूमने लगे थे। रक्त-पिपासे युवक चुल्लू भर मदिरा मे डूबे रहते थे। यह कोई नई बात नही थी। जहाँगीर ने दो घूँट शराब के लिए अपना साम्राज्य नूरजहाँ के कोमल हाथो म सौंप दिया था। उनकी पैतृक परम्परा ही कुछ ऐसी थी। वैरागी माधवदास इन्ही विचारो मे निमग्न था।

—'महाराज गोदावरी ने शिव मन्दिर की दीवारें हिला दी हैं। मन्दिर की नींव हिल चुकी है। पुजारी मूर्ति के मस्तक से हीरा निकालने के लिए अब भी जा रहे है।' एक आदमी कह रहा था।

—'नही-नही महाराज! शिव मन्दिर गिर रहा है। गोदावरी उसे अपनी गोद मे समेट रही है।' सेवादार ने कहा।

इतने मे धमाके का शब्द हुआ और शिव मन्दिर, मूर्ति, मूर्ति के हीरे और कुछ पुजारियो को लिए दिए गोदावरी मे विलीन हो गया।

— 'रेड्डी क्या हुआ? यह शब्द कैसा है?' बूढा यात्री घबरा कर पूछ रहा था।

—'शिव मन्दिर गिर गया है। लहरें अपने साथ मन्दिर और लालची पुजारियो को बहाये लिए जा रही हैं सागर की गोद मे।' रेड्डी की आवाज मे घबराहट थी।

—'हैं हैं ! इतना घोर शब्द ! कहीं मुसलमानों ने तोप से किसी को उड़ा तो नहीं दिया।' गुरु गोविन्द सिंह अपने डेरे में चौंककर कह रहे थे।

सेवादार तब बाहर निकले और गोदावरी को देखकर स्तब्ध हो गए। एक सेवादार कहने लगे—

—'सतगुरु ! पानी ने मन्दिर को गिरा दिया है। यह उसके गिरने का शब्द था।'

—'क्या शिव मन्दिर गिर गया है? गोदावरी में इतनी बाढ़ है! दाता यह क्या होने वाला है।'

—'गोदावरी पाप नहीं सम्भाल सकी। कदाचित् इसीलिए उसने महा काली का रूप धारण कर प्रलय मचा दिया है। उपद्रव की भी एक सीमा होती है। अत्याचार और अनर्थ देखकर भगवान् शिव ने भी अपना मुख गोदावरी की गोद में छिपा लिया है। महापुरुष यदि अत्याचार बन्द नहीं कर पाते तो वे आत्म बलिदान कर बैठते हैं। प्रतिदिन का चीत्कार सुनकर दुर्बलों के कान फट जाते हैं, वीरों के नहीं। या तो वे अत्याचारियों का संहार कर देते हैं या फिर वे अपनी आहुति देते हैं।' गुरु गोविन्द सिंह इतना कहकर समाधिस्थ हो गए।

— देवता की मौत हो चुकी है रेड्डी ! कायरता ने देवताओं को आत्मघात करने के लिए विवश कर दिया है। राजपूत की वंशज ने इस मन्दिर की स्थापना की थी। वह राजपूत कायर नहीं। उसने राजपूतनी का दूध पिया था किसी दासी का नहीं। मन्दिर यह अच्छी तरह समझ गया था कि अब यहां कोई राजपूत वास नहीं करता। गोदड़ों में सिंहों का वास असम्भव है। वैरागी भी राजपूत है पर वह भी कायर और भीरू बन चुका है। उसमें फक्कड़पन आ चुका है। वह मुगलों में वली अल्लाह बनना चाहता है। उसके आगे अभी कोई मुगल सिर नहीं उठाता। पर यह तभी तक, जब तक मुसलमान कोई शरारत का जाल नहीं बिछा लेते। जब मजहब बुरके से मुँह उघाड़ेगा, तब इस्लाम फक्कड़ को काफिर भी बना देगा और मुसलमान उसके रक्त के प्यासे हो जाएंगे। नांदेड़ के बीच बाजार में उसका वध किया जाएगा। इतना होने पर भी कोई यह न कह सकेगा कि बुरा हुआ। तब उसके चारों वीर भी किसी का कुछ नहीं बिगाड़ सकेंगे।' यह कहकर वृद्ध चुप हो गया। फिर वह कुछ कहना ही चाहता था कि पीछे से उसके कन्धे पर वैरागी ने हाथ रखते हुए कहा—

—'बाबा ! तुम्हारा चेहरा इतना क्यों तमतमा रहा है।'

—'इसलिए कि शेर जंगल छोड़ गीदड़ की खाल पहन कन्दरा में जा छिपा है। इसलिए कि राजपूतनी के दूध का मजाक उड़ाया जा रहा है और राजपूत चुप है। घोड़े की पीठ पर बैठकर तलवारों की झनझनाहट सुनने वाले वीरों के कान छैनों की झंकार सुनने के अभ्यस्त हो चुके हैं। समुद्र का जल खाड़ियों में आ

रुका है। धनुपधारी अर्जुन ने पैरों में घुंघरू पहन लिए हैं। शेरों का शिकार करने वाले गीदड़ों से डरने लगे हैं।' बूढा यात्री एक सास में कह गया।

—'यह सब क्या है बाबा! बातों का चक्र-व्यूह किस लिए रच रहे हो। मैं इस गोरख धन्धे को नहीं समझ सका।' वैरागी ने कहा।

—'वैरागी! यह सब तुम्हारी समझ के अभी बाहर है। तुम स्वय अभी समझने की चेष्टा नहीं कर रहे हो। समय तुम्हें समझने के लिए विवश करेगा, पर उस समय तक पानी सिर से गुजर चुका होगा और तुम्हारे तथा तुम्हारे बाजुओं में जवानी का जोश ठण्डा पड़ चुका होगा। तुम्हारी अनख पर उस समय आघात लगेगा, जब तुम्हें रस्सियों में मुगल जकड़ लेंगे। जवानी में तुम्हारी गैरत नहीं जाग सकती है। तुम्हारी गैरत तो तभी आखें खुलेगी जब बुढापा तुम्हारे कन्धों पर चढ बैठेगा।' बूढा यात्री आवेश में कह रहा था।

—'त्यागी को रण भूमि की शिक्षा! कहीं आज चाणक्य की राजनीति का पाठ तो नहीं कर बैठे बाबा! यह नादेड की धरती है। कुरु का रणक्षेत्र नहीं। पाडवों के बारह वर्ष कहीं खत्म तो नहीं हो चले! तेरहवें वर्ष का सूर्य कहीं पहाड़ का कलेजा चीर कर उदित तो नहीं हो आया! आखिर बात क्या है? तुम्हारी पहेलियों में आज राजनीति की उलझनें दिखाई दे रही हैं। वृद्ध चेहरे की भृकुटियों पर आज अनख जाग उठी है। बूढा मन कहीं जवानी का स्वप्न तो नहीं देख रहा है। कहीं अन्दर से भाग तो नहीं बोल रही है।' वैरागी ने हँसते हुए कहा।

—'गोदावरी की लहरों में शिव मन्दिर का समा जाना देवता की मौत नहीं है, बल्कि मनुष्यत्व की अर्थी है। परतन्त्र की नगरी में देवता स्वतन्त्र नहीं रह सकते। स्वतन्त्र भारत का पुजारी पुनः इसकी स्थापना करेगा। कैलाश की अखण्ड ज्योति पुनः प्रकाशित हो सकती है। किन्तु नहीं, वह समय कदाचित् इस युग में न आ सकेगा।' बूढे यात्री की आखों से आसू ढुलक पड़े।

ध्वस्त मन्दिर के खण्डहरों को सूर्य ने अन्तिम नमस्कार किया और गहन अन्धकार में विलीन हो गया।

३

□□□

प्रकाश की पहली किरण

गुरु गोविन्द सिंह जी के घाव अब बहुत कुछ भर चुके थे। पपड़ी भी सूख चुकी थी। नया मांस जम रहा था। गुरु साहब अब नादेड़ और गोदावरी की यात्रा करना चाहते थे। शिकार के शौक ने कुछ ही दिनों में उन्हें घने जंगलों से परिचित करा दिया। गोदावरी के उस पार पेड़ों और झाड़ियों के पीछे सिंह निकलते थे परन्तु गुरु जी को उनका शिकार करने से रोका जाता था। शाही जर्राह का आदेश था कि जब तक घाव बिल्कुल भर न जाए और शरीर पूरा स्वस्थ न हो जाए तब तक कोई परिश्रम का काम न किया जाए। इसलिए सिंह के शिकार के पीछे गुरु साहब का घोड़ा न दौड़ने दिया जाता।

गोदावरी अपनी गति से बह रही थी। सूर्य के उदित होने पर उसके तट पर स्नानार्थियों की खासी भीड़ लग जाती थी। कन्धे से कन्धा छिल रहा था। नादेड़ के निवासी शिवभक्त थे। मन्दिर भले ही गोदावरी में लुप्त हो गया था पर उसके कुछ पत्थर तो किनारे पर शेष थे ही। लोग अपनी श्रद्धा व्यक्त करने के लिए उन्हीं पत्थरों पर फूल चढ़ा देते। ध्वस्त मन्दिर के ढांचों और पत्थरों की अनेक ढेरियां बनाकर उन्हें मन्दिरों का रूप दे दिया गया। जितने पुजारी थे उतने मन्दिर भी बन गए। सो भी एक बात यह कि सब ने अपनी-अपनी डेढ़ ईंट की मस्जिद अलग अलग बना ली थी। भक्ति और दया नादेड़ निवासियों के हृदय में घर कर चुकी थी। ऐसा लगता था कि तैंतीस करोड़ देवताओं की उपासना यहीं हो रही हो। वास्तविकता यह कि भक्ति के चले जाने पर श्रद्धा के मार्ग भी अलग हो गए। जितने घराने उतने मन्दिर। अछूतों को भी अपने लिए एक मन्दिर बनाने का अवसर मिला। उन्होंने खण्डहर के एक ओर अपने लिए एक मन्दिर की स्थापना कर ली। अब वे खुले हृदय से अपनी श्रद्धा के पुष्प शिव शम्भु को चढ़ा सकेंगे। उन्हें अब कौन रोकने वाला था।

—'शिव शम्भु किसी एक का नही, सारी सृष्टि का है। वह सबका रखवाला है। बम् महादेव !' एक अछूत कह रहा था।

'बम बम महादेव' की जयध्वनि गोदावरी के तट से गूंजने लगी। अछूत प्रेम मे विभोर होकर नाचने लगे और शिव-शम्भु की स्तुति करने लगे। नाचने वाले युवकों को लोगो ने घेरे मे ले लिया। ब्राह्मण भी एड़िया उठा-उठाकर देखने लगे थे। वे यह नही जान सके कि यह आवाज अछूतो की है। अछूतो ने अपने-अपने केश बान्ध कर जड़े बनाए हुए थे। स्वय ही अपने देवता और स्वय ही अपने पुजारी। किसी को किसी के अखाडे की जाच करने की चिन्ता नही थी। पर पण्डितो को अब चढावा बहुत कम मिलने लगा था। जिसे गायत्री का एक मत्र भी आता था वह भी अपने को महा-पण्डित कहलाने लगा और दो-चार पिछलगुओ का गुरु बन बैठा। नादेड की जनता विभिन्न टोलियो मे विभक्त हो गई। कोई किसी का बात सुनने वाला न था। हर पुजारी अपने मन्दिर का राजा बन बैठा। अलग-अलग पुजारियो की अलग-अलग नीतिया चलने लगी। अपनी-अपनी डफली पर अपना-अपना राग निकलने लगा।

इन अनेक मन्दिरो की तरह भारत मे भी अनेक राज्य हैं। छोटे-छोटे रजवाडो और उनके रक्षको की भिन्न-भिन्न नीतिया हैं। मुगल यों ही तो नही मौज मनाते। यदि इतनी ढेरियां मिलकर एक ढेर का रूप धारण कर लें तो इनमे अद्भुत शक्ति आ जाए, जिसे देखकर मुगलो की आखें खुल जाए। फिर वे भी इनकी ताकत से भयभीत होने लगें। तैंतीस करोड़ देवताओ मे बटा हुआ यह भारत किसी प्रकार एक ध्वजा के नीचे जुट सकता? जब तक एक ध्वजा सबके प्राणो का आधार नही बनती, तब तक मुगलो की आखे नीची नही हो सकती।' गुरु गोविन्द सिंह नदी के तट पर खडे खडे सोच रहे थे।

सिक्खो के डेरे के सम्बन्ध मे नादेड निवासी यह न जान सके कि यह डेरा हिन्दुओ का है या मुगलो का। कोई डर के मारे उनके डेरे के पास न फटकता था। क्योंकि डेरे के सब प्रहरी मुगल ही थे। यही नादेड निवासियो की शका के कारण थे। कौन जानता था कि भूभल मे ज्वाला की चिनगारियां भी छिपी रहती है। गुदडी मे भी लाल होते हैं। उन्हे कोई खोज निकालने वाला होना चाहिए। कमल कीचड मे पनपता है, बहती गगा मे नही। सिक्ख नादेड निवासियो के लिए अपरिचित और नए थे। मुगल भी तो सिक्खो की भान्ति दाढी रखते थे। नया आदमी भुलावे मे पड जाता था। वह समझने लगता कि यह भी मुगलो का ही कोई नया कबीला है। सिक्खो का वेश मुगलो से मिलता-जुलता था, इसलिए अपरिचित आदमी इनको जान नही पा रहे थे। पर नादेड मे काना-फूसी अवश्य होने लगी और बडे-बूढे परस्पर कहने लगे कि जब से यह डेरा यहा लगा है तब से एक भी गाय जबह नही हुई। शराब की कोई दुकान

लूटी नहीं गई। किसी की बहू-बेटी से इन नीले वस्त्र वालों ने कभी हंसी या दिल्लगी नहीं की। अवश्य ही ये भले आदमी हैं। बुरों में कुछ अच्छे भी होते हैं। पांचों उंगलियां एक सी तो नहीं होतीं। यदि ये सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे होते तो प्रलय मच जाती। इसी उलझन में कई दिन निकल गए। इनके विषय में किसी ने पता लगाने तक की चेष्टा नहीं की। लोग मुगलों से मिलना-जुलना पाप समझते थे। मुगल हर समय ताक में लगे रहते। समय पर गधे को भी बाप बना लेते। समय निकल जाने पर किसी को साला भी न कहते। इसी लिए नादेड़ निवासी उनसे डरते रहते। मुगलों को मित्र बनाना दरवाजे पर हाथी बान्धना था। उनके लिए शराब और कबाब भी ये लोग पूरा नहीं कर पाते थे। मालगुजारी इतनी अधिक देनी पड़ती थी कि जनता वर्ष भर के लिए बाल-बच्चों के लिए दाने भी नहीं रख पाती थी। चैती फसल अभी पकने भी नहीं पाती थी कि सिपाहों की दृष्टि अगहनी फसल पर लग जाती। पथरीली जमीन में हल की ताकत नहीं चलती, प्रकृति का प्रताप ही काम करता है। जनता इतनी सुखी नहीं थी कि वह मुगलों से मित्रता गांठ लेती। खानखानाओं के घर खान ही मेहमान जचते। शराबी और कबाबी मुगलों की चण्डाल चौकड़ी अपने ही में रची रहती।

गोदावरी के तट पर सिक्खों के डेरे को जमे कई दिन बीत चुके थे पर नादेड़ निवासियों की शंका अभी तक दूर नहीं हुई थी। डेरे वाले भी उन से खुलकर बातचीत नहीं करते थे। किन्तु कहीं-कहीं सिक्ख मन्दिरों में आने-जाने लगे थे। धीरे-धीरे कथा वार्ताओं में भी सिक्खों की उपस्थिति बढ़ने लगी। नादेड़ निवासियों को कुछ-कुछ भरोसा हुआ, उड़द के दाने पर की सफेदी जितना। यह डेरा हिन्दुओं का ही मालूम होता है। पंजाब के निवासी मुगलों का पहनावा पहनने लगे हैं। कोई-कोई सिक्ख नादेड़ निवासियों को गुरु गोविन्द सिंह जी का जीवन चरित्र भी सुनाता, तब नादेड़ निवासी दांतों उंगली दबाकर स्तब्ध हो जाते। आश्चर्य से उनकी जिह्वा पथरा जाती। उन्हीं में से कोई प्रश्न करता—'यदि इन्होंने ऐसे ही बलिदान किये हैं तो मुगलों के साथ इनकी सांठ-गांठ कैसी? अमृत का मद्य से मेल कैसा! तपस्वी और वेश्या का संग-साथ कैसा! पुजारी और चण्डाल का भाई-चारा कैसा! साधु और चोर की यारी कैसी!'

—'गुड़ से मरने वाले शत्रु को विष देने की आवश्यकता नहीं होती। उनका साथ देना ही राजनीति है। उनके साथ रहकर उनकी कमजोरियों पर काबू पाया जा सकता है और फिर उनकी गर्दन मरोड़ देना बाएं हाथ का खेल है। सांप भी मरे और लाठी भी न टूटे। इन्होंने बहादुरशाह की सहायता करके उसे दिल्ली का बादशाह बना दिया किन्तु इससे हमारे घावों पर मरहम-पट्टी नहीं हुई, बल्कि वे मवाद से और भी भर उठे हैं। मवाद के भरने से उनकी जलन

हो रही है। जो हाथ बहादुरशाह के सिर पर दिल्ली का ताज रख सकता है यह ताज उतार भी सकता है और शाह के हाथ मिट्टी का प्याला भी थमा सकता है। जब हम उनकी कमजोरियों की जड़ें ढूँढ लेंगे तो फिर जो भूलें हम कर चुके हैं उनकी पुनरावृत्ति न होगी। मुगल राज्य के समस्त भेद हम जान चुके हैं। अब उसकी शाखाएं नहीं काटना चाहते, बल्कि हमुए से उसे जड़-मूल से ही काट लेना चाहते हैं।' एक सिक्ख वीर नादेड़ वासियों से कह रहा था।

—'शतरंज का खेल है। चतुर खिलाड़ी के हाथ जीत रहती है। जो जरा सी चाल से चूका यह मात खा गया। कारागार के दरवाजे खुल जायेंगे, अन्याचार के पहाड़ ढहने लगेंगे। गरम-गरम सड़सियों से मांस नोचा जायेगा। ऐसी ऐसी यातनाएं पहुंचाई जाएगी कि उससे न जीते बनेगा न मरते ही।' बूढ़े यात्री द्वारा ये शब्द नादेड़ निवासियों से कहे बिना न रहा गया।

—'बाबा! माला फेरने वाले हाथों में इतना बल! चंदन के टीके में क्रोध की ज्वाला! गेरुए वस्त्र में राजनीति का भण्डार! कुटिया में अलौकिक ज्योति! पूजा-पाठ करने वाले को शतरंज की चालों का इतना ज्ञान! मुगल शाही के आतंक ने कहीं राजगुरु को तपस्वी तो नहीं बना दिया।' एक परिचित नादेड़ निवासी ने राजगुरु से कहा।

बूढ़े यात्री ने आवेशपूर्वक कहा—'नहीं! अत्याचार मनुष्य को नीति का सहारा लेने के लिए विवश करता है। माला के मनकों पर रीझ उठने वाले हाथ तलवारों के दस्तों पर भी रीझ सकते हैं। कमण्डल पकड़ने वाले हाथ ढालें भी मजबूती से थाम सकते हैं। छैनों की झनकार सुनने वाले तलवारों की झनझनाहट पर भी नाच सकते हैं। गेरुए वस्त्रों में से शस्त्रधारी राजपूत सिर निकालेंगे! मूसल में से चिनगारियां निकलकर खलिहान फूंक डालेंगी। यदि इन्हें कोई अगुआ मिल जाये तो।' बूढ़े यात्री के मस्तक पर तेज चमक रहा था। उसकी दाढ़ी के बाल हवा में उड़ रहे थे। नादेड़ निवासी बूढ़े की बातों पर आश्चर्य प्रकट कर रहे थे।

—'यह तो एक साधारण-सा साधु था जो कभी किसी से बात तक नहीं करता था! सिक्खों ने न जाने कैसा मंत्र फूंक दिया है कि गोदावरी की लहरों में से तूफान के गोले फूट रहे हैं।' एक नादेड़वासी ने दूसरे से कहा।

—'*गोदावरी में फूल भी प्रवाहित किये जाते हैं और कांटे भी। राख भी फेंकी जाती है और अंगारे भी। अंगारों की आँच गोदावरी ठंडा कर देती है।* गोदावरी के तट पर साधू भी बसते हैं और छिपे हुए राजपूत भी, जो मृत्यु के भय से नाक में नकेल डाले धूनी रमाये और माला पहने हुए बैठे हुए हैं। समय गीदड़ों की खालें उतरवा कर सिंहों को जन्म देगा।' बूढ़े यात्री के बोल फिर गूंजे।

धीरे-धीरे वृद्ध यात्री की सिक्खों के साथ घनिष्ठता हो गई। डेरे वाले सिक्ख उसे जानने लगे। वृद्ध ने दो-चार बार गुरु गोविन्द सिंह जी के दर्शन तो किये, परन्तु उनसे खुलकर कभी बातें न कर सका। सन्देह दोनों हृदयों में था। वृद्ध सिक्खों को मुगलों का भेदिया समझता और सिक्ख-सरदार बूढ़े को मुगलों का दूत। सिक्खों का भय तो एक सीमा तक सही था पर बूढ़ा भी अपनी जगह सच्चा था। वह यह जानता था कि मुगलों ने इन पर घोर अत्याचार किये हैं। किन्तु बहादुरशाह के साथ इनके हम-नेवाला होने की बात से उसका मन डाँवाडोल हो जाता। वृद्ध कभी सोचता कि हो सकता है कि गुरु गोविन्द सिंह का साथ सिक्खों ने पंजाब में छोड़ दिया हो और उन्हें अपनी जान के लाले पड़ जाने के कारण मुगलशाही की अधीनता स्वीकृत करनी पड़ी हो। उस बहादुर जरनैल को मुसलमान बनाने का जाल बिछाया जा रहा हो। बहादुरशाह उन्हें अपने साथ लिये घूमता रहा अपने ठाट-बाट से प्रभावित करने के लिए। मुगल निराश होने पर किसी न किसी तरह शत्रु को मित्र बना लेते हैं। कुछ समय बाद फिर वे उसी की जान के दुश्मन बन जाते हैं। मुगल और दोस्ती! विष और अमृत के मेल की बात! बूढ़ा मन ही मन छटपटा जाता। अन्त में बूढ़े ने पानी और दूध को अलग-अलग करने की नीयत से एक सिक्ख सरदार से कहा—'आप लोगों पर बहादुरशाह इतनी जान क्यों देता है। इसमें कौन सा रहस्य है। जब तक यह रहस्य नहीं खुलता तब तक हम अपने दिल के गुबार नहीं निकाल सकते। जब तक हमारे अन्दर गुबार हैं हम आप के निकट नहीं आ सकते। आप लोग पहले मेरी शंकाओं का समाधान करें।'

—धर्म की खातिर! देश की स्वतन्त्रता के लिए! मुगलों के अत्याचारों को समाप्त करने के लिए सबसे पहले गुरु-घर से ही आन्दोलन छिड़ा था। बाबर के शासन काल में इस आन्दोलन का नेतृत्व गुरु नानक देव जी के हाथों में था। लोधियों से टक्कर लेने वाला कौन था—गुरु नानक! हुमायूं उमर भर दौड़ता भागता फिरा। कई रातें उसने घोड़े की पीठ पर ही गुजारीं। शेरशाह सूरी ने भी उसकी जान संकट में डाल रखी थी किन्तु उस मरद के बच्चे ने हिम्मत न हारी। अकबर ने सिक्खों की ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाया। उसकी सिक्खों से शत्रुता तो थी परन्तु थी वह मित्रता के आवरण में छिपी हुई। सिक्ख भक्ति के पूरे रसिया थे। उन्हें विवश होकर देश की राजनीति में प्रविष्ट होना पड़ा। आध्यात्मिक जीवन में राजनीति का पुट देने के लिए गुरु अंगद देव जी ने लंगर की प्रथा चलाई थी कि जिसमें सब हिन्दू एकत्र होकर एक स्थान पर बैठें और अपनी बिखरी हुई शक्ति को बटोरें। लंगर का मूल राजनीति की बुनियाद थी। उसमें आध्यात्मिक उन्नति के साथ-साथ अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाने की प्रेरणा भी दी जाती थी जिससे प्रेरित होकर अत्याचार का गला घोंट दिया जाये। गुरु रामदास जी अमृतसर

मे गुरु हरिदास जी के उत्तराधिकारी थे। जहाँगीर का बेटा खुसरो जब बागी होकर पंजाब की ओर भागा तब गुरु अर्जुनदेव जी ने उन्हें शरण दी। जहाँगीर की आँखों मे गुरु अर्जुनदेव जी इसलिए बहुत अधिक खटकते थे कि गुरु ग्रन्थ साहब जब अवतीर्ण हो चुके तब किसी ने जहाँगीर से चुगली खाई कि ग्रन्थ साहब म इस्लाम के विरुद्ध श्लोक हैं। जाच करने के पश्चात् जहाँगीर ने गुरु जी से पैगम्बरों के विषय मे भी कुछ ग्रन्थ साहब मे लिखने को कहा। उस समय गुरु अर्जुन देव ने धीरतापूर्वक उत्तर दिया—गुरु ग्रन्थ साहब मे जो कुछ लिखा गया है, वह अकाल पुरुष की प्रेरणा से ही लिखा गया है। मैं किसी और शक्ति को प्रसन्न करने के उद्देश्य से उसमे कुछ घटा-बढा नही सकता। इस उत्तर से जहाँगीर जल-भुन गया। वह मन म सोचने लगा कि यह दुस्साहस अब किसी दिन हुकूमत के विरुद्ध खडा हो सकता है। इसलिए इसका सिर कुचल देना राजनीति है। चद्दू दीवान से कौन-कौन से उपद्रव नही करवाये गये। जिनके कहने से पाप भी थर्रा उठता है। खौलती देग मे गुरु अर्जुन देव को उबाला गया। जलते तवे पर बैठाकर उन पर तप्त बालू की वर्षा की गई। अन्त म उन्हें गाय की खाल मे मढ देने का दण्ड मिला। पवित्रता के देवता स्नान का बहाना करके रावी नदी की ओर गये और उसम ऐसी डुबकी लगाई कि फिर कभी बाहर न निकले। इस बलिदान ने सिक्खो म नई शक्ति भर दी।

—'गुरुगोविन्द सिंह साहब ने गद्दी पर बैठते ही दो तलवारें बाँध ली। एक तो जुल्म से बदला लेने के लिए और दूसरी कुफ और हजरत की करामतें झूठी सिद्ध करने के लिए। सिक्ख नये रूप म प्रकट हुए। गुरु गोविन्द सिंह जी ने अपने आप को सच्चा बादशाह कहलवाया तथा अपनी गद्दी को अकाल भोगा (जिसे काल नष्ट न कर सके) और इजलास को दरबार का नाम दिया। नजराने को कर कहना प्रारम्भ करवाया। विधि चर जैसे गुरु-सेवक बन गये। लाहौर मे दरबार की इतनी धाक जमी कि काजियो की बेगमें भी मुग्ध हो गईं। कौलसर इसका जीता-जागता प्रमाण है। जहाँगीर बहुत चालाक था। वह गुरु-घर से दुश्मनी मोल लेना नही चाहता था। अन्दर ही अन्दर उसे खोखला करने का विचार रखता था। एक बार वह गुरु हर गोविन्द जी को अपने साथ काश्मीर ले गया। रास्ते मे किसी बात पर उनसे विगड उठा और उन्हें बन्दी बना कर ग्वालियर के किले मे भिजवा दिया। इस घटना के तुरन्त बाद ही जहाँगीर बीमार पड गया। गुरु हरगोविन्द जी को बन्दी बनाना ही उसने अपनी बीमारी का कारण समझा। तत्काल उनकी रिहाई की आज्ञा दे दी। पर गुरु जी ने रिहा होने से इन्कार कर दिया। उन्होने अपनी रिहाई की शर्त यह रखी कि इस किले मे जितने बन्दी राजा मेरे चोले को थामकर चल सकें वे सब मेरे साथ रिहा किये जाएं। जहाँगीर को यह बात माननी पडी। इस प्रकार अनेक राजा रिहा होकर गुरु हरगोविन्द जी के सेवक हो गये। सिक्खों के पैर जमने की यह दूसरी विजय थी।

—'दारा शिकोह गुरु हरगोविन्द सिंह जी की शरण में आया और कुछ दिन अपने क्रूर भाई औरंगजेब के खूनी हाथों से बचा रहा। औरंगजेब जब तख्त का मालिक हुआ तब उसकी दृष्टि गुरु-घर पर पड़ी। राणा राजसिंह के विरुद्ध इस्लाम ने जहर उगला। उदयपुर में राजसिंह ने इस बात पर अपने प्राण त्याग दिये। उसके बाद राजपूतों की गैरत पर चोट लगी। औरंगजेब दक्षिण तक शिवाजी का पीछा करता रहा। सतनामी सम्प्रदाय का सिर कुचल दिया गया। दिल्ली के चाँदनी चौक में गुरु तेगबहादुर साहब को इस्लाम के मोमिनों ने शहीद किया। इनके शहीद होने पर जाति और देश में जागृति हुई। गुरु गोविन्द सिंह ने सबसे पहले अपने पिता की आहुति दी और उसके बाद अपने चारों बच्चों की।

गुरु तेग बहादुर साहब का सिर और धड़ चाँदनी चौक में पड़ा हुआ था। कोई सिक्ख उस सिर और धड़ को उठा लाने का साहस नहीं कर सका। भूले-बिसरे कोई सिक्ख उधर यदि चला भी जाता तो उसे मुगल पकड़ लेते। वह प्राण भय से अपने को सिक्ख कहने से इन्कारता। इस कमजोरी को दूर करने के लिए श्री गोविन्द सिंह जी ने कोट नैना देवी (आधुनिक आनन्दपुर साहब) नामक स्थान पर एक यज्ञ रचाया। उसमें कई प्रकार की आहुतियाँ दी गईं। सन् १७५२ की पहली जनवरी के दिन पंजाब में वैसाखी का त्यौहार मनाया जा रहा था और कोट नैना देवी में यज्ञ की अन्तिम आहुति देने का प्रबन्ध हो रहा था। दरबार सजा हुआ था। सिक्खों में जोश की उमगें हिलोरें ले रही थीं। कौन जानता था कि यह आहुति भारतवर्ष के इतिहास का नया पृष्ठ उलटेगी। गुरु गोविन्द सिंह जी पुराणों के ज्ञाता थे। पुराणों की एक-एक बात ने गुरु गोविन्द सिंह जी के हृदय को प्रकाशित कर दिया था। उन्होंने आहुति को एक नया रूप देने का प्रयत्न किया। कोई नहीं जानता था कि उस दिन क्या होने वाला है। गुरु गोविन्द सिंह जी की आँखों के आगे अतीत भारत के चित्र नाच रहे थे और जनता चुप बैठी हुई थी।

—'किसी समय भारत में नास्तिकों का बहुत जोर था। कोई ईश्वर का भक्त नजर नहीं आता था। हिन्दू धर्म डोल रहा था। पूजा-पाठ बन्द हो गये थे। धर्म अधर्म में परिवर्तित हो गया था। उस समय यदि ऋषि और पण्डित साहस से काम न लेते तो हिन्दू धर्म का डमरू बज जाता। उन नास्तिकों का अन्त तो होता पर साथ में भले लोग भी बह जाते। वे नीतिवान ब्राह्मण थे। उन्होंने आबू पर्वत पर यज्ञ रचाया। आश्रमों में निमन्त्रण भेजे गये, साधु-सन्तों ने समाधियाँ तोड़ीं और वे सब उमंग में भरकर उस यज्ञ में आहुति प्रदान करने के लिए आ पहुंचे। इनमें क्षत्रिय भी थे, राजे और महाराजे भी थे। ऋषियों के यज्ञ में देश के कोने-कोने से रजवाड़े भी पहुंचे थे। यज्ञ में भाँति-भाँति की आहुतियाँ दी गईं पर किसी भी आहुति का प्रभाव प्रकट न हुआ। अन्त में यज्ञ के होता ने अपने

शरीर की आहुति दे दी। वही उस यज्ञ की पूर्ण आहुति थी। ऋषि काँप उठे। रजवाड़ों को ठेस लगी, क्षत्रियों की आन को ललकारा गया। उन्होंने इस पवित्र अग्नि के सामने प्रतिज्ञा की कि हम अपने धर्म और देश पर अपने प्राण न्योछावर करेंगे। ऋषियों के उपदेशों ने क्षत्रियों की तलवारें म्यानों से निकलवा दीं, और वे क्षत्रिय सिर-धड़ की बाजी लगाकर मैदान में कूद पड़े। जिस नास्तिक की गर्दन पर तलवार का वार होता वह आस्तिक के गले की माला में पिरोया जाता। उन अनख वाले युवकों को अग्नि कुल वाले राजपूत के नाम से लोग पुकारते थे। उन राजपूतों ने एक बार तो अपने देश में धर्म की जय का डंका बजा ही दिया और पुन. अपना राज्य प्राप्त कर लिया। वही गाथाएं गुरु गोविंद सिंह जी की आँखों में अपने साकार रूप में घूम रही थीं। अन्त में गुरु गोविन्द सिंह जी तम्बू में निकल कर मंच पर आये। उनके माथे पर बल पड़े हुए थे और नेत्र रक्त पूर्ण हो रहे थे। जिन्हें देख कर उपस्थित जन-समूह थर्रा उठा। गुरु जी ने खड्ग को बाहर निकाला और भीड़ को सम्बोधित करते हुए कहा—

—'शक्ति देवी को प्रसन्न करने के लिए मुझे पाँच सिक्खों की आवश्यकता है। कौन है अपना सिर देवी का भेंट चढ़ाने के लिए प्रस्तुत।'

सभा में सन्नाटा छा गया। भीरु खिसकने लगे। सबको साँप सूंघ गया। किसी की जबान तक न हिली, किसी के होंठ तक न खुले। खामोशी की सूई ने सबके होंठों को टांक दिया। खामोशी के ताले लाहौर के एक दया सिंह खत्री ने तोड़ते हुए कहा—'मैं इस बलिदान के लिए प्रस्तुत हूं।' जन-समूह ने आँख ऊपर उठाई। दया सिंह के पीछे चार और सिक्ख युवक खड़े हो गये। उनमें से एक नाई, दूसरा कहार, तीसरा मछुआ और चौथा धोबी था। सिक्खों को सरकार कहा जाता था। रण क्षेत्र की ज्वाला से निखरा हुआ सूरमा ही विजय मुकुट धारण करता है और गाल बजाने वाले उसके बाराती बनते हैं। इस ऊंच-नीच के कुण्ड में से एक नये अग्नि कुल ने जन्म लिया। बैसाखी वाले दिन से उस अग्नि कुल को खालसा कहा जाने लगा। अछूतों में से उत्तम राजपूत पैदा हुए। सम्भव था कि ब्राह्मण उन्हें अपनी जाति में न रखते और उन्हें ऊंच आसन पर न बैठाते। सहसा ब्राह्मण और क्षत्रियों को यज्ञोपवीत उतार देने के लिए कहा गया।

नीतिवेत्ता गुरु गोविन्दसिंह जी ने सबके यज्ञोपवीत उतरवा उन्हें तलवारों के परतले पहनवा दिये और जन-समूह को ललकारते हुए कहा—'सूत के तागे अब गल चुके हैं। उनमें कायरता की मैल भर गई है। इन्हें उतार दो और तलवार के परतले पहन लो और तलवार की छत्र-छाया में जनेऊ की रक्षा करो। सूत के तागे अपने आप मजबूत और पक्के हो जाएंगे।'

'उसी दिन खालसा पंथ का जन्म हुआ। खांडे की धार का अमृत पीकर कायरों और भीरुओं के हृदयों में भी बहादुरी की ज्वाला फूट पड़ी। पीले वाने-

—'तुम दक्षिण देश के निवासी तो नही दीखते ! इधर कैसे आ निकले।' सत् गुरु गोविन्दसिंह जी ने पूछा।

—'भावी के चक्र ने दक्षिण की ठोकरें खाने के लिए विवश कर दिया है। सतगुरु !' यात्री के नेत्र आँसुओं से भर आये। वह कहने लगा—'मैं उन सतनामी साधुओं मे से हूँ जिन्होने दिल्ली मे औरगजेब के विरुद्ध आदोलन खडा किया था। उन दिनो मे मैं जवान था। दाढी-मूछ अभी फूटी नही थी। वह दृश्य अब भी मेरी आँखो के सामने नाच रहा है, जब युवराज दारा दिल्ली मे बन्दी बनाकर लाया गया था और हाथी के पीछे जजीरो से जकडकर सडको पर घसीटा गया था। ठीक उसी दिल्ली मे जिसमे उसकी आज्ञा के बिना चिडियाँ भी नही फडफडाती थी। उस दिन वही दारा बन्दी के रूप जा रहा था। उसका चेहरा उस अवस्था मे भी फूल की भाँति मुस्करा रहा था। युवराज बन कर उसने शहनशाह बनने के स्वप्न भी देखे थे। फकीर बनकर त्यागी की पदवी भी प्राप्त कर ली थी। दिल्ली के चाँदनी चौक की ओर बादशाह सलामत की सवारी जा रही थी और उसी के हाथी के पीछे दारा जजीरो म बधा हुआ खिचा आ रहा था। चाँदनी चौक म हुए उसके कत्ल ने दिल्ली का कलेजा हिला दिया। मेरे दिल पर उस दृश्य ने आघात किया और मैं क्रांतिकारी बन गया। औरगजेब के जुल्म ने शाहजहाँ को भी बन्दी बना दिया था। और उस बेचारे को आगरे के लाल किले मे एडियाँ घिस घिसकर प्राण त्यागने पडे थे। दारा के साथी भी पकड-पकडकर तथा चुन-चुन कर मारे गये। दिल्ली मे दारा का नाम लेना घोर अपराध था।

दिल्ली के चाँदनी चौक की दीवारो पर दारा का रक्त अभी सूख भी नही पाया था कि मुगले शाही ने हिन्दुओ पर जजिया लगाने का एक नया शोशा छोडा। देश के कोने-कोने म हिन्दू काँप उठे। दक्षिण मे शिवाजी ने उसके विरुद्ध सिर उठाया। राजपूताने का राजसिंह विद्रोही बन बैठा। सतनामी साधुओ ने गाँव-गाँव म ढोल पीटे। साधुओ के झुण्ड के झुण्ड दिल्ली की ओर उन्मुख हुए। सतनामी साधु शान्तिपूर्वक सत्याग्रह करना चाहते थे। वे खप्पर छोडते धूनी त्यागते तब कही जाकर खड्गो के दस्ते पकड सकते थे। यह उनके किए नही हो सकता था। वे त्यागी थे। एक बार रावण ने भी साधु-सन्तो पर कर लगाया था। वैसा ही कर मुगलेशाही ने साधु-सन्तो पर मढ दिया। वे कर देने के अभ्यस्त नही थे। शीघ्र ही भडक उठे और उनके पीछे साधुओ की टोलियाँ और जनता की बाढ आने लगी। सम्पूर्ण दिल्ली सतनामी साधुओ से भर गई।

—'मेरा विवाह कुछ ही दिन पहले हुआ था। हम लोग साधु भी थे, गृहस्थ भी। हम बादशाह के हुजूर म अरज करना चाहते थे। बादशाह हमारा एक शब्द भी सुनने को तैयार न था। शाही किले की ओर बादशाह की सवारी आ रही थी। बादशाह झूमते हुए हाथी पर बैठा था। झिलमिल-झिलमिल

करती हुई सवारी आगे बढ रही थी चांदनी चौक के मैदान में। जिसमें एक दिन दारा के रक्त की धारा देखकर औरंगजेब का मन नहीं पसीजा था, उसके हृदय में भातृ-प्रेम नहीं जगा था, हुकूमत के नशे में उसने आँख तक न उठाई थी। और जहाँ तपस्वी और त्यागी उस तेग बहादुर का सिर धड से अलग कर दिया गया था। आज वहाँ, उसी मैदान में सतनामी साधु बादशाह के हुजूर में अरज करना चाहते थे। शाही फौज ने साधुओं की दाल न गलने दी। साधु किसी प्रकार बादशाह सलामत की सवारी रोक कर खडे हो गये और कहने लगे—

—'बादशाह सलामत! हम लोग भगवान् की भक्ति करते हैं कोई व्यापार या खेती-बाडी नहीं। जब कुछ कमाते नहीं तब हम जजिया कैसे दे सकते हैं। धूनी तक के लिए हम लोग जंगल से लकडियाँ इकट्ठी करते हैं। कर चुकाने के लिये पैसे हमारे पास कहाँ से आवेंगे।"

—'बदतमीज कुत्तों को बकने दो, महावत! हाथी बढाते चलो! शाही फरमान रोका नहीं जा सकता।' हाथी पर बैठा हुआ औरंगजेब बडबडा रहा था।

'हाथी आगे बढने लगा। सतनामी साधु सत्याग्रह के उद्देश्य से उसके मार्ग में लेट गये। हाथी के पैरों तले कई सतनामी साधुओं ने अपने प्राण त्यागे। हाथी जैसे-जैसे आगे बढता गया वैसे-वैसे सतनामी साधु सत्य की रक्षा के लिए बढ-बढकर अपने प्राणों की आहुति देते गये। महावत का अंकुश हाथी के भाल पर गड रहा था। उसके पैरों तले सतनामी साधुओं की हड्डियाँ चूर-चूर होती जा रही थी। खून से लाशें तर-बतर हुई, पर रास्ता साफ न हुआ।

शाही फौज ने कत्ले आम ही नहीं किया, बल्कि यमुना के तट पर सतनामी साधुओं की झोंपडियाँ भी लूट ली। लौटते समय वे महमूद की तरह उन्हें जला भी गये। उस अत्याचार का प्रहार मुझ पर भी हुआ। मेरी झोंपडी फूंककर राख कर दी गई।

'सतनामी साधु घर फूंक तमाशा देख रहे थे। मैं गिरता-पडता अपनी झोंपडी की ओर बढ रहा था। रास्ते की कुछ झोंपडियाँ आग की लपटों में थी। और कुछ में से आग के अङ्गारे निकल रहे थे। झोंपडियों में बच्चों और स्त्रियों की लाशें भस्म में थी। मुझे अपनी झोंपडी का सुराग भी आखिर मिल गया। मेरी नव-विवाहिता पत्नी का शव झोंपडी में पडा हुआ था। उसकी चोली फटी हुई थी। उसका एक स्तन काट दिया गया था। उसकी साडी खून से लथ-पथ थी। मेरी अभिलाषाओं की कमर टूट गई। पागल कुत्तों की तरह सिपाही अभी झोंपडियों में घूम रहे थे। मुर्दों में मुर्दा बन कर मैंने अपनी जान बचाई।

'वहाँ से जान बचाकर मैंने राजपूताने में जा शरण ली। शाही फौज उदयपुर के बाजार में खून की होली खेल रही थी। वहाँ भी मेरे सींग न समाये। कुछ उदासी साधुओं के साथ मैंने भी रामेश्वर की राह पकडी। जब

मैं नादेड पहुचा तब तक मैं साधु बन चुका था। यहाँ मुझे कोई नही जानता था कि मैं सतनामी साधुओ के दल का हू। दिल्ली मे आज ढूढने पर भी एक सतनामी साधु नही मिलता।

—'किसी चीज के बीज का नाश नही होता, फिर भी सतनामी साधु सिर उठाकर यह नही कह सकते थे कि हम सतनामी साधु हैं। हमारे सिरो का मूल्य पड़ा। इनाम रखे गए। मेरे सिर के लिए ५००० मोहरो का इनाम था। वास्तव मे मैंने आलमगीर का कुछ भी नही बिगाड़ा था। पर हा, जहा जाता वहा उसके विरुद्ध बगावत के बीज बोता जाता। जो अब फुलवारी के रूप में लहराने लगे हैं। अपने हाथ से लगाए गए पेड का फल चख कर अत्यधिक आनन्द मिलता है। मेरे उस समय के साथी राजपूताना, दिल्ली, आगरा, वृन्दावन, मथुरा के मन्दिरो मे तिलकधारी पुजारियो के रूप मे छिपे बैठे हैं। शाही फौज के टहलुओ मे भी कई सतनामी छिपे हुए हैं। मुगल हमारे खून के प्यासे हैं। मेरे द्वारा बोया हुआ बीज धरती में नही रह सकता, आन्धी, बवडर उस पर मिट्टी की तह नही जमा सकते। वह धरती को फोडकर उसी तरह उगेगा जिस तरह चौमासे में कुकरमुत्ता धरती की छाती चीर कर निकलता है।

'चढते हुए सूर्य को सब नमस्कार करते हैं, डूबते सूर्य का कोई मुँह देखना भी पसन्द नही करता। यही अवस्था हमारी हुई। छोडिए इन पुरानी बातो को! अब हम इस समय के लिए उपाय सोचना चाहिए। मुगल हुकूमत के विरुद्ध कदम उठाने पर क्या बहादुरशाह से आपका भाई-चारा टूट तो नही जाएगा। हमारा कदम अपनी रक्षा के निमित्त ही होगा पर टक्कर तो मुगल सम्राट् से ही होगी। बहादुरशाह की छाती पर साप रेंगने से नही रुकेगा। अपने मन्दिर आबाद कराने के लिए आवाज उठाएगे, तब हमें बहादुरशाह के किसी भाई, बहनोई या साले से टक्कर लेनी होगी। उसका दर्द तो बहादुरशाह ही को होगा।' बूढे यात्री ने अपना मुँह घुमाते हुए कहा।

—'आजमशाह को हम लोगो ने अपने हाथो से मारा। रुस्तम दिलखा द्वारा हमने उसका सिर बहादुरशाह के पास भिजवाया। पर जब हमने अपनी शर्त के अनुसार कुछ सूबेदारो और सरदारो को हटाने के लिए कहा तो बहादुरशाह ने गदर के भय से इन्कार कर दिया। भले ही वह हमारी इज्जत करता है पर खिलाडी की चाल समय पर ही प्रकट होती है। हम सूबेदारो से बच्चो के रक्त का बदला लेना है। तब तक हमारी आत्मा को शान्ति नही मिल सकती जब तक सूबेदारो और सरदारो के जुल्म का चक्कर चलता रहेगा। हमें जागीर की इच्छा होती तो बहादुरशाह हमें सम्पूर्ण पजाब दे देता। हम जागीर नही, न्याय चाहते हैं। खुदा की खुदाई में देर है, अन्धेर नही। बहादुरशाह की नजरो मे शारीरिक बल अधिक महत्त्व रखता है। उसे ईश्वर की शक्ति पर विश्वास नही है। ऐसे आदमी का विश्वास करना अपने को

दधारी तलवार पर नचाना है। कायम बख्श आज भी विद्रोही है। उसके साथियों का नंगा नाच आपने कल देखा ही है। कायम बख्श के भाले के हाथी के पांव के नीचे ही गोपालन ने दम तोड़ा था। आप सोचते हैं कि कायम बख्श सीधी तरह हैदराबाद बहादुरशाह के हवाले कर देगा? कदापि नहीं! जीती हुई चीज़ क्या चुप-चाप भी किसी के हवाले करता है? मुगल त्यागी और तपस्वी नहीं। लालची, ऐयाश और दौलत के पुजारी हैं। अभी हैदराबाद की ईंट से ईंट बजेगी। सहस्रों निर्दोष सिपाहियों का खून तलवारें जब तक नहीं चाट लेती तब तक बहादुरशाह गोलकुण्डे की सैर नहीं कर सकता। हीरों की खान कायम बख्श किसी प्रकार बहादुरशाह को नहीं सौंप सकता है।'

गुरु गोबिन्द सिंह की आंखें लाल हो गईं। क्षण भर के लिए वे चुप हो गए।

—'सतगुरु! मैं सतनामी साधुओं को एकत्र कर जत्था बनाऊंगा।' वृद्ध ने कहा।

—'पुजारी जो कुछ तुम सोच रहे हो, वह सब कुछ मन्दिर की बहार दीवारी का अड़ोस-पड़ोस ही है। तुम नीतिवेत्ता तो अवश्य हो परन्तु नीतिवान् नहीं। तुम नीले लत्ते के छोर में बावन बान्धकर तारों की-सी जगमगाहट देखना चाहते हो। बुढ़ापे में मूछों को बल देकर जवानों की-सी हुंकार भरना चाहते हो। चार-पांच मशालें लेकर चांदनी रात का जोबन लूटना चाहते हो। झूठे नगों को हीरों के साथ पलड़े पर रखकर क्या हीरों का अपमान करना चाहते हो? कच्ची गुच्छ शहतूत की भांति झूला नहीं झुला सकती। माला के मनकों पर रक्त की रंगत चढ़ाना मुश्किल होता है।" गुरु गोबिन्द सिंह कुछ रुष्ट होकर वृद्ध से कह रहे थे।

—'यात्री! हमने रास्ते में दादू पन्थी नारायणदास से सुना था कि माधोदास बैरागी घर आए साधु-सन्तों की निन्दा करता और हंसी उड़ाता है। यह कहां तक सत्य है?' एक सिक्ख ने प्रश्न किया।

—'यह कौन नई बात है। वह करने वाले की करनी परखता है। जब वह जान लेता है कि साधु उसके चमत्कार का मुकाबला नहीं कर सकता तब वह ठट्ठा करने से बाज नहीं आता। साधु हाथ-पैर तुड़वाकर वहां से लौटते हैं। कोई जल्दी उसके आश्रम पर जाने का साहस नहीं करता। इसीलिए उसका दबदबा पठानों पर छा गया है। बीर (एक प्रकार की प्रेत-योनि) उसके बस में है। शक्ति उसकी भुजाओं में है। भले ही मैं उसका गुरु हूं पर वह मेरी भी हंसी उड़ाने से नहीं चूकता। बैरागी पर यदि वीरता का पानी चढ़ा दिया जाए तो वह फौलादी तलवार का काम दे सकता है। उसमें फौलाद के सभी गुण हैं। अवगुण केवल एक है। वह यह कि वह त्यागी बन चुका है। उसने अपने आपको भुला दिया है। वह यह भी भूल चुका है कि मैं राजपूत हूं।' बूढ़ा यात्री अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए कह रहा था।

—'कल हम लोग उसके आश्रम मे चलेंगे। ऐसे महापुरुष के दर्शन भाग्यवानो को ही मिलते हैं। आप भी साथ चलेंगे ?' गुरु गोविन्द सिंह ने पूछा।

—'हा ! मैं भी समय पर पहुच जाऊगा।' पुजारी ने उत्तर दिया।

—'हम भी चलेंगे सतगुरु।' सिक्खो की आवाज थी।

—'तुम लोग भी देख लेना उस महापुरुष को। शायद वह तुम्हारा साथी बन जाए।' गुरु जी ने मन्द स्वर में कहा।

—'ब्राह्मण के कपडे पहनने पर भी चाण्डाल अपना चाण्डालपना नही छोडता। नीम न मीठी होय सींचो गुड घी सो। जाको जौन सुभाव छटै नही जी मा। नीम की निमोनी चाशनी म लाख बार पकाई जाने पर भी अपनी कडवाहट नही छोडती।' एक सिक्ख ने कहा।

—'आग म पडकर सोना कुन्दन हो जाता है। आग मे तपाई जाने वाली वस्तु निर्मल हो जाती है। (यात्री से) आपने अपना नाम तो बतलाने की कृपा नही की। गुरु गोविन्द सिंह जी ने पूछा।

—'नए चोले म साधु का नाम क्या ? मैं तो अपना नाम दिल्ली म ही छोड आया था।' बूढे यात्री ने उत्तर दिया।

'जिन्दगी के नए मोड पर मनुष्य का चोला परिवर्तित होता है और साथ ही उसका नया नामकरण होता है। दुल्हन नए घर आकर नया नाम पाती है। भटठी से निकला सोना कुन्दन कहलाता है। इसी प्रकार जनता किसी का नया नाम उसके कार्यों क आधार पर रखती है।' गुरु गोविन्द सिंह सोच रहे थे।

—'बहादुरशाह गोलकुण्डे म पहुच गया है।' एक पठान के ये शब्द थे। जो कह रहा था—'नियाज के देगो क मुंह खुल जाएगे। खशियो के बाजे बजेंगे। *कल हैदराबाद नई दुल्हन की तरह सज धज कर बन बैठेगी। हम लोग* बहादुरशाह को बधाई देने गोलकुण्डा जाना चाहते हैं। आप की अनुमति चाहते हैं। हम छुट्टी दी जाए।'

—'हम उस खुशी म सम्मिलित तो नही हो सकते और न यात्रा का कष्ट सह सकते हैं। हमारी ओर से बहादुरशाह को भेंट और बधाई दे देना।' गुरु गोविन्द सिंह जी क ये शब्द थे।

'जैसी आज्ञा महाराज !' यह कहकर पठान सिपाही ने झुककर अभिवादन किया और वहा से चला गया।

डेरे के लोग गोदावरी की ओर जा रहे थे, डूबते हुए सूर्य का दृश्य देखने के लिए। पक्षी विश्राम क लिए नीडो की खोज म थे। हल बैल लिये किसान घरो को लौट रहे थे। एक साधु एक तारे पर गा रहा था—साझ भई घर आओ मैना।

साथ का तम्बू तन रहा था, उसम साधु के बोल मन्द पड रहे थे।

४

□□□

बैरागी का आश्रम

सवेरा हुआ। शबनम सोए हुए फूलों का मुख चूम गई। उसके अधरों का स्पर्श फूलों के कोमल कपालों पर मोतियों की भान्ति बिखरा पड़ा था।

गुरु गोविन्द सिंह अपने शिष्यों के साथ गोदावरी के उस पार शिकार के लिए चल पड़े। शिकार में गुरु गोविन्द सिंह जी ने चार जीवित मृगों को पकड़ा और उनको साथ लिए हुए वापस लौट पड़े। जब बैरागी के मठ के सामने पहुंचे तो उनकी इच्छा उसी में कुछ समय के लिए विश्राम करने की हुई। उन्होंने अपने शिष्यों से कहा—'चलो आज यहीं घने पेड़ों की छाया में विश्राम किया जाए।'

घोड़े आश्रम में प्रविष्ट हुए। उन्हें अन्दर आते देखकर सेवादार ने कहा—'यह आश्रम है सराय नहीं।'

—'हां! हां! कौन कहता है यह सराय है! हमें भी यह आश्रम नजर आता है। हम लोग यहां थकावट मिटाने के लिए आए हैं। आश्रम सिर पर उठा ले जाने की नीयत से नहीं।' एक सिक्ख ने कहा।

—'माधोदास के आश्रम में शिकारियों के लिए स्थान नहीं! इसमें कोई मांसाहारी प्रवेश नहीं कर सकता। यह वीरों का आश्रम है। वीर वैष्णव होते हैं मांसाहारी नहीं। शिकारियो! यहां से चले जाओ। यदि बैरागी आ गया तो जान के लाले पड़ जाएंगे। बैरागी ऐसे किसी आदमी को क्षमा नहीं करता जो उसकी आज्ञा का उल्लंघन करता हो। गोदावरी के तट पर आकर मांस पकाओ और खाओ। वहां तुम्हें कोई रोकने वाला नहीं है।' दूसरे सेवादार ने कहा।

—'सुन्दर-सुन्दर पेड़ देखकर दिल ललचा उठा है। हम लोगों को यहां कौन-सा बैठ रहना है। धूप के जरा ढलते ही हम अपनी राह पकड़ेंगे।' एक सिक्ख ने नम्रतापूर्वक कहा।

—'ये मुगल नरमी से मानने वाले नही, इनका तो डण्डा ही पीर होता है। साथियो! डण्डे उठाओ और मार-मार कर इन्हे आश्रम से बाहर निकाल दो।' बैरागी के एक सेवादार ने कडकते हुए कहा।

दूसरे सेवादार ने कहा—'ये तो सिक्ख हैं, मुगल नही। ये हमारे पडोसी हैं। कई बार हम लोग इनके डेरे के आगे से निकले हैं। ये भले हैं। ये मासाहारी कदापि नही हो सकते। बैठिये सतगुरु! पलग बिछा हुआ है। हमने आप लोगो को मुगल समझकर कुछ कहा-सुना है। क्षमा करे। आप तो हमारे अपने ठहरे। हमारे अहो भाग्य जो आप यहा पधारे हैं। हम आपका स्वागत करते हैं।'

—'अरे! यह क्या?' पहले सेवादार ने पूछा।

दूसरे सेवादार ने जरा डरकर खाट की ओर सकेत करते हुए पहले वाले सेवादार के कान मे कहा—'हम क्या पडी है जो मुफ्त म झगडा मोल लें। हमारे पास अस्त्र जो है। शिकार फसा लिया है बच निकलना तो उसका भाग्य। चारो बीरो को जाकर उकसा दो। हड्डी-पसली टूटने पर इनकी हेकडी मिट जाएगी। इनके खाट पर बैठते ही तो बीर खाट उलट देंगे।'

पहला सेवादार—'वाह भाई वाह! तेरी सूझ-बूझ की दाद देनी पडती है। हीग लगे न फिटकरी रग चोखा आए।'

दूसरा सेवादार—'चेला तो बैरागी का ही हू। गुरु गुड ही रहा चेला चीनी बन गया वाली कहावत तुमने क्या नही सुनी! अच्छा मैं जाता हू और बीरो के कान मे फूक मारता हू। फिर देखना भभीरियो का चक्कर खाना।'

पहला—'बहादुरशाह इनका बहुत मान करता है। इस बात को जरा ध्यान म रखना। इनम कोई ऐसा गुण अवश्य है जिसके कारण बहादुरशाह इनका अनुयायी बना हुआ है। वैसे तो मुगल किसी से आख भी नही मिलाते।'

दूसरा सेवादार बीरो को उत्तेजित करने चला गया। उनके कुविचारो को गुरु जी ने उनके माथे के बलो से भाप लिया। चारो सेवादारो की कानाफूसी किसी शरारत की जड मालूम होती थी। बीरो ने आकर पलग को एक झटका दिया, जिसे अनुभव कर गुरु जी सम्भले। बीर दूसरा झटका देने की सोच ही रहे थे कि गुरु जी की आखो का इशारा पाकर सिक्खो ने चारो हिरनो के सिर एक-एक झटके मे धड से अलग कर दिए। हिरनो के झटकाए जाने से बीरो की कमर टूट गई, किन्तु उन्होने किसी प्रकार दूसरा झटका दिया। गुरु जी का इस बार भी कुछ नही बिगडा पर बीरो के शरीर से पसीना छूटने लगा और उनका मास उखड गया। चारो सेवादारो के माथे से लज्जावश ठण्डा पसीना छूट निकला। दूसरे सेवादार ने कहा—'यह तो सिद्ध पुरुष प्रतीत होते हैं। यहा बडों-बडो ने मुँह की खाई है, पर इनका तो बाल भी बाका नही हुआ। तुम जाओ और बैरागी जो को सचित करो कि आपके बीर इनका कुछ भी नही बिगाड सके। शिकारी वेश म ये कोई सिद्ध पुरुष तो यहा नही आ बैठे?'

—'नहीं-नहीं यह तो सिक्खों के गुरु हैं। मैंने इन्हें कल सिक्खों के डेरे में बैठे देखा था। मैं जाकर बैरागी को बुला लाता हूं। तब तक तुम मिन्नत-खुशामद करके इनसे क्षमा मांगो। बड़े भाग्य से ही महात्माओं के दर्शन होते हैं। यदि इनसे कुछ ले सको तो ले लो।'

मृग झटकाने का रहस्य न तो सिक्ख ही समझ सके और न बैरागी के सेवादार ही। गुरु जी अपने आत्मिक बल से इस रहस्य को जानते थे कि अपवित्र स्थान पर सिद्धों की सिद्धि नष्ट हो जाती है।

सन्देश पाकर बैरागी आगबबूला हो गया। उसकी आंखों से खून टपकने लगा। उसने रकाब पर पैर रखा और घोड़ा हवा में उड़ने लगा। बैरागी जब आश्रम में पहुंचा तब सतगुरु समाधि लगाए बैठे थे। बैरागी कठोर शब्दों में कहने लगा—'पवित्र आश्रम को अपवित्र करने वाला कौन है? (अपने सेवादारों से) म्लेच्छ और राक्षस हमारे आश्रम में जीव हत्या करें और तुम लोग मुंह ताको? बोलते क्यों नहीं सेवादारो! क्या तुम्हारे मुंह में ताले लग गए हैं या तुम्हें सांप सूंघ गया है।'

आश्रम के एक सेवादार ने 'सिक्ख गुरु' कहते हुए गुरु गोविन्द सिंह जी की ओर संकेत किया।

—'कौन सिक्ख गुरु! गुरुओं को जीव हत्या शोभा देती है? गुरुओं ने क्या पवित्र आश्रम दूषित करना भर सीखा है? मुगलों की सोहबत का असर हुए बिना नहीं रह सकता।' बैरागी बौखला रहा था।

तब गुरु गोविन्द सिंह जी मुस्कराते हुए बोले—'योगी तू योगी ही रहा। तपस्वी और त्यागी न बन सका। योगी के लिए तपस्वी और त्यागी होना आवश्यक होता है।'

बैरागी बिना उत्तर दिए क्रोध से कांपता हुआ वीरों के पास पहुंचा और कड़े स्वर में कहने लगा—'तुम्हारी शक्ति कहां चली गई वीरो! अदना से आदमी को भी पलंग से न गिरा सके। तुम्हारी वीरता को क्या हो गया जो इस प्रकार हिम्मत हार बैठे हो। उठो! वीर बनो और पलंग को ऐसा झटका दो कि उस पर बैठने वाला 'चारों खाने चित्त' हो जाए। इसी में मेरा मान और तुम्हारा आतंक बना रह सकता है।'

एक वीर ने उत्तर दिया—'बैरागी! यह कोई साधारण आदमी नहीं है। यह कोई सिद्ध-पुरुष प्रतीत होता है जिसने इस स्थान को अपवित्र कर हमारी शक्ति नष्ट कर दी है।'

बैरागी उन्हें प्रेरणा देते हुए फिर कहने लगा—'वीर पुरुष लड़ाई हारते हैं हिम्मत नहीं। उठो। एक बार फिर कमर बांधो और पराजय को विजय बदल दो।'

वीर—'आपके कहने पर हम एक बार फिर प्रयत्न करते हैं। पर हमे सफलता की कोई आशा नही।'

इतने मे वृद्ध यात्री भी वहा आ पहुचा। पूरे घटना-चक्र को समझकर वैरागी के पास पहुचा और उसका कन्धा थपथपाकर कहने लगा—'अपवित्र स्थान पर सिद्धो की सिद्धि कुछ काम नही कर सकती। तुम्हारे वीरो के लिए अब कुछ नहीं हो सकता। अब झगड़े को तूल देने से क्या लाभ।'

वैरागी ने वृद्ध यात्री की बात अनसुनी करते हुए ललकार कर वीरो से कहा—छोडो इस बूढ़े की बातों को। लगाओ एक जोर का धक्का और बदल दो अपनी हार को जीत मे।'

वैरागी की ललकार सुनकर वीरो ने ऐड़ी-चोटी का जोर लगाकर पलग को उठाना चाहा पर पलग उनके हिलाए न हिल सका। यह देखकर वैरागी शर्म से पानी-पानी हो गया। वैरागी के नेत्रो से आसू टपकने लगे और वह सहसा गुरु गोविन्द सिंह जी के चरणो पर जा गिरा और बिलखते हुए कहने लगा—"सतगुरु! तुम मेरे गुरु और मैं तुम्हारा बन्दा! मुझे क्षमा करो! शरणागत को शरण दो।'

—'माता की सेवा करने वाला ही बन्दा कहलाता है। जाओ तुम्हें आज से हमने बन्दा की उपाधि दी। बहादुर दिल मे डाह नही रखते। हमने तुम्हारी दृढ़ता भी देखी और देखी तुम्हारी दीनता भी। हम तुम पर प्रसन्न हैं। आज से तुम्हे भारतवासी वीर बन्दा-वैरागी के नाम से पुकारेंगे। आगे बढो और लो ये पाच वीर। ये जो तुम सामने पाच प्यारे खड़े देखते हो ये अपनी पाच हजारी सेना से तुम्हारी रक्षा करेंगे। आज मैं तुम्हे इनका नेता बनाता हू। इन पाच वीरो से तुम पजाब की रक्षा कर सकते हो! जाओ! और अपनी जन्म-भूमि की रक्षा करो। पाच नदियो वाली धरती तुम्हारी मा है।'

पजारी ने कहा—'जय शिव शम्भु! वैरागी तुम वैराग्य त्याग कर आज कर्म मार्ग मे आए हो और बन्दा वीर वैरागी बने हो। पजाब का भाग्य अब तुम्हारे हाथ है।'

सतगुरु जी ने पुजारी को देखते हुए कहा—'लो पुजारी आज तुम्हे हम अपना बन्दा सौंपते हैं। आगे वैरागी तुम्हारा था और आज से यह हमारा हो गया है। हम इसका हाथ तुम्हारे हाथ मे देते हैं। इसका हाथ थामने की लाज रखना। अपनी राजनीति से पजाब मे होते हुए जुल्म को बन्द करवाना जिससे अपनी मा की छाती ठण्डी हो। आज से बन्दा सारे सिक्खो का सरदार होगा और तुम इसके राजगुरु। तुम्हारी नीति सिक्खो की नीति होगी। पाच प्यारो की मन्त्रणा मे जब तुम्हारी भी उपस्थिति होगी तो सफलता तुम्हारे पैर

सिक्खो और उसके साथ आश्रम के सेवादारो ने एक बार बन्दे का और दूसरी बार गुरु गोविन्द सिह का जय-जयकार किया। दोपहर ढल चुकी थी। सिक्खो ने लगर रचाया और वैरागी के आश्रम मे आनन्द करने लगे। उस समय गोदावरी की ठण्डी हवा वृक्षो से टकराकर वैरागी के आश्रम को शीतल कर रही थी।

—'सतगुरु! वैरागी जी कहा के रहने वाले हैं। हम अभी तक इस सम्बन्ध मे कुछ भी नही जान पाये।'—एक शिष्य ने प्रश्न किया।

—'सुना है कि यह भी पजाब के ही निवासी हैं। हम एक-दूसरे से अच्छी तरह परिचित होना चाहते हैं जिससे किसी के मन मे एक-दूसरे के प्रति भ्रम न रहे।' दूसरे शिष्य ने कहा।

सतगुरु बोले—'वीर वैरागी अपना परिचय स्वय देंगे। आज से तुम उनके हो और वे तुम्हारे। (वैरागी की ओर देखकर) बताओ वैरागी, तुम्हारे साथी तुमसे क्या पूछ रहे हैं।'

—'सतगुरु मेरी कहानी बहुत लम्बी है। वास्तव मे मेरा पहला जीवन महत्वहीन है। मेरे जीवन की यथार्थ कहानी तो आज से शुरु होगी। मेरा वह जीवन कुम्हार के चाक की तरह निरुद्देश्य था। आज मेरी चौरासी कट गई है। पिछले छत्तीस वर्षों मे मै एक भी सीढी न चढ सका केवल ठोकरें खाता रहा। बैकुण्ठ जाने का रास्ता तो मुझे आज मिला। जिन्दगी के पहले मोड ने एक दिन मुझे शिकारी से वैरागी बना दिया था और आज दूसरे मोड ने वैरागी से बन्दा। आज से छत्तीस वर्ष पूर्व शुक्ल पक्ष सवत् १७२७ मे काश्मीर के पुंछ नामक ग्राम मे एक राजपूत घराने मे मेरा जन्म हुआ था। मेरे पिता गाव के मुखिया थे। पुछ ग्राम चाहे छोटा ही था किन्तु था राजपूतो का गढ। राजपूत वहा छावनी डाले बैठे रहते थे। पजाब की ओर आने वाले लुटेरो का मुँह तोडने के लिए लडाके राजपूत सदा प्रस्तुत रहते थे। काबुल, कन्धार और गजनी से जो काफिले सौदागरो के आते थे उनमे वेश बदले हुए कई लुटेरे भी हुआ करते थे। जब लुटेरो की एक अच्छी-खासी टोली बन जाती तो लूट-पाट करके वे फिर काबुल लौट जाते। इन लुटेरो से मुगलो की भी काफी नाको दम हो चुका था पर थे तो ये भी उसी टोली के। मुगल उन्हे क्षमा कर देते थे। राजपूतो के हाथ अगर कोई चाण्डाल-चौकडी लग जाती तो वे उनके छक्के छुडा देते। जान पर खेलना राजपूत बहादुरी समझते थे। सीमा पर ऐसे तमाशे प्रायः होते रहते थे। एक दिन जब लुटेरो की टोली भारत से लूट का माल गजनी ले जा रही थी मुगल सिपाहियो ने उनका मार्ग अवरुद्ध नही किया। एक लुटेरा कह रहा था हिन्दोस्तान के लोग भेड-बकरियां हैं जब चाहे उनका ऊन उतार लिया जा[illegible] हमारे पूर्वजो ने भारत मे हमारे लिए भेड-बकरियो के झुण्ड के झुण्ड पाल[illegible] हैं। उनका ऊन उतारना हमारा धर्म है।

'मुगल सिपाही चुप खड़े रहे पर राजपूत यह बात सह न सके। शाही हुकूमत के आगे चाहे उन्हें भी सिर नवाना पड़ता था पर उनसे यह बात बर्दाश्त न हुई। फिर क्या था। वे लुटेरों की टोली पर ऐसे टूट पड़े जैसे भूखा शेर शिकार पर झपटता है। भले ही वे राजपूत गिनती में चार-पांच ही थे पर उन्होंने सारी टोली के दांत खट्टे कर दिए। तलवार के धनी तलवार का आसरा लेकर मैदान में कूद पड़े। पास बैठे मुगल सिपाहियों को भी शर्म आई और उन्होंने भी तलवारें निकाल लीं। तलवारें खनकने लगीं। ऊंटों पर से बलोचों ने छलांगें लगाईं और मैदान में आ डटे। बलोचों ने जी खोलकर तलवारें चलाईं पर राजपूत भी उनसे उन्नीस पड़ने वाले न थे। उन्होंने भी जोरों से मार-काट की। क्षण भर में हाहाकार मच गया। बलोचों के कजावों में कुछ स्त्रियां भी थीं। पठानों और बलोचों ने सौदागरों से लगे हाथ गजनी के अमीरों के लिए कुछ औरतें भी खरीद ली थीं। उन्होंने कजावों में से मुंह निकालकर तलवारों की चमक देखी पर वे नकाब न उतार सकीं। वे बेहोश हो गईं। प्यासी तलवारों ने जी भर कर खून से प्यास बुझाई। काफिले में भगदड़ मच गई। सौदागर हार कर तथा अपना माल वहीं छोड़कर भाग खड़े हुए। राजपूतों ने भागते हुए का पीछा करना अपनी हतक समझा और वे लोग पहाड़ों की कन्दराओं में जा छिपे। मुगल सिपाही जी खोलकर काफिला लूट रहे थे। तब इन्होंने चार कजावों के पर्दे उठाये तो उनमें उन्हें युवती स्त्रियां दिखाई पड़ीं। लूट-पाट भूलकर वे उन पर लट्टू हो गए। राजपूत खड़े तमाशा देख रहे थे। पूछने पर पता चला कि वे भगाई हुई मुसलमान औरतें हैं। भगाकर लाने वाले को सौ-सौ अशर्फियां दी गई थीं। कजावों में बैठाकर वे उन्हें गजनी ले जाना चाहते थे। कजावों में से कुछ विचित्र चीज़ें मुगलों के हाथ लगीं। पर जब उन्होंने शेष कजावों की तलाशी ली तो उनमें से उन्हें हिन्दू औरतें भी मिलीं जो रस्सियों से जकड़ी हुई थीं। मुगल छेड़-खानी करने से बाज न आए। लूट के माल में शराब की सुराहियां भी थीं। कुछ सिपाही शराब पीने में जुट गए और कुछ औरतों को छेड़ने में। औरतें चीखने लगीं। उनके चीत्कार से त्रस्त होकर राजपूतों ने आगे बढ़कर तथा ललकारते हुए कहा—खबरदार! जिस किसी ने औरतों को हाथ लगाया उनका हाथ काट डाला जाएगा।

एक मुगल ने अकड़कर कहा—'तुम कौन होते हो रोकने वाले। जाओ अपना रास्ता नापो! तलवार से जीती हुई औरतें जीतने वाले का माल होती हैं। यह हमारा माल है और हमारी ये कनीजें बनेंगी।'

—'लाज नहीं आती तुम्हें ऐसा बकते! उस समय कहां थे जब काफिला लूट का माल लिए आगे से निकला जा रहा था! जान हमने लड़ाई और विजेता तुम बनने लगे। डूब मरो चुल्लू भर पानी में। औरतों को छेड़कर बहादुरी का ढोल बजाते हो।' एक राजपूत ने कहा।

—'बड़े आए तीस मार खा ! मुगल सिपाहियों से टक्कर लेना लोहे के चने चबाना है।' एक मुगल सिपाही ने कहा।

फिर क्या था। तलवार म्यान से निकाल ली गई। शराबी मुफ्त में मारे गए और भिड़ने वालों ने भागकर जान बचाई। अब सारी सम्पत्ति राजपूतों के अधिकार में थी। औरतें शुद्ध मन। रही थी। उन पांच राजपूतों में मेरे पिता जी भी एक थे।

भागते हुए मुगल सिपाहियों को देखकर उन्हें कन्दरा में छिपे हुए कुछ सौदागरों ने पुकारा और कहा—'तुम लोग मुसलमान हो। हमारे भाई हो। इस्लाम में हर मुसलमान भाई है। भाई-भाई में वैर किस बात का। वे थोड़े से काफिर हमारी सम्पत्ति मुफ्त में लिए जा रहे हैं। यदि हम और आप मिलकर उन पर आक्रमण करें तो उनसे सारी सम्पत्ति वापस ली जा सकती है। उनमें से औरतें तुम लोग ले जाना और अपना माल-मता हम लोग ले जाएंगे।'

अभी सामान राजपूतों के ही हाथ में था कि उन लोगों में बटवारा भी हो गया। वे सांठ-गांठ कर राजपूतों पर सहसा टूट पड़े। लड़ाके राजपूत थक चुके थे पर उन्होंने इस बार भी हिम्मत न हारी और उनसे लोहा लिया। कदाचित तलवारों की प्यास अभी नहीं बुझी थी। युद्ध के देवता ने एक बार फिर दुदुंभि बजाई। तलवारों ने मार-काट शुरू कर दी। किसी की गर्दन तलवार से कट गई, तो किसी की छाती में से रक्त की धारा फूट निकली। राजपूत डटकर लड़ने लगे। वे वीर थे। उन्होंने इनका भी नाकों दम कर दिया। खून से लथपथ मुगल अब भी लड़ने की हिम्मत कर रहे थे पर राजपूतों की तलवारों के आगे उनकी कुछ न चली। बहुतों ने वहीं दम तोड़ दिया और कई भाग निकले। भागते हुए मुगल ने एक छुरा इस प्रकार फेंका कि वह मेरे पिता की छाती में आ लगा। मेरे जख्मी पिता, काफिले की सामग्री, और लुटी-पिटी औरतों को साथ लिये और राजपूत पूछ आ गये। उस समय मैं छोटा ही था, जब पिता जी ने मेरे सामने प्राण त्यागे थे। पिता की छाया सिर से उठना मेरे लिए मुसीबतों का कारण बना। भले ही मैं आगे चलकर राजपूतों का सरदार बना किन्तु मेरा मन शिकार करने में अधिक लगता और सरदारी करने में कम।' बंदे की आंखों से आंसू ढुलक पड़े। सिक्ख सरदार मौन बैठे थे। एक सरदार ने मौन भंग करते हुए कहा—'फिर आगे क्या हुआ वैरागी।'

—'आगे क्या होना था। शिकार मेरे आगे था और मैं शिकार के पीछे। पहाड़ों, कदराओं और जंगलों में मेरे शिकारी होने की धूम मच गई। नेतागिरी से मुझे कोई अनुराग न था। मेरे घराने वाले मुझे इसलिए क्षमा कर देते थे कि मैं अभी बच्चा था। उन्हें आशा थी कि बड़ा होकर मैं स्वयं ही समझ जाऊंगा। पर शूल के उगते समय से ही मुंह नुकीले हुआ करते हैं। शिकार के शौक ने मुझे घुड़-सवार बना दिया। तीरदाजी का हुनर मैंने शिकार ही में सीखा।

भाले से मैं दौडते हुए हिरन का शिकार कर लेता था। मेरी तलवार ने कई बार शेरो का मुकाबला किया। पर कभी हार न खाई। शिकार मेरी जिन्दगी का सबसे प्यारा शौक था।

—'एक दिन जब सूर्य की किरणें धरती पर भाले की नोक की तरह धसी जा रही थी उस समय मैं घोडे की पीठ पर सवार था। घोडे ने कई सोते और नाले फांदे और बहुत खेत पीछे छोडे। अपने गाँव की सीमा कही दिखाई भी नही पड रही थी। सामने पहाडों की ऊची चोटियाँ थी और चारो ओर घना जगल। घोडा सरपट दौडा चला रहा था।

—'अचानक एक कदरा मे से निकलकर नदी की ओर पानी पीने के लिए जाता हुआ हिरन मुझे दिखाई पडा। मेरी आँखो ने ताडा और मेरे मन ने हिरन के हृदय की बात भांप ली। मैं भी नदी की ओर जा रहा था। मैंने, मेरे घोडे ने और उस हिरन ने नदी का पानी साथ-साथ पिया। पानी पीकर जब मेरे घोडे ने हिन-हिनाना शुरू किया तो हिरन नदी पार करने के लिए उसमे कूद पडा। मैंने अपना घोडा भी पानी मे छोड दिया। हिरन आगे था और मैं पीछे। पार पहुचने पर हिरन चौकडियाँ भरने लगा और मेरा घोडा छलाँगें मारता हुआ उसका पीछा करने लगा। मैंने कई तीर छोडे पर वे सब के सब खाली गये। जीवन मे मेरी यह पहली हार थी। मेरी बाहे फूल चुकी थी। पर मैंने हिम्मत न छोडी। हिरन जब एक झाडी के बगल से घूमने लगा तो मैंने उस पर एक तीर छोडा। मेरा तीर उस हिरन को तो नही लगा पर उस झाडी म छिपी हुई एक हिरनी को जा लगा। पास पहुचकर जब मैंने उस हिरनी का पेट चाक किया तो उसमे से कई छोटे-छोटे बच्चे निकल पडे जिन्होने कुछ ही क्षणो म मेरे सामने दम तोड दिये। उन्होनें प्राण क्या छोडे मेरा कलेजा मुट्ठी मे आ गया। मन डोलने लगा और आँखो से आँसू बहने लगे।' बैरागी कह रहा था।

एक सिक्ख ने कहा—'शिकारी का कलेजा छोटी सी बात से हिल गया। शिकारी तो पत्थर दिल होते हैं।'

बैरागी ने उत्तर दिया—'मैं स्वय चकित था कि पत्थर दिल मोम की तरह कैसे पिघल गया। मैंने कई शेरो का वध किया, अनेक चीते मेरे तीरो के शिकार हुए पर मेरा कलेजा न डोला। पर पता नही ईश्वर को क्या मजूर था कि मेरा दिल उचाट हो गया। मैं उस शिकार के साथ इस ससार को भी त्यागना चाहने लगा। छोटी सी बात ने मेरी जिन्दगी मे परिवर्तन कर दिया। भाला मैंने वही छोड दिया और तीर वही फेंक दिये। कमान के मैंने दो टुकडे कर दिये। मेरे सामने मेरी कमान मेरे पराजित हृदय की तरह दम तोड रही थी और मैं खडा था। मेरे जीवन म परिवर्तन वैसे आया जैसे वाल्मीकि डाकू ऋषि बन गया या जैसे गौतम बुद्ध राज पाट त्यागकर निर्वाण की खोज मे निकल पडा था। मैं भी वहाँ से घर की ओर न लौटा बल्कि कैलाश की पर्वत-मालाओ की ओर उन्मुख

हुआ। अब मेरी मंजिल कैलाश थी। कई रातें मैंने घने जंगलों में काटीं। संसार मेरे लिए झूठा था और मैं संसार के लिए। जैसे-जैसे मेरे पैर कैलाश की ओर बढ़ रहे थे वैसे-वैसे मेरे हृदय में वैराग्य घर कर रहा था। रास्ते में साधुओं ने मुझे मुक्ति की खोज का पथिक कहा।

—'रास्ते में मुझे जानकीदास वैरागी नामक एक साधु मिला। उसने मुझे अपना शिष्य बना लिया। गुरु बिना गति नहीं। फकीरी बाना पहनकर लक्ष्मण देव से माधोदास वैरागी बन गया।

—'अहं का त्याग संसार का सबसे बड़ा त्याग है। संसार को आदमी त्याग देता है पर संसार उसे नहीं त्यागता। अन्दर के संसार पर मनुष्य काबू पा लेता है पर बाहर का संसार उसके शिकंजे ढीले कर देता है और आदमी बेबस हो जाता है। उसकी इच्छाएं मन में से उठती हैं। जो इन इन्द्रियों को जीत लेता है वह त्यागी बन जाता है। बहुत से साधु इन्द्रियों के वश में हो जाते हैं और वे किसी काम के नहीं रहते। संसार उन्हें अपने साथ मिलने जुलने नहीं देता। घोंसले से गिरा हुआ शावक जैसे फिर घोंसले में नहीं प्रवेश कर सकता, उसी प्रकार वैरागी बाना एक पहनकर फिर संसारी कैसे कहलाया जा सकता है।

—'मन को मारने के लिए तप करना पड़ता है। मन एक शरारती बछड़ा है। बछड़े को रस्सी से बांध कर जब रथ के आगे जोता जाता है तब वह बहुत दुलत्तियां मारता है और अपनी टांगें भी तुड़वा बैठता है। पर शिकंजे में पड़कर विवश हो जाता है। उसे भोग विषय मिलना बन्द हो जाता है और वह कमजोर होकर अपनी राह पर आ लगता है। साधुपन का निर्वाह करना कठिन होता है। यह दो धारी तलवार है। जो दोनों ओर से काट सकती है। साधुओं को यात्रा का घोड़ा बनाकर छोड़ दिया जाता है जिससे वह तीर्थों में घूम-घूमकर अपने ज्ञान की वृद्धि और अपनी इन्द्रियों का दमन कर सकें। इन्द्रियों का दमन करने पर ही वे सच्चे त्यागी बन सकते हैं। तीर्थ-स्थानों की ज्ञान-ज्योति उनके हृदय में प्रकाश करने लगती है और वे संसार को ठुकरा देते हैं। आदमी इसी प्रकार साधु से त्यागी बन जाता है। सत्संग उसे सत्य मार्ग पर ले आता है। संसार से विरक्त होने पर अनेक महात्माओं की संगति मुझे प्राप्त हुई। पंचवटी में पहुंचकर मैंने तप के लिए आसन जमाया। साधु-सन्तों द्वारा की गई ज्ञान ध्यान की चर्चा से मेरी काया पलट गई। महात्माओं की सेवा से मुझे यह पद मिला है जिसके प्रताप से मुगल मेरे सामने सिर नहीं उठाते। नासिक से मैं नांदेड़ आ गया। यह स्थान जहां पलंग इस समय बिछा हुआ है मेरे आसन की जगह थी। मैं यहां भूत-प्रेतों को वश में लाने की सिद्धि करने लगा और यहीं मेरी एक मुसलमान वली अल्लाह से भेंट हुई। उन्होंने मुझे दक्षिण का वली अल्लाह बना दिया। आज मैं वली अल्लाह माना जाता हूं। ये हैं मेरे जीवन की करवटें।' इतना कहकर वैरागी चुप हो गया।

गुरु गोविन्द सिंह जी कहने लगे—'और अब तुम माधोदास बैरागी से बहादुर बदा वीर बैरागी बन गये हो। अब तुम्हें ससार 'बन्दा बहादुर' के नाम से स्मरण करेगा। इस बाने को त्याग दो और फिर राजपूतों की-सी पोशाक पहन कर सिंह सेनापति बनो।'

बैरागी सिर झुकाये बैठा था। 'चलो अपने डेरे की ओर। सन्ध्या हो रही है।' गुरु जी ने कहा। सब सिक्ख पहले से ही तैयार बैठे थे। उन्हें तैयार देख-कर बैरागी ने कहा—'मुझे अब यहां रहकर क्या लेना है—सतगुरु ! मैं भी आपके साथ चलूंगा। गुरु के चरणों में ही शिष्य को रहना उचित है।'

—'नहीं ! नहीं ! अभी तुम्हारे लिए इसी आश्रम में रहना उचित होगा। अवसर की प्रतीक्षा करो। आश्रम त्यागने का समय अभी नहीं आया।' गुरु गोविन्द सिंह जी ने कहा।

राजगुरु कहने लगा—'बैरागी अभी तुम्हारी इस आश्रम को आवश्यकता है। जहां पराजय हुई हो वहां योद्धा का जी नहीं लगता। विजेता के समीप बैठ-कर वह पराजय का प्रायश्चित करना चाहता है।'

बन्दे ने बूढ़े की ओर देखा। वह कह रहा था—'जब तक स्वर्ण को भट्ठी में तपाया नहीं जाता उस पर रंग नहीं चढ़ता। मिट्टी के कच्चे बर्तनों को कुम्हार आँवों में पका कर उनमें आवाज़ पैदा कर देता है। सतगुरु ने तुम्हारे अन्दर आवाज़ पैदा कर दी है और मैं उनमें शक्ति भरूंगा। सतगुरु ने तुम्हें तीर और तलवार दी है और मैं उनमें ज्वालामुखी अग्नि का प्रवेश करूंगा। तुम्हारी तलवार जब शत्रु पर उठेगी उसके पीछे सैंकड़ों तलवारें उठ खड़ी होंगी। तुम्हारे एक तीर के पीछे सैंकड़ों तीर छूटेंगे। उस समय तुम्हें आश्रम का त्याग करना होगा।'

—'राजगुरु जो कुछ कह रहा है वह सब ठीक है। राजगुरु की नीति में तुम्हारी सफलता छिपी है।' गुरु गोविन्द सिंह जी इतना कह कर अपने डेरे की ओर चल दिये। बन्दे के आश्रम के सेवादारों के साथ राजगुरु का मस्तक भी झुका हुआ था।

उस समय सन्ध्या की परछाइयाँ लम्बी होती जा रही थीं और सूर्य अन्धकार की ओढ़नी में मुंह छिपा रहा था।

५

□□□

पायल की झंकार

गेन्डूी को घर छोड़े कई दिन हो चुके थे और आजकल वह राजगुरु के आश्रम में रह रहा था। घर के गोरख-धन्धे से उसका मन इस प्रकार अब ऊब चुका था कि उसको माला के मनको पर ही शान्ति मिली। घर की रास-लीला उसे रास न आई। मन गोदावरी की भांति जिधर ढाल पाता है उधर वह निकलता है। गोदावरी की लहरों की भांति उसका भी मन चचल हो रहा था। उसका मन अब उपासना पर न लगता। उसका आसन डोल उठता था, और मुदे नेत्र खुल जाते थे। उसके अधखुले नेत्रों में सुनहले स्वप्न जाल की तरह बिछ जाते। वह स्वप्नों में उसी प्रकार उलझ जाता जिस प्रकार मकड़ी के जाल में मक्खी जा उलझती है। बूढ़े यात्री को जनता अब राजगुरु के नाम से पुकारने लगी थी। कुछ ही दिनों में नादेड निवासियों की जबान पर उसका यह नाम चढ़ गया। अब उसे कोई यात्री या पुजारी न कहता था। भले ही राजगद्दी की स्थापना होने में अभी बहुत समय की आवश्यकता थी किन्तु गुरु गोविन्द सिंह जी ने माधोदास वैरागी को बन्दे की और बूढ़े यात्री को राजगुरु की पदवी देकर नये राज्य की नींव रख दी और बन्दे तथा राजगुरु को उस नींव पर प्रासाद खड़ा करने की हिम्मत बधा दी थी। नीति की लपेट उसी दिन से आरम्भ हो गई। चाहे राजगुरु और उसके साथियों ने उस नये प्रासाद के रेखा चित्र मन ही मन बना लिये थे किन्तु उसकी चुनाई आरम्भ करने के लिए अभी आज्ञा नहीं मिली थी। उसके लिए अभी किसी उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा की जा रही थी। राज्य की स्थापना कोई खिलवाड़ नहीं, शतरंज की चाल है। चाल चलने वाले को पहले चारों ओर देखना पड़ता है। प्रातः से सांय तक राजगुरु राजनीति की शिक्षा पाने के लिए गुरु गोविन्द सिंह जी के पास जाकर परामर्श लेता और उन्हें अपनी चालें भी बतलाता।

राजगुरु इस प्रकार राजनीति की सुशिक्षा प्राप्त कर रहा था। इसलिए रेड्डी को सारा दिन राजगुरु के डेरे मे ही बिताना पडता था। पर उस का मन अकेले मे उचाट होने लगा। राजगुरु की अनुपस्थिति म वह डेरे से धीरे-धीरे पैर निकालने लगा। जब राजगुरु लौट कर आश्रम मे पहुचता तो रेड्डी कभी उसे मिलता और कभी न मिलता। पास के आश्रम वालो से उसे रेड्डी का पता मिल जाता। राजगुरु की आखें झुक जाती। छोकरा और सुरपा दोनो पिटाई से ही कार्य मे प्रवृत्त होते हैं। रेडडी के बन्धनो की गाठ इसलिए ढीली पड चुकी थी कि राजगुरु को खुलवाने तक का अवकाश नही मिलता था। रेड्डी की जागीरें चारो ओर थी। गुरु के चले जाने के बाद वह आश्रम से बाहर निकल जाता और उनके आने से पहले आश्रम म लौट आने का प्रयत्न करता। कभी देर भी हो जाती। राजगुरु यदि सूर्य ढलने से पहले ही आ जाते तो रेड्डी को बहाने बनाने पडते। चाहे गुरु के सामने उसकी कोई चालाकी काम न करती किन्तु फिर भी यह बहाने बनाने म कोई कमी न करता। राजगुरु भी चुपचाप बहाने सुन लेते पर मुह से कुछ न कहते। यदि राजगुरु एक बार भी उसे ताडना की आखो से देख लेते तो हो सकता था कि रेड्डी भी भडक उठता और फिर ढूढने पर भी राजगुरु को न मिलता। राजगुरु अपना आश्रम खाली नही छोडना चाहते थे। सूना आश्रम देखकर मुगल सहसा उस पर अधिकार कर सकते थे। उनसे जूझना किसी ऐरे-गैरे का काम नही था। राजगुरु उन्हे ऐसा अवसर नही देना चाहते थे। ईश्वर करे अकेला तो जगल में शीशम का भी पेड न हो। सूना आश्रम रेड्डी को काटने दौडता था। जब से राजगुरु सिक्खो के आश्रम मे आने-जाने लगे थे तब से आश्रम रेड्डी को सूना-सूना लगने लगा था। रेड्डी का मन अकेला रहना चाहता था। गलिया नापने मे उसका जी लगता था। उसके मन म प्यार के तार झकृत होने लगे। ससार से उकताया हुआ योगी और योग से उकताया हुआ भोगी। कुछ ऐसी ही अवस्था रेड्डी की हो रही थी।

राजगुरु के साथ-साथ बन्दा बैरागी भी शिक्षा ग्रहण कर रहा था। उसके आश्रम के सेवादार भी मन-मानी किया करते। कोई किसी समझदार की बात को पल्ले न बाधता। मुगल सिपाही अवसर की ताक म थे कि कैसे य आश्रम हमारे हाथ आए और हम भी गोदावरी के तट के मजे लूटें। बहादुरशाह क सिपाही अभी सिक्खों से सीना-जोरी नही करत थे। कायम बख्श के सिपाहियो का तेज अभी कम नही हुआ था। वे मनमानी करने से न रुकते। कायम बख्श के कत्ल किये जाने की सूचना दिल्ली की दीवारो तक पहुच चुकी थी। फिर भी छोटे-मोटे हाकिमो की अकड अभी खत्म नही हुई थी। कही-कही अब भी बहादुरशाह की फौजो के सामने वे बागी हो जाते थे। केवल हाकिम ही बदले थे। सिपाही नही। राजा का हेर-फेर हुआ था जनता का नही। इसी लिए

पुरानी आदतें उन सिपाहियों के दिलों में घर किये हुए थीं। बहादुरशाह के सिपाही खामोशी से उन्हीं के द्वारा अपना उल्लू सीधा कर लेते थे। किन्तु अन्दर से वे एक ही थैली के चट्टे-बट्टे थे। बहादुरशाह के सिपाही ऊपर ही ऊपर से चिल्लाते पर अन्दर से किलकारियाँ भरते।

—'क्यों दोस्त आजकल बैरागी और राजगुरु के आश्रम सूने-सूने क्यों दिखाई देते हैं ?' एक मुगल सिपाही ने दूसरे सिपाही से पूछा।

—'खुदा जाने। हमें तो ऐसा मालूम होता है जैसे बन्दे ने योग पुनः ले लिया हो।' दूसरे सिपाही ने कहा।

—'इनकी हुदिया में क्या पक रहा है। यह कोई नहीं जानता। या तो बैरागी की पोशाक बदली जा रही है या षड्यन्त्र के बीज बोये जा रहे हैं। बहादुरशाह को कायम बख्श का भय था। वह काटा तो अब निकल चुका है। अनुग्रह मनुष्य का सिर झुका देता है। सनिक सी कृतघ्नता होगी जब जी चाहे उन्हें आखें दिखा सकता है। ये तो घर के मुर्गे हैं जब मन चाहेगा जबह कर लिये जायेंगे। शाही फौज के लिए तीन-चार सौ सिक्ख सिपाही मारना कोई बहुत बड़ी बात नहीं है।' एक मुगल सिपाही कह रहा था।

दूसरा सिपाही कहने लगा—'बहादुरशाह भी अवसर की ताक में है। अभी दक्षिण में कई अक्कड़ खां मौजूद हैं जब तक उनका सिर कुचल नहीं दिया जाता तब तक इन सिक्खों की ओर देखना भी पाप है। हमें न जाने उनसे कितने काम लेने हैं। इनकी बंदूकें इन्हीं के कन्धों पर रखकर चलाई जाएंगी।'

मुगलों के डेरे में इसी प्रकार की गुम-सुम होती रहती थी। परन्तु वे बाहर जबान नहीं खोलते थे। मुगलों की जबानों पर पड़े हुए तालों की तालियां सम्भवतः गुरु गोविन्द सिंह जी हाथ में थी। इस लिए कोई मुगल ऊँची-नीची बात नहीं कह सकता था।

राजगुरु का डेरा रेड्डी को खाली दिखाई देता था। उस का मन डेरे से उचट गया था। शिकार खेलने वाली टोलियों में रेड्डी मिल जाता। उनमें उसके कुछ पुराने साथी भी थे। वे फिर इकट्ठे हो मिल बैठते। इस चाण्डाल-चौकड़ी ने रेड्डी के साथ-साथ आश्रम को भी लूटना शुरू कर दिया। पर अभी तक राजगुरु खाली नहीं हुआ था। कई दिन राजगुरु भी आश्रम में न आ सका। तब आश्रम का भगवान् ही रखवाला था।

बहादुरशाह गोलकुण्डे के किले में रंगरलियां मना रहा था। वह समझ बैठा था कि कायम बख्श को कत्ल करने के बाद स्वर्ग की तालियां मेरे हाथ लग गई हैं और अब मैं इन्द्रासन पर शीघ्र ही विराजूंगा। वह सोचता, दिल्ली मेरी है, गोलकुण्डे की खानें मेरी हैं। सदा के लिए तख्ते ताऊस प्रत्येक प्रभात

मेरी प्रतीक्षा किया करेगा । शाही झडे के आगे सारा हिन्दोस्तान झुक झुक कर फरशी सलाम किया करेगा । भले ही मुगल राज्य बीजापुर की सीमा तक पहुच चुका था किन्तु आलमगीरी झडा अभी तक अहमदनगर के किले पर ही लहरा रहा था । विजय नगर के शीश महलो मे मुगल सूबेदार ईद और शबे बारात के उत्सव मना रहे थे । किन्तु मुगल राज्य की दीवारो को घुन लग चुका था । उसकी नीव कम गहरी थी पर मीनार थे गगन-चुम्बी । नीव के पत्थर रेत की भाति नीचे से सरके जा रहे थे पर मीनार पर चढे हुए को नीचे की खबर कैसे होती ।

सावन के अन्धे को हरा ही हरा दिखाई पडता है । दीवारें अपने बोझ से धसने लगी थी । नीव खोखली हो रही थी, पर किसी को खबर नही थी । बहादुर शाह हैदराबाद मे हुस्न-सागर और गोलकुण्डे की पहाड़ियो पर रीझ रहा था । तानाशाह के महलो ने उसे दिल्ली भुलवा दी थी । उसके खभो मे से अब भी जल तरग के स्वर निकला करते थे । पत्थरो को इस प्रकार से तराशा गया था कि सरगम के सब स्वर अलग-अलग पत्थरो मे से बज उठते थे और उनकी स्वर लहरी पर दक्षिण की रूप सुन्दरियो का नृत्य होता था । भागमती, पयाल जैसी मृगनैनिया भी दक्षिण के घर मे थी । नित्य नई महफिलों मे पयाल जैसी नगर सुन्दरिया उसी प्रकार पर्दों मे से झाकती जिस प्रकार नीली और बैगनी चादर मे से चढते हुए सूर्य की लाली । घूघट के पट मे से रूप की देवी जन्म लेती और शराब की प्यालियो म मस्ती आ जाती । साकी के साथ-साथ महफिल भी झूम उठती । लज्जा और सकोच से भरी हुई वे सुन्दरिया भोली-भाली दिखाई देती । उनके रूप का भरी महफिल मे तमाशा दिखाया जाता । घुंघरू उनकी एडियो से टकरा कर छनक जाते । कमर मे लचक आ जाती । पायले बजने लगती और उन अल्हड युवतियो की कमर सो-सौ बल खाने लगती । घूघट उनके मु ह से हट जाते और कुआरा यौवन महफिल का शृगार बन जाता । मधुशाला की रागिनी सुनकर सूफियो का भी मूंछो पर ताव देने को जी कर आता । गाजियो का दिल भी मधुशाला के प्यालो म डुबकी लगाने से पीछे न हटता ।

—'मुझे भी एक घूट पी कर देख लेने दो । लोग कहते हैं कि इससे मस्ती छा जाती है ।' एक गाजी दूसरे का प्याला छीन कर पी गया । जब मस्ती के डोरे उसकी आखो मे छलकने लगे तब वह अपने आपको भी भूल गया और कहने लगा—'यदि मैं पहले ही जानता कि यह अमृत है तो अल्लाह् कसम मैं मुसलमानियत को इस प्याले पर न्योछावर कर देता । बेकार सूफी बनकर जीवन के कई वर्ष बरबाद किये ।'

एक सूबेदार ने कहा—'पीओ और खामोशी से पीते जाओ । यदि किसी मौलवी के कानो मे ये शब्द पहुच गये तो शरह् के शिकजे म जकड दिये जाओगे ।

तुम्हारी चतुराई निकल जायेगी। इसका मजा तो खामोशी से ही लिया जाता है हो-हल्ला करके नहीं। अभी महफिल की रागिनी को निकलने दो। उड़ते हुए डोरिये के दुपट्टे और घुंघरुओं की छनकार में तुम भी न झूम उठे तो फिर क्या कहना। आनन्द के अतिरेक में यदि झूम न उठे तो महफिल का मजा कैसा। रागिनी के साथ रूप को भी नाचता हुआ देखोगे। गोलकुंडे की खानें यदि हीरों को जन्म देती हैं, तो भागमती तथा पयाल जैसी सुन्दरियां भी इसकी गोद में जन्म लेती हैं। पत्थर की छाती में हीरे की चमक तो देखो। पर हाथ मत लगाना। लाजवन्ती के पौधों को दूर से ही देखो पर छूओ मत। हाथ लगाते ही वह मुरझा जायेगा। उसका सौन्दर्य हवा हो जायेगा।' दूसरा कह रहा था।

घुंघरू महफिल की जबान में बोल उठे। साजों ने संगीत छेड़ा। रूप ने मुख उघाड़ा। तब फिर क्या था। साकी के झूमने से महफिल झूम उठी। वाह! वाह!! बहुत खूब! बहुत खूब!! की आवाजें महफिल से निकलने लगीं। उस समय महफिल कान से बहरी और आंख से अन्धी थी। किसी की बात पर ध्यान न दिया जाता। चाहे फिर कोई किसी क्षेत्र का अधिपति ही क्यों न बन बैठा हो।

—'बीजापुर में मराठों ने सिर उठाया है और वे बागी बन बैठे हैं।' एक सिपाही ने आकर कहा।

—'नरदूद कहीं के! तुम समय कुसमय को भी नहीं देखते! अभी जाओ। फिर किसी समय आना। जानते नहीं कि महफिल के रंग को भंग करने की क्या सजा हो सकती है?'

—'बादशाह सलामत खुशी का जश्न मना रहे हैं और मनहूस खबर सुनाने आ धमके।' सूबेदार की भृकुटियों ने सिपाही को उलटे पांव जाने के लिए विवश कर दिया। उसकी आवाज महफिल के हो-हल्ले में लुप्त हो गई।

नाच हो रहा था। मस्ती अठखेलियां कर रही थी। सुराही के चारों ओर प्याले, साकीबाला और पूरी महफिल झूम रही थी। इसी तरह कई दिन यह जश्न चलता रहा। कई रातें नाचते रहने के फल-स्वरूप हसीन पायलों की जबान भी थक कर खामोश हो गई और वे चूर-चूर होकर गिर पड़ीं। पर अभी तक मधुबाला का हाथ नहीं डोला था। महफिल वालों ने कदाचित् दो दिनों तक सूर्य के दर्शन भी न किये थे। वे अभी तक महफिल की गोद में ही स्वप्न देख रहे थे। मदमाती आंखों में आज भी नशा था। वे आंखें नहीं खोलना चाह रहे थे। रूप पिंजरे में थक गया। कुंवारी उमगें गोदावरी के जल की तरह अभी शुद्ध और पवित्र थी। पत्थर जैसे होठों ने उन कोमल कुसुमों का रस चूम लिया। पुष्प रात भर के शृंगार होते हैं, दिन चढ़ते ही पांव तले कुचल दिये जाते हैं। महफिल भी जब समाप्त हुई तब कई फूल मसले हुए पड़े थे। जिनका रस भौंरों ने चूस लिया था और सीठी महफिल की छाती पर बिखरी पड़ी थी। महफिल के रकीबों

मेरी प्रतीक्षा किया करेगा। शाही झंडे के आगे सारा हिन्दोस्तान झुक झुक कर फरशी सलाम किया करेगा। भले ही मुगल राज्य बीजापुर की सीमा तक पहुच चुका था किन्तु आलमगीरी झंडा अभी तक अहमदनगर के किले पर ही लहरा रहा था। विजय नगर के शीश महलो मे मुगल सूबेदार ईद और शबे बारात के उत्सव मना रहे थे। किन्तु मुगल राज्य की दीवारो को घुन लग चुका था। उसकी नीव कम गहरी थी पर मीनार थे गगन-चुम्बी। नीव के पत्थर रेत की भांति नीचे से सरके जा रहे थे पर मीनार पर चढे हुए को नीचे की खबर कैसे होती।

सावन के अन्धे को हरा ही हरा दिखाई पडता है। दीवारें अपने बोझ से धसने लगी थी। नीव खोखली हो रही थी, पर किसी को खबर नही थी। बहादुर शाह हैदराबाद मे हुस्न-सागर और गोलकुण्डे की पहाडियों पर रीझ रहा था। तानाशाह के महलों ने उसे दिल्ली भुलवा दी थी। उसके खभो मे से अब भी जल तरग के स्वर निकला करते थे। पत्थरो को इस प्रकार से तराशा गया था कि सरगम के सब स्वर अलग-अलग पत्थरो मे से बज उठते थे और उनकी स्वर लहरी पर दक्षिण की रूप सुन्दरियो का नृत्य होता था। भागमती, पयाल जैसी मृगनैनिया भी दक्षिण के घर मे थी। नित्य नई महफिलो म पयाल जैसी नगर सुन्दरिया उसी प्रकार पर्दों मे से झाकती जिस प्रकार नीली और बैंगनी चादर म से चढते हुए सूर्य की लाली। घूघट के पट म से रूप की देवी जन्म लेती और शराब की प्यालियो म मस्ती आ जाती। साकी के साथ साथ महफिल भी झूम उठती। लज्जा और सकोच से भरी हुई वे सुन्दरिया भोली-भाली दिखाई देती। उनके रूप का भरी महफिल म तमाशा दिखाया जाता। घुंघरू उनकी एडियो से टकरा कर छनक जाते। कमर म लचक आ जाती। पायलें बजने लगती और उन अल्हड युवतियो की कमर सौ सौ बल खाने लगती। घूघट उनके मु ह से हट जाते और कुआरा यौवन महफिल का शृगार बन जाता। मधुशाला की रागिनी सुनकर सूफियो का भी मूछों पर ताव देने को जी कर आता। गाजियों का दिल भी मधुशाला के प्यालो म डुबकी लगाने से पीछे न हटता।

—'मुझे भी एक घूट पी कर देख लेने दो। लोग कहते हैं कि इससे मस्ती छा जाती है।' एक गाजी दूसरे का प्याला छीन कर पी गया। जब मस्ती के डोरे उसकी आखो मे छलकने लगे तब वह अपने आपको भी भूल गया और कहने लगा—'यदि मैं पहले ही जानता कि यह अमृत है तो अल्लाह कसम मैं मुसलमानियत को इस प्याले पर न्योछावर कर देता। बेकार सूफी बनकर जीवन के कई वर्ष बरबाद किये।'

एक सूबेदार ने कहा—'पीओ और खामोशी से पीते जाओ। यदि किसी मौलवी के कानो मे ये शब्द पहुच गये तो शरह के शिकजे मे जकड दिये जाओगे।

तुम्हारी चतुराई निकल जायेगी। इसका मजा तो खामोशी से ही लिया जाता है हो-हल्ला करके नहीं। अभी महफिल की रागिनी को निकलने दो। उड़ते हुए दोरिये के दुपट्टे और घुंघरुओं की छनकार में तुम भी न झूम उठे तो फिर क्या कहना। आनन्द के अतिरेक में यदि झूम न उठे तो महफिल का मजा कैसा। रागिनी के साथ रूप को भी नाचता हुआ देखोगे। गोलकुंडे की खानें यदि हीरों को जन्म देती हैं, तो भागमती तथा पद्मावत जैसी सुन्दरियां भी इसकी गोद में जन्म लेती हैं। पत्थर की छाती में हीरे की चमक तो देखो। पर हाथ मत लगाना। लाजवन्ती के पौधों को दूर से ही देखो पर छुओ मत। हाथ लगाते ही वह मुरझा जायेगा। उसका सौन्दर्य हवा हो जायेगा।' दूसरा कह रहा था।

घुंघरू महफिल की जबान में बोल उठे। साजों ने संगीत छेड़ा। रूप ने मुख उघाड़ा। तब फिर क्या था। साकी के झूमने से महफिल झूम उठी। वाह! वाह!! बहुत खूब! बहुत खूब!! की आवाजें महफिल से निकलने लगीं। उस समय महफिल कान से बहरी और आंख से अन्धी थी। किसी की बात पर ध्यान न दिया जाता। चाहे फिर कोई किसी क्षेत्र का अधिपति ही क्यों न बन बैठा हो।

—'बीजापुर में मराठों ने सिर उठाया है और वे बागी बन बैठे हैं।' एक सिपाही ने आकर कहा।

—'मरदूद कहीं के! तुम समय कुसमय को भी नहीं देखते! अभी जाओ। फिर किसी समय आना। जानते नहीं कि महफिल के रंग को भंग करने की क्या सजा हो सकती है?'

—'बादशाह सलामत खुशी का जश्न मना रहे हैं और मनहूस खबर सुनाने आ धमके।' सूबेदार की भृकुटियों ने सिपाही को उलटे पांव जाने के लिए विवश कर दिया। उसकी आवाज महफिल के हो-हल्ले में लुप्त हो गई।

नाच हो रहा था। मस्ती अठखेलियां कर रही थी। सुराही के चारों ओर प्याले, साकीबाला और पूरी महफिल झूम रही थी। इसी तरह कई दिन यह जश्न चलता रहा। कई रातें नाचते रहने के फलस्वरूप हसीन पायलों की जबान भी थक कर खामोश हो गई और वे चूर-चूर होकर गिर पड़ीं। पर अभी तक मधुबाला का हाथ नहीं खोला था। महफिल वालों ने कदाचित् दो दिनों तक सूर्य के दर्शन भी न किये थे। वे अभी तक महफिल की गोद में ही स्वप्न देख रहे थे। मदमाती आंखों में आज भी नशा था। वे आंखें नहीं खोलना चाह रहे थे। रूप पिंजरे में पड़ गया। कुंवारी उमंगें गोदावरी के जल की तरह अभी शुद्ध और पवित्र थीं। पत्थर जैसे होठों ने उन कोमल कुसुमों का रस चूस लिया। पूरी रात भर के शृङ्गार होते हैं, दिन चढ़ते ही पांव तले कुचल दिये जाते हैं। महफिल भी जब समाप्त हुई तब कई फूल मसले हुए पड़े थे। जिनका रस भौंरों ने चूस लिया था और सीठी महफिल की छाती पर बिखरी पड़ी थी। महफिल के रंगीलो

की आखो के अब भी मस्ती के डोरे छनक रहे थे। बादशाह के साथ सारी फौज भी जशन मना रही थी। रग-रलियो की अधिकता ने मर्यादा का उल्लघन कर दिया। कई तरुणियो की जवानी और इज्जत लूटी गई। रात को उनकी मागो मे सिन्दूर था और वे दुल्हन की तरह सजी थी। दिन चढा तो दुल्हे का कुछ पता ही नही था। रात भर का सुहाग और जीवन भर का वैधव्य। सैनिको ने पहले दारू की बोतलें चढानी शुरू की और फिर अधखिली कलियो का घूघट उघाडना शुरू कर दिया था। अनेक कलिया खिलने से पहले ही मुरझा गई थी और फिर उन्होने आखें तक न खोली।

मराठो के साथ कुछ मुसलमान मिल चुके थे। मराठे पहले ही विद्रोही थे। औरगजेब की मृत्यु ने उन्हे और अवसर दिया। कायम बख्श के कुछ साथी भी मराठो से मिलकर बगावत के झडे गाड बैठ। बहादुरशाह को उस समय खबर हुई जब वे अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा कर चुके थे। अधीन के लगान के रुपये खजाने म न पहुचे। उन्ह मराठो ने रास्ते म ही लूट लिया। मराठो की शह पाकर सूबेदार एक बार फिर बहादुरशाह के साथ दो-दो हाथ करना चाहते थे। एक ओर तख्त का स्वप्न और दूसरी ओर तख्ते का भय।

बहादुरशाह की महफिलें चलती रही और अखाडे जमते रहे। नर्तकियो की पायल की झकार म वह अपनी विजय का स्वप्न तो देखता रहा, पर उसने आखें न खोली। उसके सेनापतियो को भी ऐसी ही गति थी। वे भी दीन-दुनिया को भूले हुए थे।

—'जहापनाह ! बीजापुर के कुछ इलाके मराठा ने लूट लिय हैं और वे बागी हो गये हैं। जहादाद खा, गुलाम हैदर और आलम शाह न भी अपने अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया है। मृत सेनाओ मे जीवन आ गया। कुम्हलाया हुआ फूल हरा हो गया। हो सकता है कि वे सभी मिलकर हैदराबाद पर टूट पडे।'

—'क्या !' बहादुरशाह ने आखें खोली। 'जहादाद खा बागी हो गया है ?'

इस एक ही बात ने सारा नशा हिरन कर दिया। सारी महफिल काप उठी। बहादुरशाह ने क्रोधपूर्वक कहा—'मैं तो मयखाने मे मस्त पडा था पर तुम लोगो को तो होश करना था। चोरो ने सेंध लगाई और घर वाल सोते रहे। अब क्या करना चाहिए।'

—'शाही फौज के आगे किसका साहस है जो सिर उठाये। यदि हमने बागियो को जजीरो म जकड कर हुजूर के सामने पेश न किया तो हम पठानो के जाय नही। शाही फौज ने कई बार मराठो की नाक मे नकेल पहनाई पर वे ढीठ ऐसे हैं कि किसी बात को पल्ले नही बाधते।' एक सूबेदार कह रहा था।

—'कहीं शराब का नशा तो सिर पर चढ कर नही बोल रहा है।' बहादुरशाह ने पूछा।

—'मैं होश में बोल रहा हूं। जहांपनाह ! आप चिन्ता न करें। फौज को कूच का हुक्म दें और जवानों को रकाबों पर पांव धरने दें। हम बीजापुर के विद्रोहियों को पकड़कर हुजूर के सामने ले आवेंगे। 'अली अली' कहते हुए हम बीजापुर की दीवारें छलनी कर देंगे। तब फिर धूम-धाम से जशन मनाया जायेगा।'

गुलाम घोड़े को ले आया और उसकी रकाब पर सूबेदार ने पांव रखा। लगाम खींची तो घोड़ा हवा से बातें करने लगा। 'खुदा हाफिज़' की आवाज़ दूर तक पहुंच रही थी।

गुजरात काठियावाड़ का सूबेदार इमानउल्ला था, बहादुरशाह का बहुत बड़ा मित्र। बहादुरशाह ने उसकी बहुत बड़ी सहायता की थी। एक बार दूसरा लंगोटिया और तीसरा हुकूमत का सूबेदार। सोने में सुगन्ध वाली बात थी। बहादुरशाह को ऐसी प्रेरणा हुई कि उसे भी दक्षिण पहुंचने का निमन्त्रण भेज दिया जाय। बूढ़े इमानउल्ला की बाहु अब भी दुश्मनों की रगों का रक्त पी सकती थी। इमानउल्ला को खबर पहुंचने की देर थी। उसने खड़े पैर कूच कर दिया। मंजिल पर मंजिल पार करता हुआ वह दक्षिण पहुंच गया। बहादुरशाह ने पूरी बात उसे सुनाई। उसने भी उसे पूरी तसल्ली दी। फिर क्या था बहादुरशाह अपने धन्धे में जा लगा।

इमानउल्ला अहमदाबाद के निकट कपूरी नामक गांव का रहने वाला था। कपूरी था तो छोटा सा गांव पर इमानउल्ला ने उसे एक बार तो लाहौर बना दिया था। पक्की हवेलियां और किले बन चुके थे। चारों ओर बाग थे और बीच में शीश महल। भले ही यह सारी कमाई गुजरात और काठियावाड़ की रही हो पर वास्तव में कपूरी इन्द्रपुरी बन चुकी थी। उन दिनों कपूरी का नाम उन्नत शहरों में लिया जाता था। बड़े-बड़े पठानों ने अपने घर कपूरी में बना लिये थे।

इमानउल्ला का एक ही पुत्र था। इमानउल्ला ने विवाह तो चार किये पर ईश्वर ने उसे दी एक ही सन्तान। उसे आशा थी कि उसका पुत्र एक दिन किसी सूबे का सूबेदार बनेगा। पर खालिक को मंजूर न था। भलों के बुरे और बुरों के भले पुत्र तो कुल तार देते हैं। इमानउल्ला अपने पुत्र के लिए अपने दिल में ही बालू की भीतें उठा रहा था। लड़ाई में इमानउल्ला को कई वर्ष लग गये। पर न लौटा। पुत्र के मुंह पर रेखें फूट पड़ीं। अंगूरी ठोड़ी पर जवानी ने अपना रंग दिखलाया।

इमानउल्ला का पुत्र जवान होते ही तमाशबीन, रंगीला और शराबी बन गया। हाथ से कमाई हुई सम्पत्ति का दर्द होता है, बाप-दादा की कमाई पर तो सभी मौज उड़ाते हैं। यही हाल बदरुद्दीन का था। उसे एक खानदान सौदागर

मिली हुई थी। उसने अपने क्षेत्र की कोई रूपवती नही छोडी थी। कोई ऐसा सफेद दुपट्टा बाकी नही बचा था जिस पर उसने काला धब्बा न लगाया हो। उसके साथी अल्हड़ युवतियो की खोज म लगे रहते थे और वह कली को खिलने से पहले ही उसका रस चूस लेता था। वह आदमी से पशु हो चुका था। मा-बहन का अन्तर उसके सामने कोई माने नही रखता था। भले ही उनके पिता के नाक मे उसकी करतूतो की खबर नही पहुची पर दिल्ली तक उसकी रग-रलियो की धूम मच चुकी थी। गाव या आस-पास म यदि किसी तरुणी का विवाह होता तो डोली को एक रात अपने पास रखकर तब वह जाने देता। हर किसी की सोहाग रात कदमुद्दीन के भाग्य मे लिखी थी। पाप की खेती मे पाप के ही फूल खिलते हैं। बात यह थी कि कदमुद्दीन के कई चोर डाकू साझीदार थे।

इन सब समाचारो ने पिता को विवश किया कि वह पुत्र को शीघ्र दक्षिण बुला ले। एक शाही दस्ता दिल्ली से दक्षिण आ रहा था। पिता का हुकुम सुन कर उसकी हवाई जाती रही और शाही दस्ते के साथ मिल कर वह शीघ्र ही दक्षिण जा पहुचा। चाडाल चौकडी का साथ छूटने के कारण उसकी दशा उस आतुर कबूतर जैसी हो रही थी जिसके पख किसी शौकीन ने काट डाले हो। इस तरह इमानउल्ला ने कदमुद्दीन के लिए सभी रास्ते बन्द कर दिये थे। निहत्था कदमुद्दीन कही पख भी नही फडफडाता था।

कायम बदश के साथी और मराठे मिलकर हैदराबाद की ओर बढे चले आ रहे थे। इसलिए नादेड म छावनी डाल लेना बहुत अच्छी बात थी क्योकि वही से वैरियो का अच्छी तरह मुकाबला किया जा सकता था। यही उनके दात खट्टे किए जायें तो बागियो की सेना छिन्न भिन्न हो जायेगी। यही बात बहादुर शाह ने इमानउल्ला के साथ बैठकर विचारी थी। यही सोचकर इमानउल्ला नादेड जा बैठा। इमानउल्ला के जीते जी मराठे आगे न बढ सके। इमानउल्ला के साथ उसका बेटा कदमुद्दीन भी नादेड पहुच गया। शाही फौज ने नादेड को घेरे म ले लिया। स्थान स्थान पर तोपें लगा दी गईं। एक बार तो सिक्ख भी दहल उठे, किन्तु जब पता लगाया तब बात समझ म आई। सिक्खो ने इमान-उल्ला को पूर्ण सहयोग देने का आश्वासन दिया। इस तरह इमानउल्ला नादेड मे छावनी डाले बैठा था। राजगुरु तथा बन्दा वैरागी अपने कार्यो मे सलग्न थे।

रेड्डी आश्रम छोडकर शिकार के पीछे लग गया था, मादा हिरनो का शिकार वह बहुत प्रसन्नता से करता था।

पिता के सामने कदमुद्दीन बात भी नही करता था। लगता था कि उसके मु ह म जबान तक नही है।

'अब्बा जान खाली बैठे मेरा मन नही लगता। यदि आज्ञा दें तो शिकार खेल आऊ।'

—'गोदावरी के उस पार छोटा सा जंगल है। जहा जो चाहे शिकार खेल लिया करो।' इमानउल्ला ने कहा।

थोड़ी सी ढील मिलते ही कदमुद्दीन के अन्दर पुरानी आदतें फिर जाग उठी। भले ही उसका कोई साथी न था, पर रास्ता चलने वाला किसी राही को सहचर बना ही लेता है। कुछ दिनों में उसके साथियो का दल उसी प्रकार बन गया जैसे राही राही मिलकर काफिला बना लेते हैं।

ॐ

६

□□□

पहली मुठ-भेड़

लुबानियो का एक काफिला तीर्थ-यात्रा के निमित्त दक्षिण की ओर आ रहा था। काफिला मथुरा, वृन्दावन, चित्रकूट, उज्जैन तथा नासिक की यात्रा कर चुका था और अब चारो धामो मे से एक धाम की यात्रा करना चाह रहा था। द्वारका, बद्रीनाथ, जगन्नाथ, रामेश्वर यही तो चारो धाम हैं। वृद्ध जन कहा करते हैं कि इन चारो धामो की यात्रा सम्पूर्ण वेद-पाठ के तुल्य है। उन दिनों तब तक कोई ब्रह्म-ज्ञानी नही कहला सकता था जब तक वह चारों धामो की यात्रा न कर ले। ऊंटो, बैलगाडियो घोडियो और पुराने रथो पर काफिला जा रहा था रामेश्वर धाम की यात्रा करने के लिए। जब कोई रामेश्वर की यात्रा करके लौट आता तो जनता उसे देवता तुल्य समझती। उस समय चारो धामो की यात्रा करके कोई विरला ही भाग्यवान् लौटता था। बहुत से लोग तो मार्ग मे ही प्राण त्याग देते और उनके फूल भी चारो धामो मे से किसी एक धाम म भी न पहुच पाते। जब आदमी वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण कर लेता है, तब उसके लिए तीर्थ यात्रा का मुहूर्त निकलता है। इसलिए यात्रा पर निकलने वालो को जनता अन्तिम नमस्कार करती थी। समझती थी कि ये अब वैकुण्ठ धाम की ओर जा रहे है, दुबारा इनके दर्शन दुर्लभ होंगे।

लुवानियो का यह काफिला पजाब से चला था और उसके सभी यात्री भी पजाबी थे। काफिले का मुखिया रामचन्द्र लुवाना था। लुवाने उसे अपनी बिरादरी का पच मानते थे। उसका फैसला अकाल पुरुष के फैसले के समान उन लोगो के लिए शिरोधार्य होता था। जब रामचन्द्र लुवाना तीर्थ यात्रा को तैयार हुआ तो उसकी बिरादरी और पास-पडोस के बहुत से लोग भी यात्रा करने के लिए तैयार हो गए।

रामचन्द्र कपूरी के निकट स्थित सदेडा नामक गाव का निवासी था। इमान

उल्ला उसका साथी था। आधी से अधिक उम्र बिताकर उसने एक कन्या पाई थी। अब वह तरुणी हो चुकी थी। उसका प्यार का नाम इरा था। पर उसका पूरा नाम था इरावती। इरावती अल्हड़, षोड्षी और लुभावनी थी। लोगों के मजबूर करने पर और अपने वात्सल्य के कारण रामचन्द्र लुवाना उसे भी अपने साथ यात्रा पर ले चला। इरा इतनी चचल थी कि काफिले की बूटियों का उससे नाको दम रहता था। लाड़-प्यार से पली हुई यह इरा काफिले का शृगार थी। इरा अच्छी घुड़-सवार भी थी। ऊट की नकेल थामे वह काफिले के आगे चलती। रामचन्द्र ने इरा को पुत्रवत् वीरों की भी शिक्षा दी थी। उसका तीर का निशाना कभी खाली नहीं जाता था। उसकी तलवार की पैतरेबाजी भी सब लोगों ने देखी हुई थी। इलाके भर में तलवारबाजों में उसकी प्रसिद्धि थी। इरा स्त्री क्या वज्र शरीर पुरुष थी। रामचन्द्र काफिले का नाम मात्र का सरदार था। वास्तव में काफिला इरा की कमाण्ड में चल रहा था।

वह काफिला पहाड़, जगल, नदी-नाले पार करता हुआ दक्षिण की सीमा में प्रविष्ट हुआ। काफिले के साथ कुछ सशस्त्र सरदार भी थे और कुछ हट्टे-कट्टे ऊटों पर तोपें भी लदी हुई थी। जब काफिला नादेड की सीमा पर पहुचा तो अचानक काफिले में राजगुरु का सामना हो गया।

—'क्या नादेड को यही रास्ता जाता है ?' इरावती ने घोड़े की लगाम खीचते हुए पूछा।

—'आप लोग नादेड में पहुच चुके हैं। वे हैं नादेड की मीनारें। यही से नादेड की सीमा शुरू होती है।' राजगुरु ने एक बार घुड़सवार की ओर देखकर कहा।

—'आज तक किसी ने नहीं कहा है कि नादेड दूर है। सब ने यही कहा कि वृक्षों के उस पार है। उन सफेद मीनारों के समीप है। आखिर कितनी मीनारें और कितने वृक्षों के पीछे नादेड है।' इरा ने खिजला कर पूछा।

—'शाह-सवार ! समझने में तुम्हें भ्रम हुआ है। भाषा न समझने के कारण मनुष्य को भ्रम हो ही जाता है। घबराने की अब आवश्यकता नहीं। आप नादेड के बीच में हैं। नादेड में आप किस से मिलना चाहते हैं।' टोह लेने के लिए राजगुरु ने पूछा।

—'भगवान् से।' इरा ने कहा।

—'क्या भगवान् से ?' राजगुरु आश्चर्यचकित था।

—'हा भगवान् से !' इरा बोली।

—'पर नादेड में तो कहीं भगवान् नहीं है। मैं तो यहीं का निवासी हू।'

काफिले वाले भगवान् के दर्शनों की आशा से पजाब से नादेड तक पग-पग बढ़ते रहे पर उनका उन्हें कहीं पता ठिकाना न मिला। न तो भगवान् ही ने

अपने मुँह से घूँघट हटाया और न उसके उपासक ही उसके दर्शन कर सके। अब वे नादेड से रामेश्वर तक उसकी खोज करना चाहते थे। सम्भवतः रामेश्वर ही इस काफिले का अन्तिम पडाव था।

काफिला रुक चुका था। रामचन्द्र लुवाना आगे आया। उसने देखा कि एक साधू इरा से बातें कर रहा है। उसके पास पहुंचकर वह कहने लगा—'हम लोग यात्री हैं और नादेड मे शिव-मन्दिर का दर्शन करना चाहते हैं।' नम्रता उसकी आखो से प्रकट हो रही थी।

राजगुरु ने कहा—'किन्तु दाद देनी पडती है उस वीर बालिका की, जिसने लडकी होते हुए भी एक वीर युवक की भान्ति मुझसे बातें की। भारतवर्ष को ऐसी ही युवतियो पर गर्व है जिनके हाथ म चूडियो की झनकार भी हो और तलवार थामने की शक्ति भी हो। जिनकी आखो म लज्जा भी हो और मस्तक पर वीरता की रेखाए भी। किन्तु शिव मन्दिर तो गोदावरी की गोद म जा चुका है।'

—'यह क्या? मर्यादा किस प्रकार बदल गई।' रामचन्द्र ने पूछा।

—'मुगल साम्राज्य मे मर्यादा का बदल जाना कौन-सी आश्चर्य की बात है। नदिया अपना रुख बदलने को बाध्य हो जाती हैं। पुण्य पापियो के क्षेत्र मे नही पनपता। पवित्र आत्मा जुल्म देखकर अपनी आहुति दे देती है। भारतवर्ष की यही मर्यादा है।' राजगुरु के शब्द गूँज रहे थे।

—'गुजरात, काठियावाड का सूबेदार इमानउल्ला, बहादुरशाह की मदद के लिए यहा आया हुआ है और ये उसी के डेरे है और वह केसरी झण्डा पजाब से आए हुए गुरु गोविन्द सिंह का है। गोदावरी के किनारे ऋषि-मुनियो तथा महात्माओ की झोपडिया हैं। आगे बढकर आप लोग देख सकते हैं। जब आप लोगो को गोदावरी दिखाई देगी तब मन्दिर के खण्डहर भी दिखाई पड जाएगे।' राजगुरु ने कहा।

—'एक तो देवता के दर्शन और दूसरे व्यापार का व्यापार। सच्चे साहब गुरु गोविन्द सिंह जी भी क्या यहीं विराज रहे है! जीवन सफल हो गया हमारा। मैं उनके चरणो म बैठकर शिव भगवान् के दर्शन कर लूँगा। दसवें गुरु कब से यहा पधारे हुए हैं?' रामचन्द्र लुवाने ने पूछा। खुशी म वह फूला जा रहा था।

—'आप लोग गुरु जी को कब से जानते हैं।' राजगुरु ने पूछा।

—'पजाब का कौन ऐसा आदमी है जो नीले घोडे के सवार को नही जानता। फिर हमारे तो वे गुरु हैं। हम सभी उनके चेले हैं। हम लोग लुवाने हैं। गुरु घर दीक्षित हम लोग सहज धारी हैं। सिक्खो के पाच ककारो के महत्त्व को मानने वाले हैं। गुरु गोविन्द सिंह जी क चिरजीवो ने कई सिक्खो को

जन्म दिया है। ये क्रान्तिकारी दल में योद्धा तलवारों की छाया में जन्म लेते और घोड़ों की टापों के नीचे पलते हैं। ढालों की दीवार के पीछे ये जवान होते हैं। भले ही इनके भाग्य में महलों के सुख नहीं हैं पर ये जंगल की झाड़ियों में पत्तों की झोंपड़ी बनाकर उसी में महलों का-सा सुख प्राप्त कर लेते हैं। इस समय पंजाब में सभी सिक्ख घने जंगलों में छिपे हुए हैं। मुगल राज्य की शक्ति के सम्मुख उनकी मशालें मन्द पड़ गई हैं। वे घोड़े की पीठ पर ही रहते और सोते हैं। मुगल पंजाब में सिक्खों को सिर नहीं उठाने देते। राख में चिंगारियां छिपी हुई हैं। तलवारों के झक्कड़ उन्हें प्रज्वलित करेंगे। मगर अभी तो मुगलों ने तूफानों, आंधियों और झक्कड़ों को चादर में बान्ध कर रख दिया है।' रामचन्द्र की आंखें आवेश से फूल उठीं। इरा घोड़े पर लगाम थामे खामोश बैठी थी।

—'जेठ के महीने में उठते हुए बवंडरों से यह आशा करना कि वे सम्पूर्ण गगनमण्डल में छा जाएंगे, दुराशा है। यह आकाश को छूना तो चाहते हैं, परन्तु इनका आवेग क्षणिक होता है। इनके उठने और बैठने में देर नहीं लगती। आकाश कुछ ही क्षणों में निर्मल और स्वच्छ हो जाता है। शाही फौजें ऐसे छोटे-छोटे बवंडरों को तो अपने काबू में कर लेती हैं किन्तु सावन के झक्कड़ों से आगे सिर उठाना उनके बूते से बाहर है। झक्कड़ जब सावन की घटाओं को समेट कर लाते हैं तो क्षण भर में ही धरती की तपन मिटा कर उसे जलमय कर देते हैं। इसी प्रकार जब छोटी-छोटी शक्तियां एक झण्डे के नीचे एक होकर सावन के झक्कड़ की तरह उठेंगी तब मुगलों के अत्याचारों को जड़-मूल से उखाड़कर फेंक देंगी। यात्री आगे बढ़ो और नादेड़ की धरती के चरण चूमो। जाकर मन्दिर के खण्डहर में से अत्याचार का चीत्कार सुनो और पाप की गन्ध लो। गुरु दर्शन कर अपना जीवन सफल बनाओ। (इरा से) शाह-सवार घोड़े की रासें ढीली कर दो और काफिले को आगे बढ़ने का आदेश दो।' ये शब्द राजगुरु के थे।

काफिला चलने लगा। रामचन्द्र ने अपनी बहली पर राजगुरु को बैठा लिया। रास्ते में राजगुरु ने कहा—'बहादुरशाह के शासनारूढ़ होने के पश्चात् गुरु जी दक्षिण चले आये और तब से यहीं नादेड़ में टिके हुए हैं। पैंदे खां के पोते ने गुरु साहब की छाती में खंजर झोंक दिया था जिससे उनकी छाती चीर गई थी। शाही जर्राहों ने टांके लगाकर उस घाव को सिया है और उन्हें नादेड़ में कुछ समय के लिए विश्राम करने के लिए बाध्य कर दिया है। अब टांके खुलने ही को हैं।'

—'गुरु गोविन्द सिंह जी का पंजाब से निकलना ऐसा सिद्ध हुआ जैसे पंजाब के प्राण ही निकल गए हों। पंजाब अब शव के समान है। यदि दोबारा गुरु जी पंजाब चलें तो सम्भवतः उस निर्जीव पंजाब में पुनः प्राणों का संचार हो जाए।' रामचन्द्र कह रहा था।

काफिला मुगल छावनी के निकट से निकला जा रहा था।

—'शह सवार! काफिले की देख-रेख भली प्रकार करना। कोई मुगल छेड़खानी करने का साहस न करे। भले ही मुगल हमारे सामने दम नही मारते पर हमे तब भी सचेत रहना चाहिए। (कुछ रुककर) इधर काफिले को मोड लो सामने ही मेरा आश्रम है। वही चलकर डेरा डालो। गोदावरी म स्नान करने की भी सुविधा होगी और साधु-महात्माओ का सत्सग भी होगा। शिव-मन्दिर के खण्डहर भी पास ही है।' राजगुरु ने कहा।

राजगुरु के आश्रम के पास पहुचकर काफिला रुक गया। सभी यात्रियो ने आश्रम मे प्रवेश किया। सुनसान आश्रम मे चहल-पहल हो गई। राजगुरु के कहने पर एक झोपडी खाली छोडकर अन्य झोपडियो मे यात्रियो ने वास किया। यह झोपडी रेड्डी की थी।

—'शह-सवार! इस झोपडी मे मेरा शिष्य रेड्डी रहता है। भले ही वह दक्षिणी है पर है बहुत ही मिलनसार। यदि कोई असुविधा हो तो उमसे कहना। वह तुम्हारी यथा-शक्ति सहायता करेगा। मैं आश्रम म कम ही रहता हू। सिक्खो के डेरे म मेरे लिए कई आवश्यक काम हैं, जिनके लिए मुझे वही रहना पडता है। अच्छा, मैं चलता हू आप लोग विश्राम करें। (रामचन्द्र को सम्बोधित करते हुए) गुर सिक्ख! कल सुबह दर्शन कराऊगा।' इतना कह कर राजगुरु चला गया।

सन्ध्या होते ही मुगलो के खेमो मे घु घरू छनकने, पायलें बजने और जवानिया नाचने लगी। रात बढने पर मुगल अन्धकार की चादर मे खुर्राटे भरने लगे।

राजगुरु के आश्रम म रात भर कथा होती रही। भोर होते ही आसावरी का राग अलापा जाने लगा।

इधर दिन चढते ही राजगुरु और गुरु गोविन्द सिह जी मे बातचीत होने लगी। गुरु जी कहने लगे—'कल दिन भर राजगुरु किस उलझन को सुलझाते रहे जो दर्शन भी न दिए। चाणक्य की तरह कही आप भी कुश की जडो मे मट्ठा तो नही डाल रहे थे।'

—'मैं ता चाणक्य के चरणो की धूल भी नही हू सत्गुरु! हा, नीति की शतरज का एक मोहरा अवश्य हू। मैं विजय के लिए उतना उत्सुक नही हू जितना कि मुगलो के मन म पराजय का भाव भरने को। मैं उन्हे कायरता का बाना और भीरता की बेडिया पहनाना चाहता हू। पजाब से आई हुई यात्रियो की एक टोली को टटोल रहा था सतगुरु! इसलिए मैं कल आपके दर्शन न कर सका। उनके चेहरो पर दु:खो के बादल मडरा रहे हैं। उनम भी अत्याचार के विरोध की ज्वाला भभक रही है। उनकी आखो म बगावत के चिह्न भी मुझे

दिखाई दिए हैं। वे लुवाने हैं सत्गुरु! आपका नाम सुनते ही रामचन्द्र लुवाना प्रसन्न हो उठा। वह सत्गुरु की सेवा में उपस्थित होना चाहता है।'

'उन्हें आपको साथ ही लेते आना था। वे तो हमारे पुराने मित्र हैं। गुरु-घर के श्रद्धालु अपने गुरु के दर्शन हर समय कर सकते हैं। इस दरबार में उनके लिए कोई रोक-टोक नहीं। यह साचा दरबार है। गुरु गुरु भी है और चेला भी।' गुरु गोविन्द सिंह जी कह रहे थे।

× × ×

इमानउल्ला के भय से भले ही कदमुद्दीन के पैरों में जंजीरें पहना रखी थी, पर वह निश्चय बैठने वाला व्यक्ति न था। शारीरिक भूख और कामदेव का भूत उसके सिर पर मंडरा रहा था। किन्तु भय ने उसकी मुश्कें बान्ध रखी थी। शिकार के बहाने से उसकी जंजीरें अवश्य कुछ ढीली पड़ीं। जंजीर जब लम्बी हो जाती है तब उन्हें तोड़ना कुछ विशेष कठिन नहीं होता। कदमुद्दीन दिन भर शिकार खेलता रहता और रात होते ही अपने हमजोलियों की टोली में मौज-मेला मनाता।

इरा भी शिकार की शौकीन थी। उसका बाना बांके राजपूतों जैसा था। बाहरी आदमी के लिए उसे पहचानना कठिन था। लुवानियों ने नांदेड़ में कुछ दिन रहने का निश्चय कर लिया था। इसलिए इरा ने अपने तीर-कमान और शिकारी वस्त्र निकाले। उनका मोर्चा और मैल उतारी। तलवारें सान पर चढ़ाई गईं। इरा का वक्ष शरीर, पत्थर जैसी बाहें, फौलाद जैसी छाती, हिरन जैसी आंखें, तीखे नक्श, पतले अधर, गुलाब के फूल की तरह निखरा हुआ गोरा रंग, चढ़ती जवानी का रूप, राजपूतों सी चाल-ढाल मर्दाने वेष में उसे छैल-छबीला युवक बना देती। वह मर्दों से किसी बात में कम न थी। भय का तो वह नाम भी नहीं जानती थी। शेर के मुकाबले में अकेली डट जाती।

कदमुद्दीन इन्द्र से कम न था। जहांगीर की तरह शराब पर जान देने वाला था। वह बहादुर का बेटा जरूर था पर खुद बहादुर न था। बन्दर भभकी तो वह दे देता था पर पीठ दिखाते उसे देर नहीं लगती थी। वह अगवन और कायर सिद्ध हुआ था। उसका आगा शेर का था और पीछा गीदड़ का। अकेले वह किसी काम में हाथ न डालता था। उसने बन्दूक दूसरों के कन्धों पर रखकर चलाना सीखा था। उसके साथ मुगल साथियों की टोली सदा लगी रहती थी। जनता उसका मान इमानउल्ला के पुत्र के नाते करती। जब कहीं डींग हांकने का समय होता तो वह कहता—'शेर का बच्चा शेर ही होता है।' पर आगे-पीछे उसकी बहादुरी की कोरी धूम मच जाती।

रेड़ही आश्रम छोड़ने के बाद मन्त की अपेक्षा शिकारी अधिक बन चुका था। वह वीर भी था और कोमल हृदय भी। अत्याचार के उन्मूलन की ... भी उसमें थी और रमणी का आर्तनाद सुनकर द्रवित होने की

वह युवा था, बहादुर था और सुन्दर भी था। देखने पर मन रीझ उठता था। आजकल उसकी शिकारगाह गोदावरी के उस पार जगल मे थी।

तीन शिकारी एक जगल मे शिकार खेल रहे थे। रेड्डी एक ओर, कदमुद्दीन और उसका दल दूसरी ओर तथा अकेली इरा घोडे की पीठ पर उछलती-कूदती तीसरी ओर। तीन शेर और एक जगल। दो शेर भी कभी एक जगल म नही रह सके पर वहा तो तीन एकत्र हो गए थे। वास्तव मे शेर तो दो ही थे और तीसरी थी शेरनी। इरा को कोई पहचान नही सकता था। तीनो शिकारियो को शिकार की तलाश थी। इरा के बीर कन्धे पर धनुष, पीठ पर तरकश, कमर मे लटकती तलवार, एक हाथ मे भाला और दूसरे हाथ म घोडे की रास थी। उसकी आखो मे काजल के काले डोरे थे।

कदमुद्दीन भी घोडे पर सवार था। उसके साथी भी घोडो की पीठ पर थे। कुछ साडनी सवार भी उसके साथ थे।

—'यदि अली रहमत को अपनी ऊटनी मिल जाती तो फिर मजा आ जाता। सारे नादेड म ऐसी नाचने वाली ऊटनी नही है।' जुल्फिकार ने कहा।'

'तुम मेरी ऊटनी की प्रशसा नही कर सकोगे। उसके पैरो मे ता घुघरू छनछनाते है। सारा जगल घुंघरुओ की छनछनाहट पर दोहरा हो होकर गिरेगा। हिरनो की डारें चौकडिया भरने लग जाएगी। घुंघरुओ की छनकार पर, और फिर शिकार ही शिकार जुट जाएगे।' अली रहमत कह रहा था।

जुल्फिकार कहने लगा—'तुम्हारी तो वही बात है कि बगले के सिर पर पहले मोम रखी जाए और तब वह पिघलकर उसकी आखो म जा पडे और तब वह स्वय ही अन्धा हो जाएगा। इस प्रकार बगले पकडने मे कौन-सी असुविधा होती है। शेखीबाजो से शिकार नही मारे जाते। साडनी सवार को शिकार की खोज के लिए भेजो और एक आदमी के गले मे ढोल लटकाओ। ढोल पर जब चोट पडेगी तब शिकार सामने प्रत्यक्ष हो जाएगा। जिसकी हिम्मत पडे वह शिकार कर ले।'

रेड्डी इतने बडे जगल मे ताल के किनारे अकेला बैठा हुआ प्रकृति की शोभा देख रहा था। तलवार म्यान मे सो रही थी। कन्धे पर धनुपबाण था और उसके आगे तिरछे मुँह वाला एक बरछा पडा हुआ था। उसकी यही सम्पत्ति थी। थक कर वह विश्राम कर रहा था। ढोल की आवाज उसने भी सुनी और सोचा कि अब कोई शिकार अवश्य निकलेगा। सम्भवत: मुगल शिकारगाह मे आ गए हैं।

इरा का घोडा शिकारगाह मे घूम रहा था। इरा ने उसे एक वृक्ष की छाया मे रोका और विश्राम करने लगी।

साडनी सवार ने जगल मे हलचल मचा दी। हिरनों की डारें जब निकली

तो कदमुद्दीन ने पहली बार में दो हिरन मार गिराये। शेष हिरन बचकर निकल गए और उसके साथी मुँह देखते रह गए। दो हिरन मार गिराने से कदमुद्दीन का हौंसला और बढ़ गया।

एक हिरन इरा ने भी उसी डार में से तीर के निशाने से मार गिराया। और उस डार के बचे-खुचे हिरन रेड्डी ने मार गिराये। इरा दोनों शिकारियों के बीच में थी। जो हिरन कदमुद्दीन का वार बचा निकला था उस पर इरा निशाना लगाती और भाग्य से यदि उससे भी बच निकलता तो वह रेड्डी का शिकार बनता। दोनों में अधिक दूरी न थी। इरा ने दो हिरन अपने घोड़े की काठी से बाँध लिए। कदमुद्दीन ने भी दो तीन हिरन अपने घोड़े की काठी में बाँधे। दिन ढलने पर हिरनों की एक डार चौकड़िया भरती हुई कदमुद्दीन को दिखाई दी। उसमें एक कस्तूरी मृग भी था जिसे देखकर कदमुद्दीन ने अपने साथियों से कहा—'बहादुरो, अपना-अपना शिकार बाँट लो और कोई किसी के शिकार का पीछा न करे। मैं उस काले कस्तूरी मृग को मारूँगा।' यह बात सुन कर रहीम बख्श ने कहा—'मेरे हिस्से पहला हिरन रहा।'

—'दो छोड़कर तीसरा मेरा रहा।' गुलाम हैदर कह रहा था।

—'चलो यारो हम पिछला हिरन मारेंगे।' एक अन्य साथी ने कहा।

—'क्यों कहो शमस खाँ! तुम कौन-सा हिरन मारोगे?' कदमुद्दीन ने पूछा।

शमस खाँ ने उत्तर दिया—'सूरमाओं से जो हिरन बच निकलेगा मैं उसी को मारूँगा।'

सभी साथी अपने अपने हिरनों के पीछे जा लगे। कदमुद्दीन का घोड़ा काले कस्तूरी मृग के पीछे था। उसकी नाभि में अवश्य कस्तूरी होगी क्योंकि सारा जंगल महक रहा था। ऐसा हिरन कभी-कभार ही दिखाई पड़ता है। हिरन चौकड़ियाँ भरता हुआ आगे-आगे जा रहा था और कदमुद्दीन उसके पीछे-पीछे। हवा से बातें करने वाला घोड़ा उस काले हिरन के पीछे बे-तहाशा दौड़ रहा था। फिर भी हिरन उसकी पहुँच से निकलता हुआ दिखाई देता था। सन्ध्या का सूर्य वृक्षों की आड़ में हो गया। कदमुद्दीन ने दूर से उस पर भाले से वार किया, जिससे हिरन सहमकर एक चट्टान की आड़ में खड़ा हो गया। कदमुद्दीन ने समझा कि हिरन जख्मी हो गया है। घोड़े से उतरकर वह हिरन को पकड़ने के लिए उसकी ओर बढ़ा। हिरन घबरा गया था। भाला चाहे उसके पास से ही निकल गया था किन्तु फिर भी वह चुप खड़ा था। चट्टान की बाईं ओर नदी बह रही थी और इरा उसके तट पर पानी से खेल रही थी।

जब कदमुद्दीन हिरन के पास पहुँचा तब हिरन चौकड़ी भर कर चट्टान की दूसरी ओर जा खड़ा हुआ। आगे झाड़ी की आड़ में से एक शेर [illegible] को

घूरने लगा। कदमुद्दीन ने आगा सोचा न पीछा कूदकर चट्टान पार कर गया। उधर शेर दहाडते हुए हिरन पर झपट रहा था कि कदमुद्दीन हिरन और शेर के बीच मे जा पडा। शेर की दहाड सुनकर सूरमा घबरा गया और उसके प्राण सख गए। हिरन तो इस बीच मे भाग निकला अब कदमुद्दीन ही उसके सामने था। इतने मे उसके दो साथी वहा आ पहुचे। कदमुद्दीन ने चिल्ल-पो तो मचाई किन्तु उसके साथी शेर को देखते ठण्डे पड गए। जानबूझ कर मौत के मुँह म कौन जाता है। कदमुद्दीन ने बहुत घिरौरी की पर किसी ने उस पर ध्यान न दिया और चुपके से खिसकने लगे। जाते-जाते एक साथी ने कहा—हम दूसरे साथियो को लेकर अभी आते हैं।

कदमुद्दीन की जान जोखिम मे पडी थी। डरते हुए उसने तलवार म्यान से निकाली। मरता क्या न करता। भले ही कदमुद्दीन का खून पानी हो रहा था पर उस समय मुकाबला करना ही बुद्धिमत्ता थी। सम्भव है शेर चपेट मे आ ही जाए! शेर गरज रहा था सावन के बादलो की भान्ति। कदमुद्दीन ने डरते-डरते शेर पर तलवार का वार किया, जिससे शेर कुछ जख्मी हुआ और उसके शरीर से खून की कुछ बून्दें टपकने लगी। चोट खाकर शेर भयानक रूप धारण कर बैठा। उसम बदले की भावना जाग उठी। कदमुद्दीन के पास ढाल भी थी जिससे वह अपना बचाव कर रहा था। पर शेर क एक ही झपटे म कदमुद्दीन क हाथ से ढाल छूट कर कुछ दूर जा गिरी और वह चीख उठा। इरा यह तमाशा दूर खडी देख रही थी। कदमुद्दीन को मौत के पजे म पडा देखकर वह बिजली की तरह उठी और शेर के सामने आकर खडी हो गई। मौका पाकर कदमुद्दीन भाग निकलने की कोशिश करने लगा। इरा और शेर का मुकाबला शुरू हुआ। कूदकर शिकारी पर झपटा। इरा ने तलवार का ऐसा हाथ मारा कि तलवार शेर की कमर से आर-पार हो गई। शेर एक बार पुन: गरजकर इरा पर झपटा जिससे इरा की पगडी उतर गई और जूडे मे रूप म बन्धे हुए काले लम्बे केश कन्धो पर लहराने लगे। तब इरा ने बिजली की तरह तडप कर शेर पर दूसरा वार किया और उसे सदा के लिए सुला दिया।

कदमुद्दीन दूर खडा यह दृश्य देख रहा था। वह हर्षित होकर बोला—'वाह रे बहादुर! धन्य है वह मा जिसने तुम्हे जन्म दिया। रहम अल्ला ताला रहम!' कदमुद्दीन आखें बन्द किए हुए खुदा का शुक्रिया अदा कर रहा था। फिर जब आखें खोल कर उसने इरा की ओर देखा कि यह राजपूत युवक नही युवती है तो उसकी आखो मे प्यार के डोरे चमक उठे।

—'कौन? राजपूत के वेश मे एक बाकी नार।'

एक बार मन ने उसे उसकी कायरता पर उसे कोसा पर वह ढीठ इरा जैसी सुन्दरी को देखकर मर्यादा का पर्दा हटा बैठा। वह भूल गया कि यह मेरी जीवन रक्षक है। कदमुद्दीन के साथी भी तब उसके पास आ पहुचे।

—'ठहरो बाके सवार ! हम तुम्हें सूबेदार से इनाम दिलाएंगे ।' इतना कहकर इरा की ओर बढा ।

उसे अपने पास आते हुए देखकर इरा ने कड़े स्वर में हुए कहा—'जाओ ! तुम्हारी जान बच गई और क्या चाहते हो ।'

वह हसता हुआ कहने लगा—'मेरी जान खफा क्यो होती है ? आप हमारे साथ चलें । आपको इस उपकार के बदले में हम सूबेदार से इनाम दिलवाएंगे ।'

उसकी आखो में लालसा के चमकते हुए डोरे इरा ने भाप लिए ।

—'अपनी नियत साफ करो युवक ! मुझे सूबेदार का इनाम नहीं चाहिए । जाओ अपनी राह पकड़ो ।'

—'तुम्हे छोड़कर कैसे जाऊं ! इस जान की अब तुम्हीं मालिक हो । आओ हमारे साथ चलो ।'

—'जिस तलवार ने शेर के टुकड़े किए हैं वह अब भी मेरी म्यान में है । मूर्ख युवक ! होश सम्भालो ।'

—'जिस कलाई में चूड़िया खनकनी हैं वह अब तलवार के दस्ते पर हाथ रखने की सलाह देती है ? मैं नहीं जानता था कि राजपूत के वेश में एक स्वर्गीय अप्सरा छिपी हुई है । कोमलांगी को तलवार का शौक कैसा ! क्या नयनों के बाण शिकार करने में विफल सिद्ध हुए हैं ।'

—'कैंची की तरह जबान चलाते हुए तुम्हें लज्जा नहीं आती ! शेर के सामने तो भीगी बिल्ली बन गया था और कायरों की तरह थर-थर कांप रहा था । यदि उस समय ये चूड़ियों वाले हाथ तलवार न उठाते तो अब तक तुम नरक का मुंह देख रहे होते । निर्लज्ज कुछ तो लज्जा करो ।' इरा ने कहा ।

—'एक सुन्दरी के सामने नौजवान को लज्जा कैसी ! तुम चांद का निखार देखो ! आकाश की नीली चादर का मण्डन देखो ! तारों की बारात देखो ! नदी का उल्लास देखो ! जगत की खामोशी की दाद दो ! ऐसा एकांत जीवन में कदाचित् फिर न मिले । आओ मैं अपनी बांह फैलाता हूं तुम उस पर अपने रेशमी बालों का जाल बिछाओ । मुझे नयनों के तीरों का शिकार बनाओ । खून की प्यासी तलवार को दूर फेंको ।' आगे बढ़ता हुआ कदमुद्दीन कह रहा था ।

'आओ सुन्दरी ! छलछलाती हुई प्रेम की तरंगों की तरह ।'

—'ठहरो भीरु ! पापी = चाण्डाल !!! यदि एक पग भी आगे बढ़े तो मेरी तलवार का वार सह नहीं सकोगे । क्यों अपनी मां की गोद खाली करने को उतावले हो रहे हो । अपने बूढ़े पिता की लाठी का सहारा क्या गवाने को मुझे बाध्य कर रहे हो । रणवास में जाकर बैठो और चूड़ियां पहनो । मैंने तुम्हारी बहादुरी का जौहर देख लिया है । मुझे लगता है कि किसी मुगलानी ने तुम्हें दूध

नही पिलाया बल्कि किसी गाय के दूध से पले हो। मनुष्य इतनी जल्दी कृतघ्न नही हो जाते।' इरा का मुख क्रोधाग्नि से जल रहा था।

—'शेर का शिकार किया है कही दिल्ली विजय तो नही कर ली। ऐसा मरियल शेर तो हमारे गाव मे मुसहर भी मार लेते हैं। तुम अत्यधिक धृष्ट प्रतीत होती हो। तुम नही जानती कि मैं गुजरात के सूबेदार इमानउल्ला का पुत्र हू। मुगल किसी की धृष्टता सहने के अभ्यस्त नही। तुम्हे एक अबला के नाते क्षमा करता हू। तुम्हारे पास रूप का सागर है। तुम्हारी बाहो मे खजर की धार है। तुम्हारे गालो के आगे गुलाब की पखुडिया भी पानी भरती हैं। नरगिसी आखें किसी की मोहताज नही जान पडती। दात ठोस कणो की भाति चमकने वाले हैं। ओठो की सुरखी अनार के फूलो की सुरखी को मात कर रही है। तुम्हारा सरो जैसा कद और मोर जैसी लचक भरी चाल है। आखो मे दुनिया भर का जादू सिमटा हुआ है। तुम्हारी मुस्कराहट ने दुनिया के लिए मुहब्बत का भण्डार खोल रखा है। यदि तलवार की जगह इशारे से काम लो तो चम्बक की शक्ति और सितम की कु जी तुम्हारी मुट्ठी मे आ जाए। तुम किसी की यवराज्ञी बन सकती हो। देखो तुम्हारे रूप के आगे चन्द्रमा का रूप भी फीका पड गया है। जरा एक बार फिर से पगडी उतार कर अपनी काली जुल्फो को बिखेरो। विष उगलने दो एक बार पिटारी मे ढकी हुई काली नागिनों को। मैं तुम्हारे रूप से प्रभावित हो चुका हू। उसका दीवाना बन चुका हू। अल्ला गवाह है कि मैं अपनी सुध मे नही हू। तुम्हारी जान की कसम मैं तुम पर फिदा हो चुका हू। मैंने ऐसा रूप पजाब मे लेकर दक्षिण तक कही नही देखा।' कदमुद्दीन कह रहा था।

—'तलवार तुम्हारे कामुकता से मदान्ध नेत्र खोल देगी। स्वप्न देखने वाले को तलवार की झनझनाहट जगा देती है। हवा मे किले बनाने वाले कायर अपनी तलवार सम्भाल।' इरावती ने तलवार म्यान से निकाल ली।

कदमुद्दीन के साथी पास खडे-खडे इरावती की प्रगल्भता देख रहे थे।

—'तलवार निकालने से पहले अपनी जवानी और सौन्दर्य पर रहम खाओ। चाद जैसे मुखडे को युद्ध की ज्वाला से क्यो झुलसाना चाहती हो। चार दिन का ऐश-मौज लूट लो। यह जवानी सदा बनी नही रहेगी। इस सौन्दर्य के आगे शहजादे सिर नवायेंगे। जरा तुम जी खोल कर हसो और बोलो तो। अच्छा यह हो कि तुम स्वय कुछ निर्णय कर लो अथवा हमे निर्णय करने के लिए बाध्य होना पडेगा। तुम्हे फिर समय दिया जाता है।' कदमुद्दीन ने जरा नरमी से कहा।

—'मैं नही जानती थी कि दीन वेश म एक चाडाल छिपा बैठा है। मुझे क्या आवश्यकता थी कि शेर से तुम्हारी रक्षा करती, मैं तो केवल इसी बात की

अपराधिनी हूं कि मैंने तुम्हारी जान बचाई है। पुण्य का बदला क्या पाप से देना चाहते हो। मेरी चूड़ियों वाली कलाई मत देखो ये हाथ तलवार के भी धनी हैं।' इरा ने कहा।

—'यह तुम्हारा धर्म था। हमारा मजहब इजाजत नहीं देता कि वश में आये हुए वैरी को छोड़ दिया जाए। वैरी ऐसे ही कभी वश में आते हैं, नित्य नहीं। तुम्हारे धर्म में नवजात शिशु के कान में मन्त्र पढ़ा जाता है—'दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान।' पर हमारे मजहब में ऐसा नहीं होता। हम लोग नवजात शिशु के कान में कलमा पढ़ते हैं और कहते हैं कि जो हमारे रसूल, अहले इस्लाम और कलमे पर ईमान नहीं लाता वह काफिर है। उसे मारने से ही सवाब होता है। ऐसा करने में यदि आदमी स्वयं मर जाता है तो वह शहीद समझा जाता है और विजयी होने पर गाजी। मुहम्मद गौरी ने धावे किये। और कई बार पृथ्वीराज ने उसे रण में पछाड़ा तथा बन्दी तक बनाया। पर उस मरद के बच्चे ने हिम्मत न हारी। अनुनय विनय करके उसने कई बार अपनी जान बचाई। पर जब पृथ्वीराज उसके वश में आ गया तब उसने रत्ती भर मुरव्वत न की। महमूद गजनवी बहुत बड़ा समझदार था। समय पर आँखें नीची कर लीं और मौका मिलने पर दीन की इज्जत रखी। यही नीति है। इसी नीति के फलस्वरूप हमारा प्रताप चढ़ती जवानी पर है। तुम्हारे धर्म का ठुकराया हुआ हमारे मजहब में मिलकर सिर का ताज बन जाता है। सब मुसलमान बराबर होते हैं। उसमें नीच या अछूत कोई भी नहीं होता, एक ही महफिल में बादशाह और फकीर हुक्का पी सकते हैं। एक ही दस्तरखान पर सिपाही और सूबेदार रोटी खा लेते हैं। हम में कोई मतभेद नहीं। दूसरे को जलाने वाली आग में कूदने वाला क्या मूर्ख नहीं होता। शेर की गरज ने तुम्हारी बहादुरी को ललकारा था। तुम मेरी जान बचाने के लिए नहीं बल्कि अपनी बहादुरी को परखने आई थी। अल्लाताला बहुत रहीम हैं शक्कर खोरे को शक्कर दे ही देता है और गोश्त खोरे को गोश्त। मुझे आखेट स्थल में सौन्दर्य का दर्शन हो गया। यदि तुम शेर के मुकाबले के लिए न आती तो हम किस प्रकार तुम्हारे रूप के सरोवर में स्नान कर पाते। खुदा ने जन्नत से हमारे लिए हूर भेजी है।'

—'हुजूर ! यह खुदा की देन है। हुजूर से मेल मिलता है। आकार-प्रकार एक ही साँचे में ढले हुए जान पड़ते हैं। सरकार का हरम सूना पड़ा है। इसके आने से हरम में जान आ जाएगी। रात्रि में दीप मालाएं होंगी और दिन में ईद।' जुल्फिकार ने कहा।

—'समय के पारखी हो जुल्फिकार। तुम्हारी सूझ की दाद देनी पड़ती है। हरम में सचमुच भूत नाचते हैं। इसके कदम पड़ने पर उसकी काया-पलट हो जाएगी।'

—'अच्छे खान-दान की लडकियो से छेड-खानी नही की जाती। मैं तुम्हारी बहनो के बराबर हू।' इरा ने कहा।

—'फिर क्या हुआ! हमारे मजहब मे बहन से निकाह करना जायज है।' कदमुद्दीन ने अकडकर कहा।

—'नादान आदमी! यदि तुम्हे अपनी जान प्यारी नही तो आ और देख इन नाजुक हाथो की करामात।' इतना कहकर उसने कदमुद्दीन पर वार किया। किन्तु कदमुद्दीन सचेत था। पैंतरा बदलकर उसने वार बचा लिया और स्वय तलवार निकालकर उसके सामने खडा हो गया। दोनो ओर से तलवारें चलने लगी। तलवारो मे से आग की चिनगारिया निकलने लगी। कदमुद्दीन के सिपाही दोनो की बहादुरी देखने लगे। इरा का हाथ भरा-पूरा और तुला हुआ पडता था। ऐसा मालूम होता था कि वह कदमुद्दीन का वध नही करना चाहती। कदमुद्दीन उसके वार बचाता हुआ पीछे हटता आ रहा था। कुछ समय की लडाई मे ही कदमुद्दीन का दम फूलने लगा। इरा के एक वार से उसके हाथ की तलवार दो टुकडे होकर दूर जा गिरी। इरा ने अपनी तलवार की नोक उसके वक्ष पर रखते हुए कहा—'बतला रे कायर! क्या कुछ और इन कोमल कलाइयो की शक्ति परखना चाहते हो। मैं चाहू तो तुम्हे अभी यमपुरी पहुचा दू। किन्तु रक्षक को भक्षक बनते हुए सकोच हो रहा है।'

—'निहत्थे पर वार करना कोई बहादुरी नही। तलवार टूट चुकी है दूसरी तलवार लेने का समय दो।' कदमुद्दीन ने कहा।

—'तुम दया के पात्र तो नही हो, पर मैं अपनी बहादुरी पर आच नही आने देना चाहती। तलवार पकडो और दिल की उमग पूरी कर लो। कही हसरत दबी न रह जाए।' इरा ने कहा।

एक सिपाही ने कदमुद्दीन के हाथ मे दूसरी तलवार दे दी। इरा का ध्यान अभी कदमुद्दीन के साथियो पर ही था कि कदमुद्दीन ने ऐसा वार किया कि इरा के हाथ से तलवार नीचे गिर पडी। तलवार छूटते ही इरा ने खजर से तडपकर कदमुद्दीन पर वार किया। वह तो वार बचा गया पर खजर ने उसके एक साथी के प्राण ले लिए। कदमुद्दीन और उसके साथियो ने निहत्थी इरा को अपने घेरे मे ले लिया।

—'क्या निहत्थे पर वार करना बहादुरी है?' इरा ने पूछा।

—'तुम्हे तलवार देकर अपनी मृत्यु कौन बुलाए। मैं अपने हाथ मे आए हुए शत्रु को कभी नही छोडता। रण क्षेत्र मे शत्रु पर दया करने वाला मूर्ख होता है। तुम्हे तलवार न देने से मेरी बहादुरी पर दाग न लगेगा। (सिपाहियो को सम्बोधित करते हुए) इसे बाध लो। सौन्दर्य को पिंजरे मे बन्द कर लो। इसके पावो मे जजीर डालने की आवश्यकता नही। इसके पाव मे पायलें शोभा देगी। पायल की झन्कार इसकी शेखी भुला देगी।' कदमुद्दीन ने कहा।

इरा ने बन्धन तोड़ने की विफल चेष्टा की। इतने सिपाहियों के आगे उसकी पेश न चली। निहत्थी पर सभी गीदड़ शेरों की तरह झपट पड़े और उसे पकड़कर एक पेड़ से बांध दिया।

कदमुद्दीन ने इरा को सम्बोधित करके कहा—'सुन्दरी! यदि तुम एक बार मुस्करा दो तो मैं तुम्हारा बन्दी बन सकता हूं। वैसे तो हमारी तलवारों ने कई शेखीबाजों के दांत खट्टे कर दिए हैं। तुम किस खेत की मूली हो।'

—'एक बार तुम मेरे हाथ में तलवार दे दो तो मैं तुम्हें गाजर मूली का भाव बता दूं।'

—'हुस्न को तैश में उबाल आया करते हैं हुजूर! किन्तु वे ठण्डे भी जल्दी पड़ जाते हैं। पारा थोड़ी गर्मी से ही जोश में आ जाता है और ठण्डी हवा का एक झोंका उसे ठण्डा भी कर देता है। हुस्न और पारे का जोश एक ही जैसा होता है। कुछ ही क्षणों में हुस्न आपके कदमों पर पड़ा होगा सरकार।' जुल्फिकार खां कह रहा था।

—'हुस्न की देवी जरा इस पुजारी पर कृपा करो। रूपसी को इतना अभिमान नहीं करना चाहिए।' कदमुद्दीन ने इरा की ठोडी को जरा ऊपर उठाते हुए कहा।

इरा—'अपवित्र हाथों से मुझे स्पर्श करने का दुस्साहस मत करो। मेरे शरीर पर हाथ मत लगाओ कमीने! कायर!'

—'दो-चार कोड़े लगाकर इसकी अकड़ निकाल दो। लातों के भूत बातों से नहीं मानते।' कदमुद्दीन एक सिपाही से कह रहा था।

कोमल शरीर पर एक के बाद एक कोड़े पड़ने लगे किन्तु इरा का मुंह तेज से चमकता रहा। उसका नारीत्व उज्ज्वल होने लगा। उसने अपनी लाज बचाने के लिए इन कमीनों का जुल्म बहादुरी की तरह बरदाश्त किया। मार खाते-खाते वह मूर्छित हो गई पर उसके मुंह से आह तक न निकली। मूर्छित देखकर कदमुद्दीन ने उसे पेड़ से खोलकर धरती पर लिटा दिया। कुछ समय बाद पानी के छींटे देने पर इरा होश में आ गई। निर्लज्ज की तरह कदमुद्दीन कह रहा था—'क्यों सरकार मिजाज कैसा है?'

—'तुम यह सोचने की भूल करते हो कि ये कोड़े मुझे तुम्हारा गुलाम बना देंगे।' इरा कदमुद्दीन की आंखों में वासना की झलक देखकर छटपटा उठी। और अपने ऊपर झुके हुए कदमुद्दीन को एक ओर धकेलकर उठ भागी। आगे इरा थी और उसके पीछे कदमुद्दीन और उसके साथी थे।

रेड्डी कस्तूरी मृग को उठाए तथा कस्तूरी की गन्ध में मस्त चला आ रहा था। अनायास इरा का धक्का लगने से वह चौंक पड़ा। घने जंगल में डरी हुई सुन्दरी को देखकर वह चकित हुआ। इरा रेड्डी के माथे पर चन्दन का तिलक देखकर समझ गई कि यह हिन्दू है। रेड्डी ने पूछा—'तुम कौन हो।'

—'मैं हिन्दू बालिका हू। मेरे पीछे मुसलमान भेडिये लगे हुए हैं।' इरा ने इतना कहा और रेड्डी की कमर म लटकती हुई म्यान मे से तलवार निकाल ली और पैंतरा बदलकर खडी हो गई।

कदमुद्दीन और उसके साथी कुत्तो की तरह सू घते-सू घते उसके पास आ पहुचे। इरा ने शेरनी की तरह तडपकर उन पर आक्रमण किया। कदमुद्दीन तो वार बचा गया पर उसके दो साथी एक ही वार म यमलोक सिधार गए। पास खडा रेड्डी इरा की बहादुरी और उसकी फुर्ती देखकर दग रह गया। इरा की तलवार उस समय काले बादलो म बिजली की भान्ति चमक रही थी। एक बार तो कदमुद्दीन के साथी पीछे हट गए पर दोबारा हिम्मत करके वे इरा को घेरने लगे। कदमुद्दीन खजर से उस पर वार करना ही चाहता था कि रेड्डी ने अपनी म्यान से उसके हाथ का खजर गिरा दिया। यह देखकर कदमुद्दीन ने अपनी म्यान से तलवार खीच ली और रेड्डी पर वार किया। रेड्डी पैंतरा बदलकर वार बचा गया। बदले म रेड्डी ने भाले स कदमुद्दीन पर ऐसा वार किया कि वह जख्मी होकर गिर पडा। उसे घायल पडा देखकर मुसलमान सिपाही भाग खडे हुए।

इरा ने रेड्डी स कहा—'इस दुष्ट को बाधकर पिता जी के पास ले चलना चाहिए।'

रेड्डी—'तुम्हारा घर कहा है? तुम दक्षिण निवासी नही प्रतीत होती।'

—'हम लोग यात्री हैं और पजाब निवासी हैं। राजगुरु नामक साधु ने हम अपने आश्रम मे ठहराया है।' इरा ने कहा।

कदमुद्दीन को बाधकर और घोडे पर रखकर आश्रम की ओर वे दोनो चल पडे। इधर आश्रम म इरा की प्रतीक्षा हो रही थी। सब लोग गोदावरी की ओर उचक उचक कर देख रहे थे। मार्ग म जाते-जाते रेड्डी ने इरा से कहा—'अब सिक्खो के गुरु गोविन्द सिंह जी को जो मुगलो की मित्रता का दम भरते हैं मालूम हो जाएगा कि मुगल सिपाही उनके कितने बडे मित्र हैं।'

आश्रम के समीप पहुचने पर राजगुरु ने उन दोनो को देखकर रामचन्द्र से कहा—'इरा मुगलो से हारने वाली नही। एक ही दाना देग मे से देखा जाता है। देखो वह आ रही है।'

—'उसके साथ दूसरा कौन व्यक्ति है।' रामचन्द्र लुबाने ने पूछा।

—'रेड्डी है। मेरा शिष्य। पर रेड्डी के घोडे पर यह बेहोश आदमी कौन है।' राजगुरु ने चकित होकर कहा।

—'यह मुगल सवार है। अपने आपको गुजरात के सूबेदार इमानउल्ला का पुत्र बतलाता है। यह चाडाल आखेट स्थल मे इरा को घेरे हुए था। मैं समय से पहुच गया। और आगे जो होना चाहिए था वही हुआ। इसे हम आप की सेवा मे ले आए हैं।' रेड्डी ने कहा।

रेड्डी की बात सुनकर राजगुरु ने कहा—'समय आने से पहले ही तुमने भिड़ के छत्ते को छेड़ दिया है। जानबूझ कर तुमने साप के बिल में हाथ डाला है रेड्डी। ऐसा करने से पहले किसी बीन बजाने वाले को तैयार कर लेना था। आग में कूदने से पहले अपने हाथ में पानी का फुहारा ले लेना अच्छा होता है। समुद्र में कूदने से पहले तैरना सीख लेना आवश्यक होता है।'

—'क्या हुआ गुरुदेव। आप तो अकारण ही चिन्तित हो रहे हैं। मैं ऐसा करने के लिए विवश था। इरा को घेर कर वे उसकी इज्जत लूटते और मैं तमाशा देखता ! दुश्मन के सिर उठाने से पहले ही उसे दबा देना चाहिए।' उत्तेजित स्वर में रेड्डी कह रहा था। उसके माथे पर बल पड़े हुए थे।

—'तुमने इरा को तो बचाया बेटा किन्तु असंख्य द्रौपदियों को बचाने का रास्ता रोक दिया। तुमने हमारे कानों में सीसा डाल दिया जिससे हम अब पंजाब की अबलाओं का चीत्कार नहीं सुन सकेंगे। हम जब तक अपने पाव पतास तक नहीं पहुंचा लेते तब तक बहादुरशाह को अपना शत्रु नहीं बना सकते। मुगल हमारे सामने झुकते हैं इस लिए हम उन्हें अपने मुकाबले पर खड़ा करना नहीं चाहते। हम बहादुरशाह की ही सहायता से पंजाब के सूबेदारों को कुचलना चाहते हैं।'

—'राजगुरु ! बच्चों का उत्साह मन्द नहीं करना चाहिए। दिल तो एक शीशा है जो एक बार टूट जाये तो फिर जुड़ता नहीं। एक मुगल को यदि दण्ड दिया गया है तो कोई बड़ी बात नहीं। आगे से वे भी सावधान हो जायेंगे। जने-खने के पीछे पड़ने से पहले वे अब कुछ सोच समझ लिया करेंगे। भेड़ की हत्या से हम फासी नहीं लिये जा रहे हैं। इस जख्मी के घावों की मरहम-पट्टी कर के इसे इमानउल्ला के पास पहुंचा देना चाहिये और घटना का सच्चा चिट्ठा उसके कानों तक पहुंचा देना चाहिये। वह समझदार है कोई बेवकूफ नहीं।' बन्दा बहादुर कह रहा था।

—'किन्तु जो सिपाही मार खाकर गये हैं न जाने वे क्या शगूफा खड़ा करेंगे। उन्होंने सारा दोष रेड्डी के मत्थे मढ़ने की चेष्टा की होगी। और हो सकता है कि इमानउल्ला बहादुरशाह को यह लिख भेजे कि यहां सिक्खों की राह पर कुछ वारदातें हुई हैं। इमानउल्ला तो पहले ही सिक्खों को कुचलने के मनसूबे बांधे बैठा है। वह बहादुरशाह को बगावत का डर दिखाकर सिक्खों को कुचल देना चाहेगा। यदि आग भड़क उठी तो हमारी आशाओं पर पानी फिर जायेगा। अभी हम अपने पावों पर खड़े नहीं हो पाये हैं। मुझे तो डर इसी बात का है।' राजगुरु ने कहा।

—'बहादुरशाह पर सिक्खों के इतने एहसान हैं कि वह आख भी नहीं उठा सकता। क्या वह इस छोटी सी बात पर सिक्खों को वैरी बना लेगा। आप

लोग उसकी मरहम-पट्टी करें मैं तब तक सत्गुरु को सूचित कर आता हू।' बदा बहादुर इतना कह कर चला गया।

भगोड़े सिपाहियो ने जाकर इमानउल्ला के कान भरे और वह भड़क उठा। उसकी आखो म खून उतर आया। कुछ मशालचियो तथा सिपाहियो को लेकर उसने आश्रम को चारो ओर मे घेर लिया। नगी तलवार लेकर वह स्वय डेरे के अन्दर घुसा। उसके पीछे-पीछे कुछ सिपाही भी थे। डेरे वालो को धमकाते हुए उसने पूछा 'वह कौन है जिसने मेरे बेटे कदमुद्दीन को ज़ख्मी किया है ?'

राजगुरु—'कदमुद्दीन हमारे डेरे मे आराम कर रहा है। उसकी मरहम पट्टी हो चुकी है। लडके लडके आपस म भिड गय हैं। मजाक ही मज़ाक म यह सब हुआ है। आपके बेटे को कोई ज्यादा चोट नही आई है। घबराने की कोई बात नही। लडको ने राई का पहाड बनाकर आपको बतलाया होगा।'

क्रोध से चिल्लाकर इमानउल्ला बोला—'चुप रहो बुड्ढे ! एक तो कदमुद्दीन को ज़ख्मी किया और ऊपर स हमले हो।'

इमानउल्ला की चिल्लाहट सुनकर गुरुगोविन्द सिह जी भी वहा आ पहुचे। बन्दा वैरागी भी उनके साथ था। इमानउल्ला ने रोब से पूछा—'कहा है कदमुद्दीन ?'

गुरु जी—'इधर आ जाइये सूबेदार जी बच्चो की लडाई मे बडो का आवेश मे नही आना चाहिए।'

'इतने म एक सेवादार कदमुद्दीन को सहारा दिये वहा ले आया। कदमुद्दीन अपने पिता को देखकर 'हाय' 'हाय' करता हुआ उसके गल स लिपट गया। अपने पुत्र को हाय हाय करता देखकर इमानउल्ला की आखो म खून उतर आया। उसने क्रोध रोकते हुए कहा—'आप उस आदमी को मेरे हवाले करें जिसने कदमुद्दीन को ज़ख्मी किया है। उसे अवश्य दण्ड दूगा जिससे वह दोबारा किसी मुगल सिपाही से भिडने का साहस न कर सके। (कदमुद्दीन स) दु खी मत हो मेरे बच्चे ! मैं तुम्हारे खून की पूरी-पूरी कीमत वसूल करूगा।'

गुरुगोविन्द सिह—'बाज सिंह ! कदमुद्दीन को पालकी म बैठाकर सूबेदार के खेम तक पहुचा आओ।'

कदमुद्दीन को पालकी मे बैठाकर मुगल सिपाही सिक्खो के डेरे से बाहर ले गये। इमानउल्ला—'लाओ कहा है ज़ख्मी करने वाला बागी मरदूद।'

उत्तर राजगुरु ने दिया—'हमने उसे अच्छी तरह डाटा-फटकारा है। आगे से वह एसे रास्ते पर नही जायेगा।'

इमानउल्ला —'इमानउल्ला के सामने ही उसकी आज्ञा का उल्लघन।'

राजगुरु—'नही नही सरकार ! वह बालक है। आपके तेज के सामने उसका रक्त सूख जायेगा।'

—'उस बालक को मेरे हवाले कर दें। क्या मैं समझ लूं कि इस दुर्घटना में आप का भी हाथ है ? मैं आज्ञा का पालन चाहता हूं उसका उल्लंघन नहीं।' इमानउल्ला ने जोश में आकर कहा।

—'बच्चों की बात में सूबेदार को इतना क्रुद्ध नहीं होना चाहिए।' राजगुरु कह रहा था। गुरु गोविन्द सिंह जी और बन्दा बैरागी चुप खड़े थे और रामचन्द्र इमानउल्ला का मुंह देख रहा था।

—'यह तो हुजूर की अवज्ञा है। मुझे तो अब सिक्खों के डेरे में बगावत की बू आती दिखाई पड़ रही है। सपोलों को पैदा होते ही यदि कुचला नहीं गया तो वे एक दिन जहरीले नाग बन जायेंगे। इनकी अस्वीकृति से यह स्पष्ट होता है कि ये सरकार की आज्ञा ठुकरा देना चाहते हैं। एक मुगल सवार ने उत्तेजना-पूर्वक कहा।

राजगुरु—'मुगल नौजवान ! तुम कदाचित् यह नहीं जानते कि जब दो सयाने परस्पर बातें कर रहे हों तब नौजवान बीच में नहीं बोलते। तुमने बीच में बोलकर हम दोनों का अपमान किया है।'

—'मुझे सिक्खों की नीयत बदली हुई नजर आती है सरकार।' उस मुगल नौजवान ने फिर कहा।

—'शायद सीधी उंगलियों से घी नहीं निकलेगा। खेमे का कोना-कोना छान लो और उस भेड़िये को घसीटकर मेरे सामने ले आओ। जुल्फिकार तुम साथ जाओ और उसे पहचानो, कहीं और कोई इस कहर का शिकार न बन जाये।' इमानउल्ला यह कहकर मशाल की रोशनी में अपनी नंगी तलवार चमकाने लगा।

मुगल सिपाहियों को डेरे की ओर बढ़ने से सिक्खों ने रोक दिया। गुरु गोविन्द सिंह तुरन्त बोल उठे—'किसी के घर की उसकी आज्ञा के बिना तलाशी लेना सरासर ज्यादती है। इस घटना की तह में कुछ भी नहीं है। यों ही राई का पहाड़ मत बनाओ। हम नहीं चाहते कि हमारे और मुगलों के बीच में कोई गलत-फहमी की दीवार खड़ी हो। बालकों को धमका देना ही अच्छा है।'

—'अवश्य कोई षड्यन्त्र है जो हमें तलाशी लेने से रोका जा रहा है। हो सकता कि ये हमारे विरुद्ध कोई व्यूह रचना चाहते हों। शायद चोरी चोरी मराठों का कुचक्र इन्हीं के खेमे में पनप रहा हो। यह भी हो सकता है कि कायम बख्श के साथियों को इन लोगों ने शरण दी हो और हमारी आंखों में धूल झोंकी जा रही हो। हुजूर को इसकी तलाशी अवश्य लेनी चाहिए।' पहले वाला मुगल सिपाही कह रहा था।

—'मैं हूं कदमुद्दीन को उसके दुष्कर्मों का दण्ड देने वाला। वह दण्ड का पात्र था इसलिए उसे दण्ड देना उचित ही समझा गया। हो सकता है कि यदि आप वहां होते तो आप भी वही करते जो मैंने किया।' रेड्डी कह रहा था।

—'क्या आप यह सहन करेंगे कि आप ही के सामने आप की बहन-बेटियों को अपमानित किया जाये और आप आखें बन्द करके वहां से गुजर जाएं।' रेड्डी ने फिर कहा।

इमानउल्ला ने तलवार को हाथ से एक बार तोला और फिर रेड्डी पर एक वार किया। पास खड़े हुए रामचन्द्र ने अपनी तलवार से उसका वार रोककर रेड्डी को बचा लिया। बस फिर क्या था मुगल सिपाही सिक्खों पर टूट पड़े। भले ही सिक्ख तैयार नहीं थे फिर भी उन्होंने उनसे खूब लोहा लिया। एक मुगल नौजवान के फेंके हुए खंजर ने रामचन्द्र लुबाने का सीना चीर दिया। घायल होकर रामचन्द्र गिर पड़ा। उसका गिरना था कि बंदे बैरागी का जोश आ गया। वह शेर की तरह मुगलों पर टूट पड़ा और कुछ ही क्षणों में उसने मुगल सिपाहियों का नाकों दम कर दिया। इमानउल्ला गुरु गोविन्द सिंह पर भी वार करना चाहता था। गुरु जी ने तलवार का रुख ताड़ लिया और अपनी तलवार के झटके से इमानउल्ला की तलवार के दो टुकड़े कर दिये। भागकर इमानउल्ला ने जान बचाई। उसके पीछे मुगल चांदनी रात में भाग चले जा रहे थे।

गुरु गोविन्दसिंह जी के तलवार से आघात करने के फलस्वरूप घाव के टांके खुल गये और घाव से पुन: रक्त बहने लगा।

गुरु गोविन्द सिंह जी विश्राम कर रहे थे और राज गुरु, बंदा बैरागी, रेड्डी आदि उनके पलंग के चारों ओर बैठे हुए थे। मशालें जल रही थीं। रात का हाथ दिन की ओर बढ़ रहा था। सारे डेरे में खामोशी थी।

७

□□□

अधखिली कली

रेड्डी बहादुर, वीर है और अपने निश्चय का दृढ़ प्रतीत होता है। मुगल सिपाहियों से जनता भय खाती है इसलिए कि वे क्रूर और निर्दयी हैं। मुगलों से लोहा लेना रेड्डी जैसे बहादुर सिपाही का ही काम है। संसार में बहादुर को ही जीने का अधिकार है। मैं भी बहादुर बनूंगी। बहादुरों की संगति से भीरु मनुष्य भी बहादुर बन जाते हैं। इरावती इन्हीं विचारों में मग्न थी और मोतिये की कलियां तोड़ती जा रही थी। पास ही एक खिले हुए पुष्प पर काला भंवर मंडरा रहा था। इरा वही फूल तोड़ना चाहती थी। वह जब उस फूल की ओर हाथ बढ़ाती तो भंवरा फूल को छोड़कर इरा के सुकोमल और सुन्दर मुख पर मंडराने लगता। घबराकर जब वह पीछे हट जाती तो भंवरा पुनः उसी सुगन्धित पुष्प पर मंडराने लगता। उसने एक बार पुनः उस खिले हुए पुष्प को तोड़ लेना चाहा तो भंवरा उसके अधरों पर आ बैठा। इरा ने फुर्ती से हाथ से भंवरे को झटका दिया जिससे वह जमीन पर गिर पड़ा और छटपटाने लगा। पास खड़ा हुआ रेड्डी यह तमाशा देख कर मुस्करा रहा था।

—'तुमने इसे बेकार मारा। बेचारा कैसे छटपटा रहा है।'

इरा—'इसने मेरे होठ काट लिए हैं।'

रेड्डी—'तुम्हारे कोमल अधरों को भूल से फूल समझकर ही इसने नादानी की है।'

इरा का मुख लाज से लाल हो गया। वह गर्दन झुकाकर मुस्कराने लगी। संभवतः दोनों में प्रेम अंगड़ाइयां ले रहा था।

रेड्डी ने कहा—'मेरी आवश्यकता के योग्य फूल हो चुके हैं। मैं अब चलता हूं।'

इरा—'जरा ठहरो। दो-चार फूल और तोड लू । मैं भी चलती हू।'

कुछ ही क्षणो मे इरा ने फूलो से अपनी झोली भर ली। तब वे दोनो लौट पडे। रास्ते म रेड्डी ने इरा से पूछा—'देवता को इतने फूलो की आवश्यकता होती है इरा ? उन्ह तो श्रद्धा के एक या दो फूल ही बहुत होते हैं।'

इरा—'आज मुझे पिता जी के पूजा-काय के लिए फूल भी तोडने थे। उनका घाव अभी भरा नही है, पट्टी खुलने पर मालूम हुआ। वह बडा ही जहरीला खजर था जो पिताजी को लगा था।'

रेड्डी—'जिसका नाम ही खजर है, उसके लिए, तो जहरीला होने या न होने का प्रश्न ही नही उठता।'

दोनो आश्रम मे जा पहुचे। दौडता हुआ एक मृग उसके पास आकर खडा हो गया। जिसे देखकर रेड्डी बोला—'तुम आ गय हो नगन ? तुम बडे चालाक हो। मेरी आवाज़ सुनते ही मुझ पहचान लेते हो।'

इरा—'इसका नाम तुमने क्या रखा है ? सारे आश्रमवासी तो इसे लगडा कहते है। इस पर तो वही कहावत है कि 'आख से अन्धा और नाम नयन सुख।' किन्तु देखने म बडा प्यारा है यह मृग।'

रेड्डी—'हीरे की कीमत जौहरी जानता है या राजा। मैं शिकारी हू। इन्हे मारना भी जानता हू और पालना भी। मैंने इसका यह नाम उसी दिन रखा था, जिस दिन यह मेरे हाथो लगडा हुआ था। इसने अपने शरीर पर उस दिन एक भी तीर नही लगने दिया था। अन्त मे मेरे तीर ने इसके पावो की तेजी छीन ली और यह लगडा हो गया।'

इरा—'किन्तु यह तो आश्रम मे खुला घूमता है। इसे बाधकर क्यो नही रखते। क्या यह भाग नही सकता ?'

रेड्डी—'इसे बाधने के लिए मैंने रस्से का प्रयोग नही किया। केवल प्रेम की डोरी से ही बाध रखा है। यह बन्धन दिखाई नही देता, किन्तु इसकी गाठें लोहे की जजीरो से अधिक मजबूत हैं। इसका तन खुला है, किन्तु मन बध चुका है। तन मन के अधीन होता है।'

इरा—'इसी लिये तुमने इसे खुला छोड रखा है, किन्तु यह पशु मन की भाषा कैसे जान लेता है ?'

रेड्डी—'मन की भाषा सभी जान लेते हैं। क्या यह भाषा भी किसी को सीखनी पडती है ?'

इरा की पलकें झुक गईं और उसने धीरे से कोमल वाणी मे कहा—'नही यह स्वय ही आ जाती है।'

रेड्डी बोला—'यह आशा भरी प्यारी और काली आखें कितनी सुन्दर हैं। मुझे ये स्नेहमयी लगती है।'

सूर्य की लालिमा से धरती इस प्रकार शोभा पाने लगी जैसे किसी तरुणी ने सुनहले लाल रग से रगी चुनरी ओढ ली हो। इरावती अपने स्थान की ओर जाने लगी। रेड्डी ने भी पग बढाया, किन्तु मृग को लगडाकर चलते देख रेड्डी ने इरावती को रोककर कहा—'ठहरो इरा, जान पडता है कि गगन के घाव का टाका खुल गया है।' यह कहकर वह बैठ गया और मृग की टाग देखने लगा। सचमुच उसके घाव से रक्त बह रहा था। रेड्डी ने पास के नीम के पेड के कुछ पत्ते तोडकर उस मृग के घाव पर रख दिये, किन्तु बाधने के लिए उसके पास पट्टी न थी। इरा रेड्डी की आवश्यकता भाप गई। उसने तुरन्त अपनी ओढ़नी का एक छोर फाडकर रेड्डी को देते हुए कहा—'जरा कसकर बाध दो, शीघ्र ही अच्छा हो जायेगा।'

अनायास ही रेड्डी की दृष्टि इरा की ओर उठ गई, जिससे इरा का मुख लाल हो गया। उसके हृदय की धडकन तीव्र हो उठी। रेड्डी ने उसके हाथ से पट्टी लेकर मृग के घाव पर बाध दी और हसकर कहा—'ओढनी को फाडकर तुमने इस मृग को प्रेम-पाश म बाधने का जाल तो बिछाया है इरा। किन्तु हृदय में एक के प्रेम का ही उजाला होता है, दो क नही। यदि यह मृग तुम्हारे हाथो पड गया तो मुझे पूछेगा भी नही। बे-जुबान तो प्यार का ही भूखा है। (मृग को एक हल्का सा थप्पड लगाते हुए) जाओ पट्ठे मौज करो। किन्तु यह मत भूलना कि पछी और परदेसी नही किसी के मीत।'

दोनो मुस्करा उठे। इरावती और रेड्डी अपनी-अपनी झोपडी की चल पडे। अपने स्थान पर पहुचकर रेड्डी हाथ-मुह धोकर आसन पर गया। वह ध्यान मे मग्न होना चाहता था, किन्तु उसका मन बार-बार इराव की बात-चीत की ओर चला जाता। लाख प्रयत्न करने पर भी वह अपने मन स्थिर न रख सका। वह उपासना छोडकर उठने ही वाला था कि इरावती थाल मे पूजा का सामान लिए हुए वहा आ पहुची और रेड्डी को इस प्रकार बेचैन देखकर कहने लगी—'क्या बात है, आज इतनी जल्दी किस लिए?'

रेड्डी—'मन नही लग रहा है इरा। इधर-उधर के विचार मन को एकाग्र नही होने देते। न जाने मुझे दिनो दिन क्या होता जा रहा है, तुम क्या मन्दिर जा रही हो?'

इरा के 'हा' करने पर उसने फिर कहा—'थोडा रुको, मैं भी तुम्हारे साथ चलता हू।'

इरावती रुक गई। तब रेड्डी ने शान्ति पाठ किया और उठ खडा हुआ। तत्पश्चात् दोनों मन्दिर की ओर चल पडे। रास्ते मे रेड्डी ने कहा—'प्रभात का समय भी कितना सुन्दर और शान्त होता है।'

इरा—'प्रभात सदा मन को मोह लेने वाला होता है।'

रेड्डी—'भगवान् भास्कर को उदय होते देखकर उन्हें वृक्ष भी झूम-झूम कर नमस्कार करते हैं। वायु अठखेलियां करती है, मानो अपने प्रिय के मिलन के लिए उत्सुक हो।'

इरा—'ऐसा प्रतीत होता है जैसे मन्दिर की आरती के साथ वायु ताल पर नाच रहा हो।'

रेड्डी—'वह देखो, आकाश पर छोटी सी बदली की मांग किसी ने सिन्दूर से भर दी है अथवा किसी युवती ने उन्नाबी रंग की ओढ़नी ओढ़ ली है।'

इरा—'सुरमई रंग पर उन्नाबी चुनरी कैसी जच रही है, मानो रंग भी उछल रहा हो।'

रेड्डी—'चम्पा के फूलों की सुगन्ध अभी मन को मस्त कर रही है। मुख के फूल अपना घूंघट उठा रहे हैं। खिले गुलाब की कोमल पखुड़ियां कैसी कोमल और सुन्दर प्रतीत हो रही हैं।'

इरा—'गोदावरी के उस पार हरे-हरे खेत लहलहा रहे हैं। सरसों फूली हुई है।'

रेड्डी—'यह तो वसन्त के आगमन के चिह्न हैं।'

इरा—'वसन्त ऋतु नए फूलों का मुख चूमेगी, नई शाखाएं फूटेंगी, पुराने पत्ते झड़ेंगे और नई बहार आएगी।'

दोनों हृदय विचारों में लीन मन्दिर के कुछ पास पहुंच गए। तब रेड्डी ने कहा—'अब जरा सम्भलकर चलना इरा। रास्ता ढोकों से भरा है।'

इरा—'मैं इन ढोकों से ठोकर खाने वाली नहीं हूं।' पर कुछ आगे बढ़ते ही एक पत्थर से ठोकर खाकर इरा गिरते-गिरते बची। तब रेड्डी ने चुटकी लेते हुए कहा—'मैंने कहा था न कि यहां आकर सब लोगों को ठोकर लग सकती है। मोड़ चाहे कोई भी हो पर होता खतरनाक ही है।'

अभी ये लोग मन्दिर से १०० कदम दूर ही थे कि घण्टे घड़ियाल बजने बन्द हो गए। आरती समाप्त हो गई। समय पर मन्दिर न पहुंच सकने के कारण वह कुछ दुःखी हुई।

सवेरे उठकर उसने भगवान् के लिए यत्नपूर्वक मोतिये की कलियां चुनी थीं। वह सोच रही थी कि यदि मैं समय पर पहुंचकर भगवान् के चरणों में ये फूल अर्पित कर देती तो मेरा परिश्रम सफल हो जाता। उसके नेत्रों में प्रेम हिलारें ले रहा था। हृदय की धड़कन तीव्र हो उठी थी। रेड्डी अपने अन्तस में एक ज्वाला छिपाए बैठा था। आग दोनों की ओर लगी हुई थी। यदि रेड्डी चाहता तो इरावती के नेत्रों में झांककर देख सकता था। किन्तु अभी उसे भय था कि इरावती उसके विषय में न जाने क्या सोचने लगे। अनायास ही इरावती ने फिर ठोकर खाई और उसके हाथ की थाली के फूल रेड्डी के पांवों पर गिर

'पड़े। इरावती के अधरों पर मुस्कराहट नाच उठी, उसकी पलकें भारी हो आईं, उसका अन्तःकरण खिल उठा। आज उसका परिश्रम सफल हुआ था।

रेड्डी ने गिरी हुई कलियों को बटोर कर थाली में रख दिया पर अब इरा मन्दिर की ओर न जाकर पीछे लौट पड़ी। उसे लौटते देखकर रेड्डी ने कहा—'अब क्या भगवान् के दर्शन नही करोगी? क्या उन्हें फूल नही चढ़ाओगी? यहां से तो मन्दिर अब दो ही कदम है।'

—'जूठी कलियां अब भगवान् को कैसे चढ़ाऊं।'

वहां से दोनों लौट पड़े। रास्ते में रेड्डी उसका साथ छोड़कर जब सिक्खों के आश्रम की ओर जाने लगा तब इरा ने उससे कहा—'हम साथ-साथ आए थे जाएंगे क्या अलग-अलग?'

—'कुछ मुगल सिपाही भेज दूं जो तुम्हारी पालकी उठा कर ले चलें।'

—'क्या तुम्हारे पांवों के तलवे आश्रम जाने में घिस जाएंगे।'

—'चलो! चेरी किसकी और चोला किसका! थाली भी मुझे पकड़ा दो! कहीं तुम्हारे हाथ न थक जाएं।'

—'ये इतने सुकुमार नहीं कि थाली के भार से थक जाएं। ये तलवार उठाने के अभ्यस्त हैं।'

—'अब जरा जल्दी चलो मुझे राजगुरु की सेवा में उपस्थित होना है। मोर की-सी मील चाल छोड़कर हिरन की चाल पकड़ो तब कहीं जाकर गुजारा होगा।'

—'जरा आगे बढ़कर चाल देखना! हमारा क्या है हम तो तुम्हारे पीछे कदम मिलाते हुए चलेंगे।'

रेड्डी इरा को आश्रम के द्वार पर छोड़ कर सिक्खों के डेरे की ओर चला गया। उसका दिल अन्दर ही अन्दर उन चिकोटियां काट रहा था। वह सोच रहा था कि मैं अपने दिल की मंजिल तक कई बार पहुंचा तो हूं पर प्रवेश उसमें नही कर पाया। पथिक कुंए तक पहुंचकर प्यासा लौटे इसमें दुर्भाग्य है पथिक का या उस कुंए का? नदी के दोनों किनारे मिलते नहीं, पर यदि एक किनारा दूसरे किनारे के पास पहुंच भी जाए तब आलिंगन न करना बुद्धिमत्ता नहीं। विचारों में खोया-खोया रेड्डी चला जा रहा था कि उसे रास्ते में राजगुरु मिले। राजगुरु ने पूछा—'रेड्डी आज तुम्हारा चेहरा कुछ उतरा हुआ क्यों है?'

रेड्डी—'नहीं, नहीं गुरुदेव! कोई ऐसी बात तो नहीं है।'

राजगुरु—'तुम भीतर से तो भरे हुए हो पर कहना कुछ नहीं चाहते। मन की बात सदा छिपी नहीं रहती, कभी न कभी प्रकट हो ही जाती है। चेहरे रूपी दर्पण को देखकर सयाने मन की बात भांप लेते हैं। कहीं कीचड़ में तुम्हारे पांव तो नहीं फंस गए।'

रेड्डी—'मैं अच्छा भला हू गुरुदेव । आप को कदाचित् भ्रम हुआ है ।'

राजगुरु—'बूढी आखो मे ताडने की शक्ति है । मेरी आखें धोखा नही खा सकती । खैर तुम रामचन्द्र की सेवा सुश्रुषा तो भली-भान्ति कर रहे हो न !'

रेड्डी—'गुरुदेव आप निश्चिन्त रहे । उन्हे कोई कष्ट नही है ।'

राजगुरु—'मैं यही सब जानने के लिए आश्रम जा रहा था । अच्छा हुआ जो तुम रास्ते मे मिल गए । जाओ आश्रम मे तुम्हारी प्रतीक्षा हो रही होगी ।'

राजगुरु चले गए । रेड्डी यह समझ रहा था कि हमारे प्यार की भिनक राजगुरु के कानो मे किसी ने पहुचा दी है । डर के मारे आश्रम मे जाने की उसकी हिम्मत नही हो रही थी । ख्यालो मे डूबा वह अपने डेरे की ओर चल पडा ।

रेड्डी के लौटने से पहले ही उसकी झोपडी मे इरा ने झाडू लगा दिया, जल छिडक दिया और आसन बिछा दिया था । रेड्डी ने झोंपडी मे पहुचकर एक बार झोपडी को देखा और दूसरी बार इरा को । आज वह पहली बार अपने को अकेला महसूस कर रहा था । मुहब्बत माला के मनको मे जाग रही थी ।

इरा उस समय 'पग घुघरु बाध मीरा नाची रे' गुनगुना रही थी, रेड्डी उसे प्रेम भरी दृष्टि से देख रहा था और आश्रम की कलियां उस समय लहरा रही थी ।

८

□□□

बारूद का पलीता

सिपाही के लिए भी पराजय मृत्यु से बढ़कर दुःखदायी होती है। इमान-उल्ला तो प्रसिद्ध बहादुर और सूबेदार था। उसकी बहादुरी की धाक सारे गुजरात में थी। सिक्खों की तलवार की चोट खाकर वह अन्दर ही अन्दर प्रतिशोध की ज्वाला से जला जा रहा था। उसने नादेड़ में रहकर सिक्खों से बदला लेने का भरसक प्रयत्न भी किया, परन्तु उसकी एक न चली। सिक्ख सावधान हो चुके थे। उन्होंने इमानउल्ला की दाल नहीं गलने दी। इमानउल्ला ने जब भी उन लोगों के विरुद्ध कदम उठाया, तब उसे मुंह की खानी पड़ी। वह तिलमिला उठा और बहादुरशाह को सिक्खों के विरुद्ध पत्र लिख-लिखकर भड़काने लगा। बहादुरशाह पर सिक्खों के अनेक बड़े-बड़े एहसान थे। वह समझदार था, वह इमानउल्ला के लिखने से सिक्खों को अपना शत्रु नहीं बना लेना चाहता था। वह इमानउल्ला के पत्रों का जल्दी जवाब ही न देता और यदि देता भी तो यही लिखता कि सिक्ख हमारे मित्र हैं। उन्हें उनके हाल पर छोड़ दो, तुम अपना काम देखते जाओ। इस प्रकार के उत्तरों से इमानउल्ला जल-भुनकर राख हो जाता, किन्तु वह हिम्मत हारने वाला व्यक्ति न था। लाचार होकर उसने एक पत्र फिर बहादुरशाह को लिखा और उस पत्र को अपने एक निजी दूत द्वारा भेज दिया। पत्र में लिखा था—

साहिबे आलम,

मैं आपका दोस्त भी हूं और सूबेदार भी। मुझमें आपके प्रति दोस्ती का प्यार भी है और गुलाम होने के नाते नमक हलाली का भाव भी। हुजूर ने जो-जो मेहरबानियां इस गुलाम पर की हैं, उनका बदला आपकी खिदमत में जीवन भर रहकर भी मैं नहीं चुका सकता। पर मैं दोस्ती के नाते इतना अधिकार भी रखता हूं कि कुछ अरज कर सकूं और इसी लिए हुजूर को

आने वाले सकटो से अवगत करा देना अपना कर्त्तव्य समझता हू । मैं नहीं चाहता कि मेरे रहते दक्षिण मे हुजूर के सामने कोई सिर उठाये और मेरा स्वामी किसी कष्ट मे पड़े ! प्रत्येक गुलाम का यह कर्त्तव्य होता है कि किसी भी आने वाले सकट से शहनशाह को अवगत करा दे। परन्तु उसके कर्त्तव्य का क्षेत्र बहुत ही सीमित होता है। साहिबे आलम को सूचना देकर गुलाम अपने कर्त्तव्य-भार से मुक्त हो जाता है, हुकूमत के भले-बुरे से उसका कुछ भी लगाव नहीं रह जाता। परन्तु मैं दोस्त भी हू, इसलिए मेरा कर्त्तव्य क्षेत्र विस्तृत है। यदि आने वाली किसी विपत्ति से जहापनाह बेखबर भी हो तो मैं दोस्ती के नाते आप पर जोर दे सकता हू, अरज कर सकता हू कि भावी आने वाली मुसीबतों का सामना करने के लिए हुजूर मुझे इजाजत दें। मैं दोस्ती के बदले हुजूर और हुकूमत की खुशी के लिए अपनी जान तक लड़ा देना चाहता हू। मैं अपनी आखो से अपने दोस्त का एक बाल भी बाका होते नहीं देखना चाहता। आलमपनाह ! मुझे सिक्खो की नीयत बिगड़ी हुई दिखाई देती है। उसके आसनो मे से विद्रोह की गध आती है। दोस्ती के आवरण मे वे मुझे खू खार भेडिय नजर आते हैं। मैं यह भली-भाति जानता हू कि इन सिक्खो के एहसान से साहिबे आलम दबे हुए हैं और आपकी बढती हुई कीर्ति मे इनका भी हाथ है। पर इसका यह अर्थ नहीं है कि पहले दोस्त बनकर और फिर दोस्ती की आड लेकर उसकी जड़ें काटी जाए। ये सिक्ख अब वे पहले वाले सिक्ख नहीं रहे, जिनकी दोस्ती का दम भरना हुजूर के लिए मुनासिब हो। जिन दिनो वे हुजूर के मित्र बने थे, उन दिनो उनके प्राण सकट म थे। उन्हें आपसे सहायता की आशा थी और इसी लिए वे आपके मित्र बने थे। किन्त अब वह समय निकल गया है। सिक्खो का अब मराठो से मेल-जोल हो रहा है। राजपूत तो पहले ही मराठो से हाथ मिला चुके हैं, अब सिक्खो के मिल जाने से उन पहाडी चूहों को और भी बल मिलेगा जिससे वे हुजूर का अनादर करने से बाज नहीं आवेंगे। मराठे सिक्खो को यह कहकर भड़का रहे हैं कि गुरु गोविन्द सिंह जी को घायल करवाने मे मुगल शासन का हाथ है, जिससे बहुत से सिक्ख हुजूर के विरुद्ध विष उगलने से नहीं चूकते। गुरु गोविन्द सिंह भी यह जानते हैं कि गुल-धर से पुरानी शत्रुता होने पर ही पैंदे खा के पोते ने उनसे बदला लिया है। पठान तीन पीढी तक दुश्मनी नहीं भूलते, किन्तु बहुत से सिक्ख यह बात नहीं मानते। आलम पनाह ने सिक्खो को कुछ वचन दिये थे, जो बगावत के डर से पूरे नहीं किये गये। इससे सिक्खों के मन म और भी सदेह होने लगा है। उन लोगो के मन मे यह दृढ विश्वास हो चुका है कि स्वय शाहे आलम ने पैंदे खा के पोते को उकसाकर यह वारदात कराई है।

दूसरी बात यह है कि आलमगिरी हकमत से टक्कर लेकर गुरु गोविन्द सिंह

को मुंह की खानी पड़ी। आलमगिरी सेना और औरंगजेब की नीति के सामने सिक्खों की कुछ नहीं चली और वे जगह-जगह भागते फिरते थे। वह सारा दोष अब सरहिन्द के सूबेदार के सिर मढ़ा जा रहा है। सरहिन्द के नवाब ने ई० १७५४ में कीरतपुर में सिक्खों के दांत खट्टे किये और आनन्दपुर का किला घेर लिया था। सूबेदार ने किले के चारों कोने अपने हाथ में कर लिये थे, जिससे सिक्खों को किले में रसद मिलना असम्भव हो गया था। सूबेदार की नीति सफल हुई और गुरु गोविन्द सिंह को आनन्दपुर छोड़कर चमकौर साहब में शरण लेनी पड़ी। सूबेदार उसके पीछे लगा रहा। अजीतसिंह और झुझारसिंह गुरु साहब के दाहिने-बाएं हाथ थे। रणक्षेत्र में ये दोनों वीर काम आये। और गुरु गोविन्द सिंह चमकौर की गढ़ी से वेश बदलकर दमदमा साहब पहुंच गये और किसी प्रकार हुजूर के मित्र बन बैठे। सूबेदार के हाथ गुरु साहब के दोनों लड़के और उनकी माता लगी। सूबेदार ने दोनों सपोलों के फन तोड़ देने का निश्चय किया और उन दोनों को जीवित ही दीवारों में चिनवा भी दिया। समय इसी प्रकार पहचाना जाता है। आलमगिरी ने गुरु गोविन्द सिंह को हथियार रख देने के लिए कहा। जिसके उत्तर में गुरु जी ने 'जफरनामा' लिखा और बाजसिंह के हाथ हुजूर की खिदमत में भिजवा दिया। इन कृत्यों से सरहिन्द के सूबेदार के मन में शंका होने लगी। वह सोचने लगा कि कहीं हुकूमत का सहारा पाकर गुरु गोविन्द सिंह अपनी उच्चाकांक्षाएं पूरी करने में सफल न हो जायें। इसीलिए वह पैंदे खां के पोते को, गुरु-घराने से दादा की पुरानी शत्रुता के किस्सा सुनाकर उकसाने लगा। जिसे सुनकर पैंदे खां के पोते की आंखों में खून उतर आया। उसने गुरु गोविन्दसिंह को घायल भी कर दिया।

आलमपनाह! इन सिक्खों की खामोशी में बगावत की जड़ें मजबूत हो रही हैं। पैदा होते ही सांपों का कुचल देना ही राजनीति है। सम्भव है, आलमपनाह यह सोचते हों कि सिक्खों से हमारा भाई चारा है, उन्होंने विपत्ति में हमारी सहायता की है। यह मैं भी मानता हूं। किन्तु सभी सिक्ख गुरु गोविन्द सिंह से नहीं हो सकते। उनमें बहुत से मूर्ख भी हैं और सनकी भी। किसी भी समय वे बागी हो सकते हैं। इस समय तो सिक्ख हमारे पंजे में हैं। और यदि वे मराठों से जा मिले तो हमारे वश से बाहर हो जायेंगे। मराठों की सेना चारों ओर लूट-पाट कर रही है। वह भगोड़ों की भांति लुक-छिपकर हमला करती है। अभी तो हमने मराठों की नाक में नकेल डाल रखी है पर यदि वे सिक्खों से मिल गये तो फिर दक्षिण में हुकूमत के पांव नहीं जम सकेंगे। सिक्खों का मराठों के साथ मिलना ही बगावत की जड़ है। एक बिच्छू है तो दूसरा सांप। जहांपनाह आप उपयुक्त समय से लाभ उठावें। नांदेड़ के तीर्थ स्थान होने से यहां नित्य नये मेले लगा करते हैं। जिनमें हजारों हिन्दू यहां एकत्र होते हैं। साधुओं के वेश में यहां बागी भी दिखाई देते हैं। सिक्खों की नीति-[illegible] भी तो

हिन्दुओ से मिलती-जुलती है। ये सभी आपस म एक हैं। राजपूत और सिक्खो का तो चोली दामन का साथ है। सिक्ख रहम दिल भी होते हैं और जबान के पक्के भी। यदि इन्होने कायम बख्श के सिपाहियो को मदद देने का निश्चय कर लिया तो आफत खडी हो जायेगी। मराठे योद्धा भी हैं और नीति कुशल भी। यदि तीनो का मेल हो गया तो तूफान उठने म देर नही होगी और यदि इनके साथ कायम बख्श की फौज भी आ मिली तो 'घर का भेदी लका ढाहे' वाली कहावत चरितार्थ होगी। मिर्जा राजा जयसिह और शिवाजी का पत्र व्यवहार सभी जानते हैं। शिवाजी का जादू मिर्जा राजा जयसिह के सिर पर चढकर बोल रहा है। गुरु गोविन्दसिह ने जो पत्र शिवाजी को भेजे थे, वे हमारे हाथ तो नही लगे, किन्तु कई पत्रो के शेर सिक्खो की जबान से सुने जाते हैं, जो फारसी मे हैं। जिनमे से मैंने भी लगभग बीस शेर सुने हैं। यदि आज्ञा मिले तो उन सिक्खो को शेर सुनाने के लिए डडे से मजबूर किया जा सकता है जिससे उनका रहस्य प्रकट हो जायेगा।

कुछ शेरो का भावार्थ इस प्रकार है—हुजूर ध्यान दें।

मैं तलवार, बरछे, तीर और ढाल के देवता का नाम लेकर रणक्षेत्र के सम्राट् और हवा से बातें करने वाले घोडो के स्वामी जिन्होने आपको बादशाहत दी है और मुझे धर्म रक्षक बनाया है, उनकी शपथ लेकर कहता हू कि तुर्क शासन के सरदार जो छल-कपट और धोखे के बादशाह हैं, उन पर विश्वास करना नीति नही है। औरगजेब, तुम्हें यह शोभा नही देता, क्योकि औरगजेबो का छल-कपट नही फबता। तेरी तसबीह के फेरे धोखे के चक्कर हैं। तुमने अपने पिता की मिट्टी को अपने भाइयो के रक्त से गूधकर उसके द्वारा अस्थायी राज्य-भवन की स्थापना की है। मैं इस भवन पर अकाल पुरुष की कृपा से लोहे के गोलो की वर्षा करुगा। तब इस पवित्र भूमि पर उस मनहूस भवन का नाम तक न रहेगा। आलमगीर, दक्षिण प्रदेश म तुमने मुह की खाई है, मेवाड मे भी तुम्हे विष के कडए घूट पीने पडे है और अब तुम्हारी क्रूर और लालची दृष्टि इस ओर उठी है। घबराओ मत मैं तुम्हारी प्यास और तलखी मिटा दूगा। मैं तुम्हारे पावो के तलवो के नीचे अगारे रखूगा और तुम्हे पजाब की धरती का पानी भी न पीने दूगा। क्या हुआ जो गीदड ने धोखे से शेर के बच्चे को मार डाला। जब तक सिंह जीवित है, वह अपने मासूम बच्चो का बदला लिये बिना नही रहेगा अब मैं तेरे खुदा से कोई उम्मीद नही रखता। मैंने तेरे खुदा और उसके कलाम को परख लिया है और तेरी कसमो पर मुझे विश्वास नही रह गया है। अब इन बातो का निर्णय तलवार ही करेगी। यदि तुमने चालाक भेडिये छोडे तो मैं भी मुकाबले के लिए शेरो को छोडूगा। भाग्य से यदि रण-क्षेत्र मे तुम्हारा और मेरा सामना हो गया तो मैं तुम्हे शीघ्र ही नेकी के रास्ते पर ले आऊगा। मैं रणक्षेत्र मे अकेला ही आऊगा और तुम दो घुडसवारो के साथ आना।

किसी वीर से अभी तुम्हारा वास्ता नहीं पड़ा। यदि बहादुर हो तो स्वयं तलवार लेकर मैदान में निकलो। अकारण गरीब सिपाहियों की जान के ग्राहक न बनो। आओ, हम तुम इस युद्ध का आपस में ही निपटारा कर लें।

यह पत्र श्री गुरु गोविन्द सिंह का है, जो सिक्खों की जबान से सुना जाता है। सिक्ख अपने बच्चों को इसे घुट्टी के रूप में देते हैं। कितना विष उगला गया है जहांपनाह इस पत्र में। अभी कल ही की बात है। एक यात्री के वेश में एक मराठा पकड़ा गया था। जिसकी तलाशी लेने पर एक पत्र शिवाजी की ओर से मिर्जा राजा जयसिंह के नाम लिखा हुआ मिला जिसे मराठे दहेज में या उपहारों के बहाने देते हैं। उस पत्र का भावार्थ यह है—राजाओं के राजा, हिन्दुस्तान में बाग के बागवान, राम और कृष्ण के वंशज तुम्हारे ही दम से राजपूतों का सिर ऊंचा है। तुम्हारे बल पर हुमायूं और अकबर के राज्य की जड़ें पाताल तक पहुंची हैं। तुम ही इस मुगल साम्राज्य के स्तम्भ हो। भाग्य के विधाता, बुद्धि के धनी तुम्हें मैं (शिवाजी) नमस्कार करता हूं। भगवान् तुम पर शुभ दृष्टि रखे और साथ ही तुम्हें धर्म और पुण्य के मार्ग पर सदा आरूढ़ रखे। हमने सुना है कि तुम दक्षिण में दक्षिणवासियों के गले में परतन्त्रता का रस्सा डालने के लिए आये हो। मेरे महाराष्ट्र को वीरान करके तुम अपनी विजय-पताका फहराना चाहते हो। क्या तुम हिन्दुओं के हृदय पर लिख देना चाहते हो कि यह देश हमारा नहीं, बल्कि मुगलों का है? विजयी-वीर, तुम यह क्यों नहीं समझते कि इन बातों से तुम्हारे मुख पर कालिख लग रही है। तुम्हारा देश और तुम्हारा धर्म तबाह हो रहा है। तुम अपने अन्तर में एक बार झांक कर देखो। तुम्हें प्रतीत होगा कि तुममें भी इसी देश का रक्त है। यदि तुम अपने लिए, हिन्दू धर्म के लिए इस दक्षिण देश में विजय करने आते तो मेरा सिर और मेरी पलकें तुम्हारे रास्ते में बिछी होतीं और मैं सेना सहित स्वयं तुम्हारे साथ हो जाता। एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक तुम्हारी तलवार की छाया के नीचे हम खड़े हो जाते। पर अब तुम औरंगजेब के सरदार के रूप में आये हो। उस औरंगजेब के सरदार रूप में जो भोली-भाली जनता को तथा हिन्दू धर्म को, तुम्हारे और मेरे धर्म को, राम और कृष्ण के परम्परागत चले आये धर्म को जड़ मूल से मिटा देना चाहता है। मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि मैं तुमसे कैसा बरताव करूं। यदि तुम्हारे साथ समय टालने के लिए किसी प्रकार की संधि इत्यादि करता हूं तो मेरी बहादुरी को दाग लगता है। नर-केसरी लोमड़ी की चाल नहीं चलता। परन्तु सोचता हूं कि तुममें तलवार के दो-दो हाथ होने पर दोनों तरफ से हिन्दुओं का ही रक्त बहेगा। यह बहुत ही दुःख की बात होगी। मैंने केवल मुगलों का रक्त पीने के लिए तलवार उठाई है, अपने भाइयों का नहीं। यदि तुम्हारी सेना में मुगल सिपाही होते तो हमें तो घर बैठे ही शिकार मिल जाता। पर राजा जयसिंह, तुम उस भेड़िये को

ओर देखो जिसने दक्षिण विजय के लिए अफजलखा को उकसाया। जब अफजलखा औरगजेब की रक्त पिपासा शात करने मे विफल हुआ तो मुगलो की लाज बचाने के लिए औरगजेब ने शाइस्ता खा को भेजा, किन्तु जब उसकी आकाक्षा शाइस्ता खा भी पूरी न कर सका तो तुम्हे मेरे साथ दो हाथ करने के लिए भेजा है। क्या उसमे स्वय लडने की शक्ति नही है? वह चाहता है कि हिन्दुओ को हिन्दुओ से टकरा कर उनकी शक्तिशाली भुजाओ को तोड दिया जाये। बहादुर राजपूत! उस काले नाग की चाल को समझो। वह यही चाहता है कि सिंह आपस मे ही लडकर मर मिटें और गीदड जगल का राजा बन बैठे। क्या इतनी सी बात भी तुम्हारी समझ मे नही आती? तुम्हारे जैसे वीर और बुद्धिमान व्यक्ति पर उसका जादू कैसे चल गया! हमारे साथ युद्ध करना तुम्हे शोभा नही देता। अपने भाइयो मे मत लडो, दोनो ओर हिन्दुओ का ही रक्त बहेगा। यदि तुम्हारी तलवार मे बल है, तुम्हारे मन मे बहादुरी है और तुम युद्ध करना ही चाहते हो तो अपने लिए करो, अपने देश और अपनी जाति के लिए करो। अपने हिन्दू धर्म के लिए लडो। तब देखोगे कि असख्य मराठे तुम्हारे पसीने पर रक्त बहाने के लिये निकल आवेंगे। तुम्हारे रक्त की एक-एक बूंद पर सैकडो युवक अपनी जान दे देंगे। किसी ऐसे व्यक्ति जो तुम्हारे धर्म का दुश्मन है, तुम्हारे देश का वैरी है, किसी प्रकार की आशा करना तुम्हारी भूल मात्र है। जो अपनी सत्ता को बढाने के लिए अपने बाप को काली कोठरी मे डाल सकता है, जो राज्य हथियाने के लिए अपने भाई को कत्ल कर सकता है। वह क्या तुम्हारे लिये स्वर्ग के फाटक खोल देगा? हमे आपस मे लडने की आवश्यकता नहीं है! अपनी बुद्धि से विचार करो और देखो कि वह चालबाज औरगजेब किस प्रकार तुम्हे अपनी शतरज का मोहरा बना रहा है। मेरी भुजाओ मे सागर मे उठने वाले तूफान जैसी शक्ति है। यदि हम दोनो मिल जाएं तो तख्तेताउस डगमगा उठे। तब न तो औरगजेब ही रहेगा और न उसके अत्याचार ही। मेरा देश स्वतन्त्र हो, मेरा धर्म स्वतन्त्र हो, मेरे देश का कोई वीर और *न्यायप्रिय शासक हो।* मैं चाहता हू कि तुम्हारे सम्मुख होकर बातें करू। मैं तुम्हे इस दक्षिण देश का सम्राट् बना देना चाहता हू।

मेरे मालिक! इस पत्र को देखते ही मेरे तन मन मे आग लग गई। भले ही यह पत्र पुराना है, पर यदि यह पत्र सिक्खो के हाथ लग जाता तो आप समझ सकते हैं कि इसका फल क्या होता। वे आप के वचन-भग से पहले ही असन्तुष्ट हैं। यह पत्र उनकी क्रोधाग्नि मे घी का काम देता।

जहापनाह! इस समय तो सिक्ख हमारे कब्जे मे हैं। यदि उनकी मराठो से साठ-गाठ हो गई तो वे हमारी शक्ति से बाहर हो जाएगे। आप आज्ञा दें कि फन फैलाने से पहले ही साप की गर्दन मरोडकर रख दी जाये।

आप का गुलाम—
सूबेदार इमानउल्ला

इस पत्र को पढ़कर बहादुरशाह उलझन में पड़ गया। उसे विश्वास नहीं हो रहा कि सिक्ख भी उसके विरुद्ध सिर उठा सकते हैं। वह यह सोचने के लिए विवश हुआ कि यदि इमानउल्ला की एक भी बात सत्य है तो वह हमारे लिए खतरनाक सिद्ध हो सकती है। उसने इमानउल्ला को उत्तर दिया कि मैं स्वयं नांदेड आ रहा हूं। मेरे पहुंचने तक सिक्खों से किसी प्रकार की छेड़-छाड़ मत करना।



९

□□□

बह गये साजन

—'इरा आधी रात के समय तुम यहा ! क्या आश्रम मे मन नही लग रहा था।' रेड्डी ने आश्चर्य से पूछा।

—'यो ही तारो भरी रात की शोभा देखने निकली थी। दूर से जब तुम दिखाई दिये तो यहा चली आई।' इरा ने कहा।

—'चादनी रात गोदावरी की लहरो का नजारा ! गाज के समान छिटकी हुई चादनी भगवान् भला करे ! न जाने आज किस अभागे की शामत आई है। मेरा दिल तो धड़क रहा है।'

—'पहाड़ का-सा हृदय रखने वाले बहादुर को नारी से डर कैसा।'

—'भाग्यवानो को ही ऐसी छिटकी हुई चादनी म आनन्द प्राप्त करने का अवसर मिलता है।'

—'मै तो तुम्हे आश्रम मे सोया छोड आई थी, तुम यहा कैसे आये।'

—'शिकार म हुई मुलाकात के बाद नीद ही किसे आई है। मुझे लगता है कि शिकार खेलने गया गया स्वय ही शिकार हो गया। किसी के नयन बाणो ने मुझे जख्मी कर दिया है। वह शिकारी बहुत बडा चोर था—मेरी नीद चुराकर ले गया। भले ही वह शिकार मेरी झोपडी के पास रहता है पर मैं उसका पीछा नही छोडूंगा।'

दोनो प्रेमी एक टीले पर चढ रहे थे। रेड्डी आगे था इरा पीछे। तब रेड्डी ने पुकारा—'इरावती !'

पर रेड्डी को कुछ उत्तर न मिला। इरा कुछ पीछे रह गई थी। उसका दुपट्टा झाडी के कांटो मे उलझ गया था। रेड्डी ने घूमकर देखा और कहा—'दुपट्टा काटो मे उलझ गया है। किसका हृदय सुन्दर वस्तु से उलझना नही चाहता।'

—'बहुत ठीक ! मैं तो काटों में उलझी हूं और आपको हंसी सूझ रही है ।' इरा ने कुछ बनावटी खीझ से कहा ।'

रेड्डी इरा के पास पहुंच गया । कभी उसके दुपट्टे को सुलझाता तो कभी फिर उलझा देता । हंस कर कहने लगा—'बैठकर सुनो तो इरावती ! यह गुलाब क्या कह रहा है । जंगली गुलाब भी तुम्हारा रूप देखकर तुममें ईर्ष्या करने लगा है । गुलाब के लाल फूल तुम्हारे अधरों की लाली देखकर शरमा रहे हैं ।'

रेड्डी की बात सुनकर इरा हंस पड़ी ।

—'मेरे तन में कुछ-कुछ होने लगा है ।' रेड्डी ने कहा ।

—'कुछ-कुछ क्या ?'

—'समझ नहीं पा रहा हूं ! तुम अपने ही दिल से पूछ देखो ।

—'मेरे दिल में तो कुछ भी नहीं । यों ही धड़कन सी है ।'

—'इसी धड़कन को तो प्यार कहते हैं । हृदय में गुदगुदी लिये जो मीठा-मीठा दर्द होता है उसी को लोग प्रेम कहते हैं । पागल बना देता है प्राणी को यह दर्द ।'

—'चन्द्रमा ने बादलों की ओढ़नी में मुख छिपा लिया है ! शरमा गया है बेचारा तुम्हारा मुख देखकर ।'

—रूपवानों से रूपवान ईर्ष्या किया ही करते हैं इरावती ! तुम्हारी ठोढ़ी का गड्ढा कितना सुन्दर प्रतीत होता है । तुम्हारे गाल पर काला तिल ऐसी शोभा दे रहा है जैसे कि खिले कमल पर भौंरा बैठा हो । सुन्दर वस्तु पर काला दाग रहने से उसे नज़र नहीं लगती । वह देखो चन्द्र पर भी काला दाग है, जिससे उसका मुख दुगना उज्ज्वल हो रहा है । तुम्हारे दिल में अरमान छिपे हुए हैं । तुम्हारे होंठों की मधुर मुस्कान ने मेरे दिल को मतवाला बना दिया है । अब यह मेरे वश में नहीं रह गया इरा !'

रेड्डी की बात सुनकर इरा का मन खिल उठा । उसे रोमांच हो आया । प्रेम भरी चितवन से उसने रेड्डी की ओर देखा और तब उसके घुटन पर अपना सिर रख दिया । दोनों प्रेमी एक-दूसरे की आंखों में आंखें डाले हुए थे । चंचल वायु बहती हुई कलियों को गुदगुदा रही थी । इरा की आंखों में मस्ती थी और वह कह रही थी—परदेसी ! तुमने प्रेम पाश में मुझे बांध लिया है । मेरे जीवन की मुस्कराहट, मेरे जीवन का आनन्द, मुझसे छीन लिया है । उसके बदले में तुमने दी है अपनी याद । फिर भी यह सौदा महंगा नहीं है । मेरा आराम, सुख तुम्हारी स्मृति की ओढ़नी में जो छिपा है । काश ! मैं तुम्हें देख ही न पाती ! काश, अचानक आंखें चार न होतीं ! तुम्हारा अनुग्रह मेरे मन में प्रेम बनकर उमड़ रहा है । मेरे मन के तार तुम्हारी प्रेम रागिनी से झनझना उठे हैं । मेरे दिल के साजों की झनकार में गीत उठने लगे ।

इरा बड़बड़ा रही थी। प्यार में उसका मन उछल-उछल रहा था। इरा पत्थर पर लेटी हुई थी और उसकी कोमल कलाइयां रेड्डी के घुटनो पर थीं। प्यार में रेड्डी ने उसका सिर अपने घुटनो पर रख लिया और उसका हाथ अपने हाथो मे ले लिया। प्रियतम के कोमल और सुकुमार हाथ कितने प्यारे और सुन्दर लगते हैं। सिर पर तारो भरा आकाश था, चाद की किरणे गोदावरी म डुबकियां लगा रही थी। हार सिंगार के फूल शीतल वायु के हल्के झकोरों म हिलोरें लेते हुए अपना सौरभ-धन लुटा रहे थे। चन्द्र की शीतल किरणे गुलाब का मुख चूम रही थी। रेड्डी अपनी उगलियों से इरा के लम्बे केशो म कघी कर रहा था और इरा रेड्डी की गोद म पडी हुई स्वर्ग का आनन्द ले रही थी।

मधुर, सुन्दर और मीठे स्वप्न उसे आ रहे थे। अभिलाषाएं मचल रही थी। चन्द्रमा और चादनी म इरा का मुंह रेड्डी को मनोहर प्रतीत हो रहा था। वह उसे चूम लेना चाहता था पर उसे ऐसा करने का साहस नही होता था।

इरा स्वप्नो में खोई हुई थी और रेड्डी उसे प्यार से कह रहा था—'उठो इरा। क्या रात स्वप्नो म ही बिता दोगी।'

इरा ने नेत्र खोलकर हसते हुए रेड्डी की ओर देखा। उसके सुन्दर चमकीले दात मोतियो की भान्ति चमक रहे थे। उसके मन म प्रेम हिलोरें ले रहा था। वह अध खुले नेत्रो से रेड्डी को देखती हुई बोली—'तुम इस समय कितने सुन्दर प्रतीत हो रहे हो?'

—'क्या तुमसे भी अधिक! जिसके मुख के सामने चन्द्रमा भी पानी भरता है।'

लहरें एक-दूसरे के गले इस तरह मिल रही थी जैसे बिछड़े हुए मित्र। चादनी की गोद में इन दोनो प्रेमियो का प्रेम अगड़ाइया ले रहा था।

—'हमारे दिल भी इस चादनी म एक हो रहे हैं। हमारे इस प्रेम का चन्द्र साक्षी है। उसकी छाया के नीचे हम प्रेम का नाता जोड़ रहे हैं।' रेड्डी ने कहा।

—'यह सत्य है क्या?'

—'हा इरा, इसमे तनिक भी मिथ्या नही।'

—'पौ फट रही है रेड्डी! सवेरा होने ही वाला है। यदि आश्रमवासी जाग उठे तो इस प्यार रूपी चौसर की गोटिया उलटी पड जाएगी।'

उसके बाद आश्रम की ओर वे दोनो लौट पड़े। आश्रमवासी अभी सोए हुए थे। वे अपने-अपने बिछौने पर जा लेटे।

मुर्गो ने बाग दी और हलवाहो ने अपने-अपने हल निकाल लिए। सोए हुए शखो के मुख पुजारियो ने चूम लिए और दिन चढने की घोषणा कर दी। सारा आश्रम जाग उठा था और वे दोनो प्रेम के स्वप्न देख रहे थे।

दिन भर इरा रात की प्रतीक्षा म रही। रात मे फिर दोनो प्रेमी गोदावरी के तट पर मिले। आज रेड्डी अपनी प्रेमिका के लिए बिल्लौरी चूड़िया लाया था। उसने ये चूड़िया इरा की कोमल कलाइयो पर चढाईं और कहा—'यही हमारे प्रथम मिलन के चिह्न हैं। आज हम प्यार की पहली मजिल पर पहुचे हैं।'

इरा ने उत्तर मे रेड्डी से कहा—'इन चूड़ियो के रूप मे मुझे मगल कगन मिले हैं। मैं इनकी जीवन भर लाज रखूँगी।'

इतना कहकर इरा ने रेड्डी की छाती पर अपना सिर टेक दिया और रेड्डी उसकी पीठ प्यार से सहलाने लगा। उस समय आकाश म चन्द्र देव अपनी यात्रा मे मग्न थे।

प्रेमियो के वार्त्तालाप म रात बीत गई और उनको कुछ पता न चला। दिन निकलने पर श्रद्धालु व्यक्ति गोदावरी मे स्नान के लिए आने-जाने लगे थे। ठाकुर सिंह सिक्खो के डेरे का सेवक था। उसकी राजगुरु, बन्दा बैरागी और रामचन्द्र तक पहुच थी। इरा और रेड्डी को प्रेम मे विभोर देखकर वह खिल-खिलाकर हस पड़ा और कहने लगा—'देखो ये इश्क की करामातें कि पत्थरो पर भी नींद आ जाती है। वाह रे शूरवीर! हम नही मालूम था कि कामदेव ने यहा भी चारा फैंका हुआ है। अब समझा कि तुम्हे आश्रम आने का समय क्यो नही मिलता।'

भयभीत प्रेमी आश्रम की ओर चल दिए।

ठाकुर सिंह को इश्क के साप ने क्या काटा कि वह मजनू बन बैठा। मलाई खाने वाला शौकीन खुरचन पर ध्यान नही देता। इरा पर उसने नैनो के डोरे डाले, भय की धमकी दी, रोब के और बदनामी के जाल भी फैंकाये पर मछली हाथ न लगी। वह डेरे के सिक्खो से कानाफूसी करने लगा। उसकी प्यार की बातें लोग चाव से सुनने लगे। इरा के प्यार की चर्चा धीरे-धीरे डेरे म होने लगी। राजगुरु के कान मे भी भनक पड़ी पर वे बोले कुछ भी नहीं। ठाकुर सिंह टट्टू की तरह दुलत्तिया झाड़ता रहा पर राजगुरु के तेवर रूपी रस्सो ने उसके पाव जकड़ दिए। बैरागी ने भी उसकी आशाओ का गला घोट दिया।

रामचन्द्र लुबाना अब स्वस्थ हो चुका था। उसके कानो मे भी कदाचित् भनक पड़ी। उसने आज रात पजाब लौट चलने का निश्चय कर लिया। काफिले की घटिया उसके कूच के नारे के साथ बज उठी। राजगुरु ने जानते हुए भी कुछ न कहा और जाते हुए यात्री की पीठ देखता रहा। लुबाने ने गुरु महाराज को मन ही मन दूर से नमस्कार किया और अपनी राह पकड़ी।

रेड्डी सोया हुआ स्वप्न मे प्यार के झूले मे झूल रहा था। काफिले के सग, दूर नादेड़ से दूर, विन्ध्याचल की पहाड़ियो से परे, मैदानो की गोद मे,

दिल मे दुःखो का भार लिए हुए पर-वशता की जजीरो मे बन्धी हुई पालकी मे बैठी हुई दुल्हन की तरह इरा काफिले के साथ जा रही थी।

रेड्डी स्वप्न में चौंका तो एक बार अवश्य किन्तु गोदावरी के शीतल वायु ने थपथपाकर उसे फिर सुला दिया। उस समय उसका सुप्त मन कह रहा था—इरा! तुम जा रही हो। क्या तुम्हारा मन अकेले मे लगेगा। अच्छा! जा रही हो तो जाओ मैं एक दिन विन्ध्याचल लाघ कर तुमसे अवश्य मिलू गा।

तब उसे इरा के शब्द सुनाई पड़े। वह कह रही थी—हा, जा रही हू प्रिय! बन्धनो की पुजारिन ठहरी। तुम अवश्य आना। हम लोग अवश्य मिलेंगे। तलवारो की छाया मे, तोपो की घनघनाहट म, युद्ध के चीत्कार में। उस समय तुम मेरी माग भरना और मैं अपना सर्वस्व तुम्हारे चरणो मे समर्पित करूगी।

चढते हुए दिन ने रेड्डी की झोपडी मे झाका। रात के सोए-सोए वह अपने दिल की बारहदरी लुटा बैठा था। जालिम बलोच ले गए थे पुन्नू* को। आश्रम मे झाड़ू फिर चुका था जैसे यहा कोई आया ही न हो और न किसी ने जाते हुए किसी को देखा हो। वह दौडता हुआ इरा की झोपडी मे गया।

झोपडी खाली थी। सिवा कुछ टूटे मटको के रेड्डी को वहा कुछ भी न दिखाई दिया। रेड्डी इरा को खोज रहा था। पर उसे मिली उसकी एक पाजेब ही। पाजेब रेड्डी को इरा का सन्देश देने के लिए कदाचित् उतावली दिखाई दी। रेड्डी ने उसे झपटकर उठा लिया और उसे इरा के प्यार की निशानी समझकर चूम लिया।

---

*पजाबी की प्रसिद्ध लोक कथा 'ससी-पुन्नू' की नायिका।

१०

□□□

बन्दे का प्रस्थान

बहादुरशाह का पत्र क्या आया, जैसे किसी ने इमानउल्ला के कोमल जख्मों पर नमक छिड़क दिया हो। विष उगलता हुआ सांप किसी को डस लेना चाहता था, डंक मार-मारकर वह दुश्मन का शरीर छालों से भर देना चाहता था। उसका मुंह बन्द था। वह विवश था। उसके दांत चिपके हुए थे और उसकी ज़बान कैंची की तरह कैदखाने में तड़प रही थी। उसका हाथ रह-रहकर तलवार की मूठ पर आ जमता। उसकी भुजाएं अपनी निष्क्रियता का ढिंढोरा पीटने लगीं। उसकी नागिन जैसी तलवार उसे ललकारती, तो उसका दिल मथ जाता और वज्र शरीर की फौलादी पिंडलियां डगमगा जातीं। वह सम्राट् की आज्ञा का उल्लंघन कर सकता था पर मित्र-द्रोह का कलंक अपने सिर पर नहीं लेना चाहता था। उसने बहादुरशाह का पक्ष ग्रहण करके कई बार औरंगज़ेब को भी क्रुद्ध किया था केवल मित्रता की परिपुष्टि के लिए। उसे कभी मित्र बहादुरशाह पर गुस्सा आता तो कभी भारत-सम्राट् बहादुरशाह पर।

शराब के प्याले में उसने अपना इमान घोल दिया, प्यार न्योछावर कर दिया, आकांक्षाएं वार दीं और मित्रता को सर्वोपरि मान कर प्याले को होठों से लगा दिया। उसकी आंखें मचल पड़ीं और उसका रोम-रोम मस्ती से भर उठा। इस मस्ती में भी उसकी अन्तर वेदना एक बार पुनः भड़की। परन्तु नर्तकी के घुंघरुओं की झंकार ने उसे उतावला नहीं होने दिया।

महफिल समाप्त होते ही इमानउल्ला के हृदय में फिर आग भड़क उठी। वह किसी बहाने सिक्खों को नीचा दिखाना चाहता था। एक दिन इमानउल्ला की शह पाकर मुगल सिपाही शिकार से लौटते समय बिना बात का बतंगड़ बनाकर सिक्खों से जूझ पड़े। सिक्ख भी सावधान थे। उन्होंने भी बहादुरी से सामना किया। तलवारों से तलवारें टकरा उठीं। इस मुठभेड़ में एक सिक्ख और चार मुगल काम आए। अपने साथियों को धराशायी होते देख मुगल

सिपाही मैदान छोडकर भाग निकले और तरह-तरह की बातो से इमानउल्ला के कान भरने लगे।

इस मुठभेड की चर्चा नादेड वासियो मे जटा नटा होने लगी। अनेक नगर निवासी गुरु जी के डेरे मे जा पहुचे। वहा एक मेला-सा लग गया। राजगुरु ने इस घटना का महत्त्व भली-भान्ति समझा और सोच मे पड गया। वह नही चाहता था कि छोटी छोटी बातो के कारण मुगलो से टकराकर अपनी शक्ति क्षीण की जाए। वह मुगलो की हर चाल को देखकर ही कदम उठाना चाहता था। बिगडे हुए सिक्ख मुगलो से जूझने के लिए उतावले हो रहे थे और गुरु जी के संकेत की प्रतीक्षा कर रहे थे। गुरु गोविन्द सिंह जी के टाके फिर उखड चुके थे और घाव से मवाद भी बहने लगा था। आज की मुठभेड की बात सुनकर उन्होने राजगुरु से कहा—'अब बन्दे का रहना यहा ठीक नहीं है। इसे बहुत जल्दी पंजाब के लिए प्रस्थान करना चाहिए।'

—'मैं भी यही सोच रहा हू सतगुरु! परिस्थितिया अब बन्दे के यहा रहने के लिए अनुकूल नही हैं। इसे अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए शीघ्र अति-शीघ्र पंजाब चले जाना चाहिए।' राजगुरु ने कहा।

पास खडे हुए बन्दे बहादुर को देखकर गुरु गोविन्द सिंह जी ने कहा—'क्यो वैरागी तैयार हो जाने को?'

हाथ जोडकर बन्दे ने उत्तर दिया—'सतगुरु के संकेत की प्रतीक्षा है। सेवक तैयार है।'

—'तुम्हारे साथ और कौन-कौन जाएगा?'

गुरु जी का प्रश्न सुनकर बन्दे ने चारो ओर देखा और चुप रह गया। तब सतगुरु ने अपनी शिष्य मण्डली को सम्बोधित करते हुए प्रभावशाली शब्दो म कहा—'कौन सिक्ख है जो अपने पंजाब के लिए अपनी आहुति देने के लिए तैयार है? कौन है जो अपनी बहू बेटियो की लाज को बचाने के लिए विधर्मियो से टक्कर लेने के लिए प्रस्तुत है? समय आ गया है वीरो! अपने देश, अपने धर्म की रक्षा के लिए मर मिटने का।'

सतगुरु के वचन सुनकर कुछ सिक्ख बन्दे वैरागी के पीछे खडे हो गए। गुरु जी ने उनकी गणना करके कहा—'बस! पच्चीस ही . ।'

—'ये पच्चीस हजार के बराबर हैं सतगुरु!' बन्दे ने कहा।

—'सतगुरु! इन वीरो के पंजाब पहुचने से पहले गोसाइयो की टोलिया भी वहा पहुच जाएगी। बन्दे की तलवार के पीछे इन गोसाइयो की २५ हजार तलवारें नाचने लगेंगी। माझे-मालवे और राजपूताने के सिक्ख भाले लिए जान की बाजी लगाने के लिए इनका साथ देंगे। आप इन वीरो को पंजाब के लिए प्रस्थान करने का आदेश दे।' राजगुरु के ये शब्द थे।

—'इधर तो आओ वैरागी बहादुर ! मुझे तुम बहुत प्यारे हो । जाते समय मुझ से भी कुछ लेते जाओ । खाली हाथ पुजारी मन्दिर से प्रस्थान नहीं करता ।' (पाच प्यारो की ओर संकेत करते हुए) दया सिंह आओ ! बाह पकड लो मेरे बन्दे की । भाई काहन सिंह ! तुम भी आओ । निवोध सिंह ! तुम भी उठो । राजसिंह ! तुम्हारी भी आवश्यकता है । रण सिंह तुम क्यो पीछे हो । पकड लो हाथ मेरे बन्दे का । बन्दा तुम लोगो का अगुआ है । राय पाचो की होगी किन्तु आज्ञा बन्दे की होगी । तुम पाचो का मत मेरा मत होगा । (बन्दे से) मैं सदा तुम्हारे साथ हू । पन्थ मेरा ही रूप है पन्थ की सेवा अकाल पुरुष की सेवा होगी ।' गुरु जी ने कहा ।

पाच प्यारो ने पहले सतगुरु को प्रणाम किया और फिर बन्दे बहादुर को सलामी दी ।

—'अभी मेरा दिल नही भरा । एक अलभ्य वस्तु मुझ से भेंट रूप मे और ले लो ।' ये शब्द—कह कर सतगुरु ने पाच तीर अपने तरकस मे से निकाले और उन्हे बन्दे की ओर बढाते हुए कहा—'ये विजय चिह्न हैं । इन तीरो ने कई मोर्चे जीते हैं । ये लो निशान-साहब (पताका) । जहा-जहा निशान-साहब फहराओगे वहा-वहा के शत्रु तुम्हारे आगे घुटने टेकने को बाध्य होगे । इन्हें प्राणो से अधिक प्रिय समझना । तुम जब तक यती सती रहोगे तब तक तुम्हारा बाल बाका न होगा । जाओ वाहिगुरु तुम्हे विजयी बनाए ।' सतगुरु ने आशीर्वचन देते हुए कहा ।

राजगुरु ने कहा—'तुम बड-भागी हो, पुण्यात्मा हो । यह पदवी अब तक किसी को नही मिल सकी है । तेज धारी सन्त भी तुम्हारे साथ हैं और आत्मा ज्ञानी भी । तुम मंजिल पर मंजिल पार करते हुए पंजाब जा पहुचो और मेरी प्रतीक्षा करो । सरहिन्द का मोर्चा हम दोनो मिलकर जीतेंगे । सरहिन्द दोनों की तलवारो के आगे झुकेगा । हमारा मिलन अब सरहिन्द की सीमा पर होगा । सतगुरु से प्रमाण पत्र लेते जाओ ।'

राजगुरु अभी और भी कुछ कहना चाहते थे कि बीच में रेड्डी बोल उठा—'सतगुरु मुझे भी आज्ञा दीजिए । मैं भी बन्दे के साथ जाने को प्रस्तुत हू ।'

—'मुझे भी आज्ञा दें सतगुरु !' एक अन्य सिक्ख के शब्द थे ।

इसके उपरान्त अन्य वीरो ने भी सतगुरु से इसी प्रकार की याचना की ।

—'समय आन पर तुम लोग भी बन्दे के साथी बनोगे । बन्दे का जाना ही समयोचित है । समय को पहचानो और बन्दे को अपनी मंजिल पर पहुचने दो । बहादुर कभी कमजोर नही पडते ।' गुरु जी ने सबको शान्त करते हुए कहा ।

रेड्डी को दुःखी देखकर गुरु जी ने फिर कहा—'तुम क्यो दुःखी होते हो

रेड्डी ! बन्दा बिना तुम्हारे सरहिन्द नहीं जीतेगा। सरहिन्द तुम्हारी तलवार के सम्मुख झुकेगा और तुम्हारा अभिवादन करेगा। सरहिन्द जीतन मे तुम्हारा ही मुख्य हाथ होगा। तुम्हारी बहादुरी की ऐसी धाक जमेगी कि तुम्हारा नाम सुनकर सोती हुई पठानियां भी चौंक पड़ेंगी। तुम बन्दे के सबसे बड़े सेनापति होंगे। तुम्हारे वहा पहुचने से पहले तुम्हारी आत्मा वहा पहुच जाएगी। तुम लोगो की वेदी गढी मे गडी हुई है। तुम राजगुरु के साथ जाना। बन्दा तुम्हें आगे बढकर विजय की बधाई देगा। तब मिलकर पंजाब को स्वाधीन करना। जब तक तुम लोग सगठित रहोगे तब तक मुगल झुक-झुककर तुम लोगों को सिर नवाएंगे। धैर्य रखो और बन्दे को विदा दो। विजय सूचक तिलक उनके माथे पर लगाओ।' गुरु जी ने कहा।

रेड्डी सत्गुरु के आश्वासन से सन्तुष्ट हो गया और जय घोष करने लगा। जयकारों से डेरा गूंज उठा। सायंकाल की गहरी छायाएं और अधिक गहरी हो रही थी। तम के आंचल मे बैरागी ने नादेड़ की सीमा पार कर ली।

उषा की पहली किरण ने बन्दे को बुरहानपुर मे देखा।

११

□□□

नगीना घाट

अखण्ड पाठ चल रहा था। उत्साहपूर्वक नर-नारी अखण्ड पाठ सुन रहे थे। सब लोगों को बन्दे बहादुर और रामचन्द्र सुवाने की अनुपस्थिति अखर रही थी। पर राजगढ़ की सतर्कता के कारण इन दोनों के प्रस्थान का ज्ञान इन लोगों को नहीं हो सका था। कोई कहता बन्दा फिर सिद्धि प्राप्ति में रत हो गया है। कोई कहता कि उसने पुनः समाधि लगा ली है। जोगियों और तरुणियों में ईश्वर ही जाने क्या-क्या करतब दिखाने की कलाएं हैं। गोदावरी तपस्वियों को भी जन्म देती है और कर्मठ नेताओं को भी। यह उसके पवित्र जल का ही गुण है जिसने शिव मन्दिर के पुजारी को योद्धा बना दिया है।

इधर बहादुरशाह के स्वागत के लिए शहर सजाया जा रहा था। ईद वाले दिन वह इस नगर में पदार्पण करने को था और उसी दिन इधर डेरे में अखण्ड पाठ की पूर्ण आहुति भी दी जाने को थी।

ईद का दिन था। नांदेड़ की सज-धज आज अपूर्व थी। नांदेड़ की बस्ती बनाव-शृंगार किए हुए नव-वधू सी प्रतीत हो रही थी। दिल्ली का वैभव आज नांदेड़ की सज धज के आगे फीका था। स्वर्गीय सुषमा का आनन्द आज नांदेड़-वासियों को सुलभ था। चारों ओर लहरों की भांति मुगल पताकाएं लहरा रही थीं और सजग मुगल सिपाही हाथ में बन्दूकें लिए पहरा दे रहे थे। एक दरबारी भट कह रहा था—नगर की सजावट तो जन्नत को भी मात कर रही है।

—'बिना समय के कोई किसी को नहीं पूछता।' एक सिपाही ने उत्तर दिया।

—'बहादुरशाह ने दक्षिण में पैर क्या रखे हैं कि नांदेड़ की तो सुनी गई है।' एक दक्षिणी सिपाही ने कहा।

—'बडो की बात झूठी नही होती। ठीक ही कहा गया है कि सेती ठाकुर सेती।'- एक हिन्दोस्तानी सिपाही ने कहा।

जब बहादुरशाह की सवारी नादेड पहुची तो उसका आदरपूर्वक और धूम-धाम से स्वागत किया गया। सलामी में तोपें दागी गईं। सिपाहियो ने पक्तिबद्ध होकर 'शाहेआलम जिन्दाबाद' के नारे लगाए। सारा शहर सजग हो गया। शाम को बादशाह सलामत की सवारी निकली। घुडसवारो तथा प्यादो से घिरे हुए झूलते हुए हाथी पर बैठे हुए सम्राट् ने महावत की ओर देखते हुए पूछा—

—'ये नीले तम्बू किन लोगो के है?'

महावत ने जिज्ञासापूर्वक इमानउल्ला की ओर देखा जो बादशाह सलामत के हाथी के साथ-साथ अपने घोडे पर चल रहा था। उसने उत्तर दिया—बागी, काफिर, खूनी, भेडिये सिक्खो के हैं जहापनाह! उन्होने आपके विरुद्ध बगावत खडी की है। वास्तव मे मुगल हुकूमत के यही दुश्मन हैं। आलम-पनाह को कदाचित् बहुत प्यारे है ये सिक्ख। ये सिक्ख सदा से मुगलो के विरोधी रहे हैं।' आलमपनाह नही जानते है कि खुसरो के छिपने मे इन्ही सिक्खो का हाथ था। शाहजहा से युद्ध ठानने और आलमगीर के नाको दम करने वाले भी यही नीली पोशाको वाले सिक्ख थे। चोट खाई हुई सापिन और हारा हुआ सिपाही अविश्वसनीय होता है। भगौडा अवसर की ताक मे रहता है, जरूर चोट करेगा। सपोले का सिर कुचल देना ही नीति है। कायमबख्श की हत्या के पुरस्कार मे अब पजाब की सूबेदारी भी मागी जा सकती है और सरहिन्द के सूबेदार का सिर भी। क्या जहापनाह पहने की तरह फिर इन्कार कर सकेंगे। राह के पत्थर को गड्ढे मे फेंकने की आज्ञा दीजिए जहापनाह। समय किसी की प्रतीक्षा नही करता।

—'जवानी मे यदि लकडबग्घा खून कर बैठता है तो बुढापे मे वह अहिंसावादी बन जाता है।' बहादुरशाह ने उत्तर म कहा।

—'किन्तु इनकी नीयत नही बदली शाहेआलम!'

—'सगति का प्रभाव मिटाए नही मिटता इमानउल्ला! सूबेदारी मे कभी झुकना भी पडता है और कभी झुकाना भी। किसी बात को बाध्य होकर मानना ही पडता है।' बहादुरशाह ने उत्तर दिया।

हाथी झूमता हुआ आगे बढ रहा था। शहनाई के स्वर तथा नर्तकियो के घुँघरुओ की झकार पर नादेड निवासी खिचे चले जा रहे थे। बहादुरशाह ने महावत को हाथी रोकने की आज्ञा दी।

महावत ने अकुश के प्रहार से हाथी को रोक लिया। हाथी रुकते ही सारा जलूस रुक गया। नर्तकी के नाचते हुए पैर भी थम गए। किन्तु शहनाइया बजती

रही। इमानउल्ला मन ही मन जल रहा था और उसके गर्म उच्छवास बाहर नहीं निकल पा रहे थे।

जब डेरे के आगे सवारी रुकी तो सतगुरु ने बाहर आकर बहादुरशाह का स्वागत और जय-जयकार किया। इमानउल्ला दांत पीसते हुए यह सब कुछ देख रहा था।

—'पंजाब केसरी का हाल कैसा है' बहादुरशाह ने सतगुरु से पूछा।

—'ठीक है!' सतगुरु ने दोनों हाथ उठाकर आशीर्वाद दिया।

बहादुरशाह ने अपने एक सेवक को सम्बोधित करते हुए कहा—'रत्नों की थैली।'

—'उपस्थित है जहांपनाह!' सेवक ने कहा।

थैली में से एक बड़ा-सा हीरा हाथ में लेते हुए बहादुरशाह ने कहा—'गोलकुण्डे की खानें रत्न उगलती हैं। हीरे इनके गर्भ में जन्म लेते हैं। यही हीरा तानाशाह की बेगमों ने मुझे नजर किया था। सुना जाता है कि ऐसा हीरा सदियों बाद ही गोलकुण्डे की खानों से प्राप्त होता है। मैं आपको यही हीरा नजर करता हूं।'

—'अहो भाग्य!' इतना कहकर सतगुरु ने एक सेवक की ओर संकेत किया और वह एक थाली में सिमरना (छोटी माला) रखकर उनकी सेवा में उपस्थित हुआ। सिमरना बादशाह की ओर बढ़ाते हुए गुरु जी मधुर शब्दों में कहने लगे—'हम फकीरों के पास इसके अतिरिक्त और क्या हो सकता है।'

—'तस्बीह'। बहादुरशाह के मुख से अनायास यह शब्द निकला और वह चुप हो गया। उदासी उसकी आंखों में झलकने लगी। सब लोग दांतों तले उंगली दबाकर चुप हो गए।

—'भारत-सम्राट् की आंखों में उदासी! इसका कारण?'

गुरु जी को अपने प्रश्न का उत्तर न मिला। चारों ओर स्तब्धता छा रही।

अधरों में मुस्कराते हुए गुरु जी पुनः कहने लगे—'गोदावरी की लहरों की ओर देखो भारत सम्राट्।'

किन्तु बहादुरशाह बड़बड़ा रहा था—'तस्बीह!' कदाचित् उसने सतगुरु के शब्द नहीं सुने थे।

गुरु जी पुनः बोले—'गोलकुण्डे की खानों पर टीका पड़ा है दिल्ली का राजा, और अपने दिल की दिल्ली अपने ही हाथों लुटा बैठा है। हीरों के मोह ने तुम्हें ताऊस की स्मृति फिर तो नहीं दिला दी? मोह माया गोदावरी की लहरों की तरह चंचल है शहनशाह। मन लेवनहार है। तानाशाह के हीरों की चमक के आगे सम्राट् की आंखें चौंधिया गई हैं। सच्चे भारतीय ऐसी चमक पर मोहित नहीं होते। मुगलों को हीरे कदाचित् बहुत प्यारे हैं।'

—'खुदा, तस्बीह, मुसल्ला, नमाज और इमाम जीवन रूपी नरक से बचाने वाले हैं।' बहादुरशाह ने कहा।

—'गोदावरी की स्वर्णिम तरंगों के दर्शन भारत सम्राट ने किए हैं। कितनी सुन्दर हैं वे मन-चली और चंचल। गोदावरी का निर्मल जल जीवन रूपी दर्पण की भान्ति स्वच्छ है। इन हीरों की नीली चमक पर सम्राट् हो आसक्त होते हैं। योगियों को यह बिल्लौरी चमक आकृष्ट नहीं करती।' इतना कहकर गुरु जी ने भेंट स्वरूप में प्राप्त हीरा गोदावरी में फेंक दिया। एक टक सा शब्द हुआ और हीरा अथाह जल के अंचल में छिप गया।

बहादरशाह की आंखों में क्रोध उतर आया और माथे पर बल पड़ गए।

—'हीरों की पहचान बादशाहों को ही होती है।' बहादुरशाह ने क्षुब्ध वाणी में कहा।

गुरु जी मुस्करा उठे। कहने लगे—'शाहे आलम का दिल डोल उठा। हीरों की चमक ने शहंशाह के हृदय को आंदोलित कर दिया है। (एक क्षण रुक कर) बादशाह सलामत देखें गोदावरी की ओर। गोदावरी के गर्भ में समाया हुआ हीरा तो गोताखोर ही निकालेंगे। हुजूर देखें—इनमें आपका दिया हुआ हीरा है। प्रकृति की गोद में हीरों की कमी नहीं है।

इतना कहकर गुरु जी ने झुककर नीचे से मुट्ठी भर कंकड उठा लिए और उसे हथेली पर रखकर बहादुरशाह की ओर बढ़ा दिया। बहादुरशाह की आंखें चौंधिया उठीं। सतगुरु की हथेली पर अलभ्य रत्न चमक रहे थे। बहादुरशाह मूढ़ की भान्ति कभी गुरु जी की ओर और कभी उन हीरों की ओर देख रहा था।

●

१२

□□□

अंतिम दर्शन

आज अखण्ड पाठ का अन्तिम दिन था। संगत जुटी हुई थी। भगवान् भास्कर के उदय होते ही अखण्ड-पाठ सुचारु रूप से सम्पन्न हुआ। तब गुरु गोविन्द सिंह जी उठे और गुरु ग्रंथ साहब को श्रद्धापूर्वक नमस्कार करने के उपरान्त संगत को सम्बोधित करते हुए कहने लगे—'अकाल पुरुष के प्रेमियो! मानव जीवन पानी के बुलबुले के सदृश्य है, जिसके बनने तथा बिगड़ने मे अधिक समय नही लगता। हमारा जीवन नदी तट के वृक्ष की भान्ति है जो आज है और कल नही भी रह सकता। गुरु-मुखो! अकाल पुरुष का स्मरण करके अपना जीवन सफल बनाओ और आवागमन के चक्कर से अपने को मुक्त करो। अपनी आत्मा को पहचानो। आत्मा अमर है जिसका कभी नाश नही होता। मनुष्य को अपना कर्म करते रहना चाहिए, फल उसे स्वयं भगवान् देंगे। कर्म बहुत बलवान् होते हैं। कर्म करो और करते जाओ। यही धर्म है और यही कर्मयोग है। दाता तुम्हें कर्मानुसार फल देंगे। केवल अकाल पुरुष से ही प्रार्थना करो और किसी के आगे हाथ मत फैलाओ। अकाल पुरुष एक है और वह निराकार है। वह सर्व शक्तिमान है। वही सब का गुरु है। गुरु-वाणी के आगे नत मस्तक हो और उसे ही अपना सबसे बड़ा गुरु मानो। गुरु-वाणी तुम लोगो का पथ-प्रदर्शन करे। यह मेरा आशीर्वाद है।'

तदुपरान्त गुरु जी ने राजगुरु को लक्ष्य करते हुए कहा 'हमारी दक्षिण यात्रा पूर्ण हो चुकी है। इस यात्रा-काल मे यद्यपि हम राजपूतो और मराठो को एक-ध्वजा तले एकत्र नही कर सके और न बीजापुर और गोलकुण्डे के हारे हुए सैनिको को ही जुटा सके है फिर भी हम बन्दे को पंजाब भेजने मे सफल हुए हैं। इस यात्रा का सबसे बड़ा यही लाभ हुआ है। अब तुम्हें भी यहां रहना उचित नही है। बन्दे बहादुर को तुम्हारी इस समय अत्यधिक आवश्यकता है। जाओ और लोहगढ़ तथा सरहिन्द के किलो पर अपने झण्डे फहराओ। अब तुम

तपस्वी नही हो, त्यागी नही हो बल्कि सिक्ख राज्य के सेनापति हो। तुम्हे अब सिक्ख-राज्य की स्थापना करनी है। सगठित रहना। तुम्हारे प्रहारो से मुगल थर-थर कांपेंगे।'

—'अब यह पथिक-जीवन यात्रा समाप्त करना चाहता है। अब इसके पाव थक चुके हैं। शरीर चूर-चूर हो चुका है। मस्तिष्क बोझिल हो चुका है। आत्मा अब समाधि लगाना चाहती है। जिस प्रकार साप अपनी केंचुली छोड देता है, अथवा मनुष्य अपने पुराने वस्त्र त्याग देता है उसी प्रकार आत्मा भी अपना चोला बदलती है।'

बीच में ही राजगुरु कहने लगे—'सतगुरु! ये पहेलिया समझने म हम असमर्थ हैं। गोरख-धन्धे हम नही सुलझा सकते। कृपानिधान हम और न उलझाइए। कोई जोगी ही जोगी की माया समझता है। हम तो गृहस्थी हैं और वे भी सासारिक प्रपचो मे फसे हुए।'

गुरु जी की आखो मे प्रेम छलक रहा था। वे कह रहे थे—'इमानउल्ला चोट खाए हुए साप की भाति विष उगल रहा है। अभी वह पूरी तरह से फन नही फैला पाया है। समय आ गया है कि चोट करने से पहले ही उसका सिर कुचल दिया जाए। कही ऐसा न हो कि उसके मोहरे सीधे रास्ते पर आ जाए।'

'हम तो आज भर के ही मेहमान हैं। न जाने कल का सूर्य हमे दर्शन दे या नही भी। तुम लोगो का मान पजाब मे ही है और पजाब म ही तुम्हारी वीरता का मूल्य आका जायेगा।'

श्रोताओ के नेत्र भर आये। पुराने खण्डहरो की-सी चुप्पी वहा व्याप गई। इस चुप्पी को भग करते हुए एक सिक्ख कहने लगा—'नीले घोडे के सवार बाज वाले बहादुर! इस परदेश म हमे किस के आसरे छोडे जा रहे है! यहा हमारी तो कोई बात पूछने वाला भी नहीं है।'

— समय को पहचानो। शतरज के खिलाडी की चाल समझो और उसे पकडो। दिन ढलने का आया है। ढलती परछाई पर लुब्ध मत होना राजगुरु! यह देह सदा नही रहेगी। समानो को इसम आसक्ति नही रखनी चाहिए। कुम्हार मिट्टी क बहुत सुन्दर बर्तन बनाता है। जब वही उसके हाथ से गिर कर टुकडे टुकडे हो जाता है तब वह इन टुकडो को दूसरी मिट्टी से मिलाकर नया रूप देता है।'

—'चावल, कमल के फूल, गगा जल, केसर, नारा, और सुपारी मगाओ।' गुरु जी ने कहा।

—'हाजिर हैं सतगुरु!'

सतगुरु उठे और उन्होने अरदास की। तब जयकारा बोलाया गया। इसके उपरान्त गुरु जी ने नारियल पर गगा-जल छिडका और फिर नारा (मौली)

बांधा। केसर का टीका लगाया। अक्षत चढ़ाये। तब उसे गुरु ग्रन्थ-साहब के आगे रखकर मस्तक नवाया। सारी सभा के मस्तक गुरु ग्रन्थ साहब के आगे झुके हुए थे।

—'मेरे पीछे यही तुम्हारा गुरु है। इसका पल्ला पकड़ना। इसका पाठ करके अपनी आत्मा को शुद्ध बनाना। और अपने कर्म में रत तथा दृढ़ रहना।' गुरु जी ने कहा।

सोलहवें पाठ का कीर्तन चल रहा था। गुरु गोविन्द सिंह उठकर अपने तम्बू में चले गये। प्रकाश देने वाला सूर्य काली घटाओं की काली चादर में ऐसा जा छिपा कि वह प्रत्यक्ष न हो सका।



१३

□□□

घुंघरु फिर नाच उठे

भोर होते ही मुगल सेना ने २० तोपो की सलामी दी। सिक्खो के डेरे मे भी मातम छाया रहा। परन्तु इमानउल्ला रात को सिक्खो पर आक्रमण करने की तैयारिया करने लगा। कायक्रम निश्चित होने पर सबने अपना-अपना काम बाट लिया। सिक्ख भी चुप नही बैठे थे। राजगुरु कह रहे थे— 'अगीठे साहब की रक्षा के लिए कौन-कौन तैयार है?'

पाच सिक्ख कमर कस कर खड़े हो गये।

—'तुम लोगो को अगीठे साहब की रक्षा के लिए नादेड मे ही रहना है। कदाचित् हम पौ फटने से पहले ही पजाब की राह पकड ले। गुप्तचर बतलाते हैं कि इमानउल्ला आज रात मे प्रहार करेगा। बहादुरशाह की आज्ञा की उपेक्षा की जा रही है। विद्रोही होकर भी इमानउल्ला यह लडाई मोल लेगा। सिर नवा देने पर हम पजाब नही जीत सकेंगे। ईश्वर की इच्छा समझकर सन्नद्ध हो जाओ और इनसे लोहा लो। वीर सिक्ख हतोत्साह नही होते। उठो वीरो! कमर कस लो। घोडो पर जीनें चढा लो। रसद का प्रबन्ध करो। शायद कूच का बिगुल दिन चढने से पहले ही बज जाये। गुरुग्रन्थ साहब की जय जयकार करो और कडाह-परशाद छक लो। अभी बहुत से काम करने को पड़े हुए हैं।' ये शब्द राजगुरु के थे

सायकाल होते ही इमानउल्ला के खेमे मे हलचल मच गई। क्षण-क्षण मे दूत समाचार ला रहे थे। पहले हल्ले का कौन अगुआ होगा। जो सामने आये उसे मौत के घाट उतार दो। सूर्य की पहली किरण अपनी लाली की तुलना सिक्खों के रक्त से करे। दूसरा हल्ला मैं स्वय करूगा। राजगुरु मेरे मुकाबले की चोट है। अगडाइया लेते हुए सिक्खो की कमर तोड़ दो जिससे वह दिन चढने पर सिर न उठा सकें। उधर सिक्खो की आख लगे और इधर

तुम्हारी तलवारें उन बेखबरो पर चमक उठें। इमानउल्ला अपने साथियो को शिक्षा दे रहा था। सब लोग सावधान होकर सुन रहे थे।

बहादुरशाह अपनी महफिल मे मदहोश था।

एक हरकारे ने इमानउल्ला को सदेश देते हुए कहा—'भारत सम्राट् ने आपको महफिल मे बुलाया है।'

—'मातम के दिन महफिल !' इमानउल्ला को आश्चर्य हुआ।

—'शाही खेम म महफिल जुटी हुई है। कुछ विशिष्ठ अधिकारी निमन्त्रित हैं।' यह कहकर सदेशवाहक चला गया।

इमालउल्ला अपने साथियो को यह कहकर चला गया कि तैयार रहना और मेरी आज्ञा की प्रतीक्षा करना। मैं उलटे पाव लौट आऊगा।

शाही खेमे म राग-रग हो रहा था और महफिल लगी हुई थी। मधु का दौर चल रहा था। मधुवाला झूमती हुई मधु बाट रही थी। नर्तकी की पायल की झकार मतवालो को और अधिक मतवाला बना रही थी। अपने कटाक्ष और उभार से रिंदा[1] का चित चलायमान कर रही थी। आखो की कटोरियो मे मस्ती छलक रही थी।

इमानउल्ला कह रहा था—'हुजूर ! घु घरुओ की झनकार सुनकर तो ब कान भी पक गये हैं। अब तक कोई मधुर रागिनी सुनाई नही पडी।'

—'तलवारो की सनसनाहट सुनने वाले वीरो को घु घरुओ की झनकार ...न्द नही आती। उनके कान तो युद्ध के चीत्कार सुनने क आदी होते हैं। वे घु घरुओ की लय को क्या जाने।' बहादुरशाह ने उत्तर दिया।

—'आलमपनाह ! यह बात नही है। मैं मैदान का चाहे राजा हू पर नृत्य-कला का सम्राट् भी हू। मैं गुजरात म रह आया हू। सोमनाथ की देव-दासियो से मैंने शिक्षा ली है।' इमानउल्ला ने उत्तर दिया।

—'तब इस महफिल का सम्राट् इमानउल्ला ही बने। नटराज की नृत्य कला की परख आज महफिल करेगी। सुकुमार पैरा म घु घरुओ की झनकार, रूप की कमर मे सौ-सौ बल, मृगनयनियो की आखो मे मस्ती के डोरे, महफिल म खिले रूप की वाटिका देख देखकर हम लोग उकता गय हैं। शहद चाटते-चाटते जबान पर छाले पड गये हैं। अब हम कुछ नमकीन स्वाद भी लेना चाहते हैं।' बहादुरशाह ने कहा।

—'वाह वाह ! क्या कहने ! ऐसा ही हो।' महफिल गू ज उठी।

— जहापनाह ने मु ह की बात छीन ली है। कैसी मिठास है इमानउल्ला के गले मे ! कैसी लचक है सुरीली आवाज मे। सोने म सुगन्ध ! किशोरावस्था

---

1. महफिल म शराब पीने वाला।

मे किसी गवैये को ऊचा साँस नही लेने देता था। मियाँ तानसेन के वशजो से सगीत सीखने का इसे गौरव है। अवस्था और अनुभव के कारण अब उसमे परिपक्वता आ गई है। अभी तो कल की बात है मैंने और जहापनाह ने आगरे में यमुना तट पर इनकी तानें सुनी।' ममशाद ने कहा।

—'बुढौती मे टाट की ओढ़नी ओढना चाहते हैं आलमपनाह! बचपन की ये बातें पुरानी पड चुकी हैं। जवानी जाते समय इन्हे अपने साथ लेती गई। बचपन के साथ की टोलिया भी बिछुड गई हैं और अब रग का ताव मद्धिम पड गया है।' ईमानउल्ला ने कहा।

—'सूबेदार को जरा भरकर प्याला देना साकी जिससे नशे की मस्ती आखो मे उतर आवे। जुल्फिकार! ले आओ घु घरुओं का जोडा। पहना दो इमानउल्ला के पैरो मे। नही नही! बहादुरशाह के हाथ ही आज अपने लगोटिये यार के पैरो मे घु घरु बाधेंगे और तब नाचेगी मेरी छमक छैंया। कितने सुन्दर लगते हैं मेरे लगोटिये यार के पैरो मे घु घरु'। बहादुरशाह ने इमानउल्ला के पैरो म घु घरु बाधकर कहा।

इमानउल्ला को सकोच मे पडा हुआ देखकर जहादाद खा कहने लगा—'सुभान अल्ला! जब नाचने लगे तब घु घट कैसा। यहा कौन-सी बच्चो की मण्डली जुटी हुई है। हम-उमर तो सभी है। शर्म किस बात की। महफिल मे आते समय शर्म खूटी पर टाग आना था।'

—'नक्कारखाने मे जहा सुरीली शहनाई बजती हो वहा तूती की आवाज कौन सुनेगा। इमानउल्ला ने कहा।'

—'शहनाई म से अलगोजे की तान भी निकल सकती है। बुलबुलो की आवाज सुनने वाले चकोरो की बोली पर मस्त हो सकते हैं। सुकुमार गले से भी ध्वनि निकलती है और बास की पोर म से भी। पर मिठास दोनो मे होती है। आज की महफिल हम बचपन की महफिल की याद दिलायेगी।' बहादुरशाह ने फरमाया।

—'कमाल कर दिया आलमपनाह ने! बाल्य बन्धुओ की बैठरी म बचपन प्रत्यक्ष हो उठता है। बचपन ही जीवन का बहुमूल्य आभूषण है।' जहादाद खा ने कहा।

इमानउल्ला यह सुनकर भी जब चुपचाप खडा रहा तब बहादुरशाह ने कहा—'तबलची इधर ले आओ तबला! आज मेरे ताल पर इमानउल्ला का नाच रग लायेगा।'

बहादुरशाह की उगलिया तबले की छाती पर नाच उठी और साथ ही महफिल भी झूम उठी। वाह! वाह! की आवाजें चारो ओर से आने लगी।

बहादुशाह ने तबले पर थाप देते हुए कहा—'इमानउल्ला तुम तलवार के धनी हो और मैं महफिल का सम्राट् । भले ही हाथो की नसो म बुढाप का खून है पर जवानी का ताव अभी मद्धिम नही पडा। इस तबले की गमक देखो और अपनी तान छेडो। तब देखो महफिल पर कैसा यौवन छाता है। छेडो इमान उल्ला किसी रागिनी की धुन।'

इमानउल्ला का कंठ फूट ही पडा—'गूजरी गागर भरन चली ... '

इमानउल्ला के पैर धरती पर कूद पडे। नृत्य म उसका साथ एक नर्तकी ने भी दिया। महफिल म जवानी और बुढापे का सम्मिलन था। सभी प्रसन्न थे। बचपन की स्मृतिया नये सिरे से ताजा हो उठी।

थका-मादा इमानउल्ला आधी रात को डेरे पर लौटा। सारी छावनी गहरी नींद मे थी। इमानउल्ला के कुछ साथी अवश्य जाग रहे थे।

—'तैयार हो जाओ बहादुरो! मशालें ले लो हाथो मे और टूट पडो सोये हुए सिक्खो पर! जो मिले उसे तलवार के घाट उतारो। लौटते समय तबुओ को जला देना। मशालें तब तक मत जलाना जब तक सिक्ख घेरे म न आ जाए।' इमानउल्ला अपने साथियो से कह रहा था।'

—इससे अच्छी राय और क्या हो सकती है। हमारा धावा ऐसे ही सफल हो सकता है। यदि जीत गये तो कटक दूर। यदि ठन गई तो बाकी सिपाही मशालो की रोशनी मे हल्ला कर दें कि सिक्खो को मुगल समझ कर मराठे टूट पडे हैं। मुगलो ने बीच मे पडकर सिक्खो की सहायता की।' एक साथी ने कहा।

सेना धावे के लिए चल पडी।

सिक्ख भी जागरूक थे। रकाबें उतावली थी जवानो के पैरो की प्रतीक्षा म। धावे के प्रत्युत्तर के लिए खालसे तैयार बैठे थे। कुछ खालसे कोने म छिप गये और इस प्रतीक्षा मे रहे कि मुगल इधर खेम मे प्रविष्ट हो और उधर खेमे के रस्से काट दिये जायें और तब उन्हे रौंद डाला जाये। दूसरी ओर नेजे लिये हुए घोडो पर सवार इस ताक मे थे कि खेमे से निकल भागने वालो को नरक म भेज दिया जाये।

—'यहा पाच सिक्ख ही अंगीठे साहब की सुरक्षा के लिए रहें और अन्य सब सिक्ख पौ फटने से पहले ही नादेड की सीमा से बाहर हो जायें।' राजगुरु के ये शब्द थे।

मुगलो की पहली टोली जब खेमे मे प्रविष्ट हुई तब तम्बू की रस्सिया काट दी गईं। और सिक्खो ने तब उन्हे खूब रौंदा। अन्य सिक्खो ने मशालें जगाने से पहले ही मशालचियो को मौत के घाट उतार दिया। राजगुरु और उसके कुछ

साथी इमानउल्ला पर टूट पडे । वह अपने बहादुरो की बहादुरी की शेखी हाक रहा था । दो नेजदारो ने आगे पीछे से एक साथ इमानउल्ला को ऐसा बींध दिया जैसे किसी ने सीखो म भूनन के लिए मास बीधा हो । उसके सेवकों ने तलवारें निकाली और मशालें जलाई । कुछ सिक्खा ने अपनी जानें गवाई पर उन्होने एक भी आक्रमणकारी को जीता न छोड़ा ।

मशाला की लौ म इमानउल्ला तडप रहा है ।



१४

□□□

क्रान्ति का सूत्रपात

छनन् छम् छम् छनन् छम् ।

घुंघरू छनके । धरती के वक्ष पर गोरी की एड़ियां ऊंची उठ कर पड़ने लगी । पतली कमर बल खाने लगी । नर्तकी पीछे की ओर झुकी । यौवन उभर आया । लहंगे के छोर ने जोबन के उभार के साथ रगड़ खाकर फिर एड़ी चूम ली । इतने में दूसरी नर्तकी की पायल भी मतवाली हो उठी । तमाशबीन पंजों के बल उचक उचक कर नृत्य देख रहे थे । दिल वालों ने दिल थाम लिए । शाही फौजों का जलूस जा रहा था । जिसके आगे शहनाई की मीठी धुन के साथ नृत्य कला में प्रवीण नर्तकियां अपने रूप की छटा से, जोबन के उभार से, नजरों के तिरछे बाणों से दर्शकों को घायल करती हुई चली जा रही थी । पालकी चार कहारों के कंधे पर थी उसके चारों ओर चार दासियां चल रही थी । पालकी के दोनों ओर घुड़सवार सैनिक चल रहे थे । उसमें बैठा हुआ आमिल चिन्तित जान पड़ता था । इतना ढोल ढमाका होने पर भी उसके मुख पर उदासी छाई हुई थी ।

—'आज पालकी के साथ घुड़सवारों का होना अवश्य कोई गुल खिलाएगा ।' एक सिक्ख कह रहा था ।

—'ये क्या गुल खिलाएंगे । इनके चेहरों पर तो हवाइयां उड़ रही हैं ।' गंगा बिशन पण्डित ने उत्तर दिया ।

—'पत्रा तो देखो पण्डित जी क्या होने वाला है ? फोकट में माल खाना सीखे हो । कोई काम की बात बताया करो ।' एक सिक्ख ने पण्डित जी को ताना देते हुए कहा ।

—पत्रा तो स्पष्ट कह रहा है कि मुगलों की बारहदरियों के दरवाजे बन्द हो गए हैं । मुगलों का भरम-भाव नष्ट हो चुका है । उनके दिल में दहशत है ।

तलवारों की आड़ में वे कब तक सुरक्षित रह सकेंगे।' गंगा बिशन ने कहा।

—पालकी के आने से पहले जगादिया से बसाखा सिंह आया था और कह रहा था कि तैयारियां कर लो। यात्री अमावस का स्नान करने आएंगे तो उन्हें सब बातें बताई जाएंगी। उस दिन सब लोग नगद नारायण पल्ले बांधकर साथ लेते आएं।

पालकी निकल गई।

गेरुए वस्त्रधारी घुड़सवार घोड़ियां नचाते हुए पंजाब की सीमाओं में प्रवेश करते हुए देखे गए। गांव-गांव, गली-गली, मुहल्ले-मुहल्ले में उन सन्तों के उल्लेख होने लगे। चरखा कातती हुई तरुणियों की टोलियां मुख जोड़कर उनके विषय में बातें करने लगीं। खेत, मेड़ें, चण्डूखाने, भड़भूजों की भट्ठियां पंजाब के विप्लव के केन्द्र बन गईं। साधुओं की मण्डलियां गांव-गांव, गली-गली में चक्कर काटने लगी। वे निर्भय होकर लोगों से मिलते-जुलते और बातें करते। उनकी एक-एक बात में सौ सौ पेंच होते। ग्रामवासियों पर उनका प्रभाव बढ़ने लगा। वे कभी कबीर की वाणी उचारते और कभी बाबा फरीद की। शाह हुसैन, सुलतान और बुल्ले शाह के कलाम उन्हें कण्ठस्थ थे। उनकी मीठी और रहस्य भरी बातों से हिन्दुओं, मुसलमानों तथा सिक्खों पर जादू-सा हो रहा था। मुसलमान उन्हें मुसलमान समझते और हिन्दू उन्हें हिन्दू समझते। साधु की जात पूछने की किसे क्या जरूरत थी। चार ही दिनों में आस-पास के गांवों में उन साधुओं का सिक्का बैठ गया। साधुओं की सिद्धियों तथा कहानियों की चर्चा जगह-जगह होने लगी। एक चरवाहा कह रहा था कि मैंने एक सन्त से कहा कि अगर तुम भूखे हो तो मेरी भैंस दूह कर दूध पी लो। मैंने उससे मसखरी ही की थी क्योंकि मैं उस भैंस को कुछ देर पहले ही दूह चुका था। उस साधु ने पास जाकर उस भैंस को थपकी दी और अपने कमण्डल में दूध दूहने लगा। आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि शेर के बच्चे ने दूध दूहकर कमण्डल भर लिया और मेरे देखते ही देखते गटागट चढ़ा भी गया।

दूसरे चरवाहे ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—अमुक लोहारिन का भूत निकाल दिया है। इन्हीं साधुओं की करामात से चौधरी की पतोहू भी सीधे रास्ते चलने लगी है। डण्डों की मार से वह बाप की बेटी रास नहीं आती थी। एक सन्त ने उस पर ऐसा हाथ फेरा कि वह अपने पति आजम बेग के तलवे चाटने लगी।—'पीर या वली अल्लाह वेश बदले हुए घूम रहे हैं। सिक्खों जैसे जवान है। पेड़ के तने जैसी मोटी उनकी रान है। यदि फौज में भरती हो जाए तो मार-काट करके ये दिल्ली के सूबेदार बन जाएं।' शेर खां ने कहा।

—'हां भाई शेरखान तुम्हारे मुसलमान हो जाने पर मुग़ल तुम्हारे नए ताऊ और चाचा जो बने हैं। तुम्हारी तो अब पांचों उंगलियां घी में हैं।' किसी ने शेर खां से कहा।

—'हा भाई मैं मुसलमान बनकर भी सुखी नहीं हूं। यदि आज भी तुम मुझे अपनाने को तैयार हो जाओ तो मैं कसम खाकर कहता हू कि आज ही इस मुसलमानी धर्म को छोड दू। तुम लोगो ने मुझे बिरादरी से छेक दिया है। घोसले से गिरा चिड़िया का बच्चा और चौके से उठा भाई फिर वही स्थान नही प्राप्त कर सकते। ऐसा ही है यह हिन्दू धर्म।'

पास ही से एक मण्डली इन विचित्र सिक्ख साधुओ की जा रही थी। एक सिक्ख साधु शेरखा की बात सुनकर वही रुक गया और कहने लगा—'इधर आओ मेरे मित्र मैं तुम्हें अपना सिक्ख भाई बनाता हू (दूसरे साधु से) जाओ गुरु के प्यारे! जरा ग्रन्थी को बुला लाओ। कटोरे में बताशे घोल लाओ और अमृत बनाकर इसे छकाओ।'

—'भाई शेर खा आज तुम हमारे भाई हो। हम लोग तुम्हें भाई बदला सिंह पुकारेंगे।' ग्रन्थी जी आ गए। उन्होंने पहले जल के छीटे शेर खा पर दिए और तब उसे अमृत पिलाया।

जामिन खा अपने साथियो से कह रहा था—'गेरुआ वस्त्रधारी सन्तो ने कल रात डाकुओ की पसलियां पेट मे घुसेड़ दी। सौदागर सामान लेकर दिल्ली जाते समय गाव के बाहर रुके हुए थे। पहले भी इन डाकुओ ने गाव के बाहर ठहरे हुए सौदागरो के काफिलो को तथा गाव म घुसकर बनियो को लूटा है। इनके आगे सिर तक उठाने का किसी को साहस नही होता था। किन्तु कल रात सन्तो ने उन्हें घर दबाया। बीस-बीस बार उनसे नाक रगडवाई और तोबा करवाई। सन्तो ने उनसे अस्त्र-शस्त्र भी छीन लिए। गाव का चौधरी बहुत खुश हुआ। दूसरे दिन वही डाकू उन सन्तो के चरणो मे बैठे हुए देखे गए। किसी ने आज तक उन सन्तो का डेरा नही देखा। सोते हुए सन्त किसी की नजर म आज तक नही आए। कोई यह नही जानता कि ये सन्त कौन हैं, कहा से आए हैं और कौन इनकी पीठ पर है। मुगलो से तो इनकी दात काटी रोटी है और हिन्दू इनकी थालिया परसते हैं और सिक्खो के लगर मे ये प्रसाद बाटने वाले हैं। सिक्खो की शक्ति दिनो-दिन बढ रही है। दबी भूभल मे से चिनगारिया निकल रही चाहे जो हो ये सन्त बहुत ही भले हैं।'

—'यहा सत्तर पर्दों की भी परवाह नही की जाती। बेगमे बुरको मे सन्तो से टोने तथा तावीज लेने के लिए घने जगलो म निःसकोच जाती हैं अट्टालिकाओ म ये बिना रोक-टोक चले जाते हैं। गेरुए वस्त्रो में ही बरकत है मुल्लो को तो रोटी मिलना भी मुश्किल हो गया है। कान मे मन्त्र भी ये फूंकते हैं परन्तु परीक्षा करने के उपरान्त।' सुलतान कह रहा था।

—'भूतो और छडे-छाटो का कोई ठिकाना नही होता। कब्रो मे अगार सुलगते सुने तो गए हैं परन्तु देखे नही। प्रेतो का नाम तो सब की जबान पर है

पर किसी ने आखो से देखा हो, सो बात नहीं। उनके घोडो के सुर तो दिखाई पडते हैं पर सवारो की देह नही। कई मन-चलो ने पीछा किया पर सन्ध्या होने के बाद उनका कुछ पता नहीं लगा। सुना है कि दक्षिण से जो गुरु आया है उसके वश मे वीर हैं और वे वीर वैरियों को वश में कर लेते हैं। तलवारें और तीर उन्हे भेद नही सकते क्योकि इनकी देह दिखाई ही नहीं पडती। मुझे तो ये सब उन्ही के चेले-चाटे प्रतीत होते हैं।' चौधरी ने पुत्र का ऐसा अनुमान था।

गाव से कुछ दूर मुखिया चौधरी का छप्पर था। रात के समय वहाँ सन्त जुटते थे और अपने भावी कार्यों की रूप-रेखा बनाते थे। एक कोने म ताक पर रखा हुआ कडवे तेल का दीपक टिमटिमा रहा था। एक सिक्ख थोडी दूरी पर रुडा-सा पगड बान्धे हुए पहरा दे रहा था।

'कौन।' पद-चाप सुनकर पहरा देन वाले सन्त ने पूछा।

उत्तर मे आने वाले ने कुछ सांकेतिक शब्द कहे।

—'सत्य वचन! जय अकाल पुरुष!' इतना कहकर पहरे वाला एक ओर हट गया। आगन्तुक ने आगे बढ कर दरवाजा खट खटाया।

—'कौन!' अन्दर से आवाज आई।

—'ज्वाला!'

—'कितनी शिखाए!' अन्दर से आवाज आई।

—'सवा लाख!' आगन्तुक बोला।

दरवाजा कुछ खुला। एक छाया अन्दर प्रविष्ट हुई और टिमटिमाते दीपक के पास आ खडी हुई। वह सिर से पगड उतारते हुए कहने लगी—'पहले मेरी बात जरा सुनिए!'

आगन्तुक को पहचानते हुए एक सन्त ने कहा—'कौन सन्तनी जी!'

किन्तु सन्तनी जी (इरावती) बिना प्रश्न का उत्तर दिए कह रही थी।

—'आज्ञा-पत्र लाई हू। पहले वाला आज्ञा-पत्र यथा-स्थान पहुचा दिया होगा। दिन चढने से पहले ये पत्र माझे के सरदारो के पास पहुच जाने चाहिए जिससे वे लोग अपनी-अपनी तैयारिया कर लें। कल अमावस्या है। कल हरि मन्दिर के खण्डहरो मे सतश्री अकाल के जय-घोष होंगे और जनता को वीरता की घुट्टी देकर कीरतपुर की ओर भेजा जाएगा।'

एक सन्त कह रहा था—'सन्त जीवन सिंह (रेड्डी) ने परसो कमाल कर दिखाया। कब्र छूते ही अरबी का आलिम बन गया। कुरान की आयतें उसके मुह से स्वभावतः निकल रही थी। मुसलमानो को उपदेश देते हुए उसने कहा—'मोमिनो! किसी को सताना इस्लाम धर्म मे पाप है। पडोसी को प्रसन्न और सन्तुष्ट रखना ही महा पुण्य है। खुदा के बन्दो को अपना भाई समझो। बहू-बेटिया सब की समान होती हैं। हलाल की कमाई करो। पडोसी मुसलमान न

होकर यदि हिन्दू भी हो तो उसे भी भाई समझो। मासूमो पर छुरी न चलाओ। गुनाहो से डरो। मुगल सम्राटो की दीवारो की नींव हिल चुकी है। कमजोरों पर भरोसा न करो। नमाज पढो और दूसरे को भी ऐसा करने को कहो।'

—'बडो-बडो आलिमो जैसी बातें थी जीवन सिंह की। उसने तो बहुरूपियो को भी मात कर दिया था। उस पर राजगुरु की गहरी छाप है। सुना है कि कुछ दिन वह सन्तनी जी की सगति मे भी रह चुका है।'

—'क्यो सन्तनी जी ठीक है न ?'

सन्तनी जी ने मुस्कराते हुए कहा—'यह दक्षिण नही पजाब है। यहा चारो ओर जाल बिछे हुए हैं। शिकारी ताक म हैं। उससे बात करने को जबान तरस रही है किन्तु जबान पर ताला लगाना पडा है। चुप्पी म विजय रहती है। मौन विजय का चिह्न है। जीवन सिंह पर हम गर्व है। सिक्ख भी जीवन सिंह पर गर्व करेंगे। लोहगढ पर यही ध्वजा फहराएगी।' सन्तनी के विशाल नेत्र दीपक की लौ मे चमक रहे थे।

—'जाओ-जाओ, घर-घर सन्तो या फकीरो का रूप धारण करके या गडरिये बनकर जाओ और अपने साथ गुड की भेलिया लेते जाओ। भेलिया घर-घर तुम्हे पहुचानी होगी। भेली ग्रहण करने वाले को उसका कर्तव्य भी समझाना होगा। ये भेलिया चिनगारियो का काम करेंगी। मुगल सल्तनत रूपी खलियानो मे इन्हें बिछा दो। वायु के प्रबल झोके इन्हे प्रज्वलित करेंगे और इनकी ज्वाला जलाकर राख कर देगी और उनके जल जाने पर हमारी विजय ही विजय है। 'पालकिया उठाओ और कहार बन जाओ। पजाब भर मे फैल जाओ और उसे एक सूत्र म बान्ध लो।'

बाहर शब्द हुआ। तलवारें निकल आईं।

कौन ! चौधरी का बेटा ! पकड लो और इसकी मुश्कें बान्ध दो और फैंक दो इसे पुआल के ढेर पर और दिये की लौ से उसमे आग लगा दो !' जीवन सिंह ने कहा।

आग की लपटो के शोर मे किसी ने उसकी चीख न सुनी। गाव वाले रात भर आग बुझाते रहे।

चौधरी के पुत्र की खोज-खबर दूसरे दिन भी किसी को न लगी। मुगल इस बात का अनुमान न कर सके कि आग किसने लगाई।

सन्त पजाबियो म क्रान्ति की भावना उत्पन्न करने मे सफल हुए। यह चिनगारी भूमे मे दबी हुई आग की तरह सुलगने लगी। एक दिन ऐसा आया कि इस चिनगारी ने ज्वाला का रूप धारण कर लिया।

—'सरहिन्द मे सतगुरु के निर्दोष सुपुत्रो को नींव मे चुना गया था। मासूमो की आहो को दीवारो मे कैद किया गया था। इन ऊचे मीनारो मे उनकी

मा की उसासें, हिचकियां और क्रन्दन आज भी गूंज रहे हैं। घर-घर में सिक्ख घसीट कर लाए गए तथा वध किए गए। मांगलिक मेहदी धारण करने वाली युवतियां लहू से रंगी गईं। अधखिली कलियों को खिलने से पहले ही तोड़-मरोड़ दिया गया। स्त्रीत्व को भरी सभाओं में लूटा गया। नरक के इन कुत्तों को कोल्हू में पीस दो, बकरे की तरह आग पर उल्टा टांग दो और भून डालो। व्यभिचारियों के पांवों के नीचे अंगारे बिछा दो। यही उचित है।'

—'सत्गुरु द्वारा भेजा गया एक सेनानायक दक्षिण से आया है। वह पंजाब की सीमा में प्रविष्ट हो चुका है। इस धर्म युद्ध में हिन्दू और सिक्ख दोनों का कर्त्तव्य है कि वे यथा शक्ति आत्म त्याग करें। छोड़ो भाइयो गृहस्थी के धन्धे। फसलों को रहने दो खेतों में! कपास चुनने की जरूरत नहीं! ऊख के खुरपियाने की आवश्यकता नहीं। लगान लौटकर एक साथ ही चुकाए जाएंगे। जब ऊखल में सिर दे दिया तब मूसल की चोट से घबराना कैसा। जिस घर में चार आदमी हों उनमें से दो घर की रखवाली करें और दो जत्थे के साथ-साथ कीरतपुर पहुंच जाएं। सरहिन्द जीतो और दौलत लूटो। सरहिन्द में कई खजाने पड़े हैं। राह खर्च पल्ले बान्धो और जत्थे में आ मिलो। तलवारों को सान दिखाना न भूलना। भालों पर विष का पानी भी चढ़ा लेना। पंजाब जीतो और आनन्द लूटो।'

जीवन सिंह के ये शब्द गांव भर में इस प्रकार फैल गए जैसे नीले आकाश में लाल अन्धड़!

—'या तो सन्त पकड़े जाएंगे या सरहिन्द जीत लेंगे।' जस्सासिंह ने अपने साथी से कहा।

—'जिनका घर हम लूटेंगे अथवा जिनकी पगड़ियां हम उछालेंगे वे क्या हमारा मुंह ताकेंगे। तिस पर हुकूमत के अहलकार। सुना है सड़कों पर चौकियां बैठ गई हैं और आने-जाने वालों की तलाशी ली जाने लगी है। सरायों में भी पूछताछ होने लगी है। गलियों, चौराहों में बत्तियां अब नहीं जलाई जा रही हैं। जिन पर सन्देह होता है उन्हें गिरफ्तार किया जाता है। कीरतपुर पहुंचना कौन-सा सरल काम है।'

—'घबराओ मत! मैं इनके सभी बन्धन ढीले करता हूं। तुम लोग तैयार रहो। बाकी सब मेरे जिम्मे।' सन्तजी जी ने धीरे से कहा।

अमावस्या के दिन कीरतपुर पहुंचने के लिए यात्रियों की टोलियां निकल पड़ीं। गांव-गांव घर-घर से सूरमाओं को ललकारा गया। उनसे कहा गया कि बलिदान का समय आ गया है, देश को तुम्हारी आवश्यकता है मन्दिर की परिक्रमा में।

सन्तों की बातों से सूरमाओं का मोह घर से छूट गया। उन्होंने तलवारें लटका लीं, भाले सम्भाल लिए, ढालें बान्ध लीं और जूझने के लिए वे उतावले,

हो उठे । सिर पर कफन बान्धकर सूरमे यात्रियो की टोली मे जा मिले । अकाल पुरुष की सेवा मे मस्तक नवाने वालो को कमान और तीर प्रसाद रूप मे मिले ।

टोलिया बढ रही थी । मार्ग मे एक स्थान पर घोडो का बाजार लगा हुआ था । कुछ सिक्खो ने वहा पहुचकर दो बिगडैल साडो को शराब पिलाकर या भडकाकर इस मेले म छोड दिया और यह हल्ला मचाया कि डाकू टूट पडे । 'पकडो-पकडो' का हा-हाकार होने लगा । सौदागरो मे भगदड मच गई । बुल से आए हुए मुसलमान सौदागर अपनी-अपनी जान बचाने के उद्देश्य से ग खडे हुए । तब क्या था सिक्खो ने जो हाथ लगा उसे ग्रहण किया और मे उछल-उछल कर घोडो की पीठ पर सवार हुए और समाने की ओर चल ।

यह करामात बूढे सन्त की थी । इसमे सन्तनी का भी कुछ हाथ था ।

कई सिक्खो ने बनियो के वेश मे आटा-दाल, चावल आदि खच्चरो पर लाद लिया और व्यापारियो के वेश मे कुछ सिक्ख गधो पर तेल, गुड घी आदि लाद कर समाने की ओर चल पडे ।

मार्ग मे गुप्तचरो से इन्हे सूचना मिली कि कुछ मुगल सैनिक आस-पास के गाव वालो को लूट कर समाने की ओर जा रहे हैं । रात के अन्धेरे मे सिक्ख उन पर टूट पडे । दो पठान तो भाग निकले, शेष वही खेत रहे । सिक्खो के हाथ बीसियो खच्चरो तथा गधो पर लदा हुआ अन्न-वस्त्र तथा अन्य बहुमूल्य पदार्थ लगे ।

विविध वेश धारण किए हुए सूरमे मुगलो की आखो मे धूल झोकते हुए कीरतपुर पहुचे । सतगुरु की ओर से जिन-जिन चौधरियो, ठिकानेदारो तथा सरदारो को आज्ञा-पत्र मिले थे उन्होने भी गुप्त रूप से धन तथा शस्त्र से सहायता की और कुछ अपने जत्थो के साथ वहा आ पहुचे ।

सन्तनी जी, हुसैनी तथा बेगमा की दौड-धूप से हजारो स्त्रिया भी जय माता जय माता करती हुई कीरतपुर जा पहुची ।

१५

□□□

समाने पर अधिकार

पजाब की सीमा मे बन्दे बहादुर के पाव रखते ही मुसलमान काप उठे। मुगल शासको ने इतनी रुकावटें उसके मार्ग म डाली कि उसके लिए सास लेना भी मुश्किल हो गया। जो सिक्ख बन्दे बैरागी के साथ दक्षिण से आए वे दाल म नमक के बराबर थे। फिर भी बन्दे बैरागी को अपने इन साथियो पर गर्व था क्योकि वे कई मुठभेडो म विजय पा चुके थे। पाचो प्यारो की तो बात ही और थी। वे तो अद्वितीय योद्धा थे, उनम से हर एक सैकडो शत्रुओ पर अकेले भारी पडते थे। नगी तलवारो क गीत बन्दे बैरागी ने भी सुने हुए थे पर बरा के छत्ते म यो ही हाथ डालना वह नही चाहता था। ऐसा करने से पहले वह हाथ की मशाल जला लेना चाहता था। वह यह भी सोचता कि भाडे के टट्टुओ का साथ कहा तक निभ सकता है। रक्त तो अपना ही खौलता है और लडाता है अपने देश का प्रेम और निष्ठापूर्ण भाव ही। वह समझता था कि मेरी सेना म दो तिहाई ऐसे व्यक्ति हैं जो लूट-पाट करने के उद्देश्य से तथा अन्य स्वार्थों की पूर्ति के लिए ही आ मिले हैं। ये जमकर लडने वाले नही हैं।

सन्तनी जी और भाई जीवन सिंह के प्रयत्नो से बैरागी के कृत्यो और सिद्धियो की चर्चा घर-घर मे होने लगी। बन्दे के कृत्यो मे स्त्रिया विशेष रूप से प्रभावित हुई। बन्दे के तेज ने उनकी भावनाओ का और भी बल दिया। अपनी कामनाओ की सिद्धि के लिए हिन्दू और मुसलमान औरतें बन्दे के चरणो म आने लगी। उन्हे विश्वास था कि बन्दा सिद्ध पुरुष है, वली अल्लाह है, सन्त है और जिसे चाहे दूध-पूत दे सकता है।

इन स्त्रियो से बन्दे को चौधरियो, गाव के अधिकारियो तथा अन्य बडे-बडे लोगों के आपसी वैर-विरोधो का पता भी चलने लगा।

कीरतपुर के पास सैंकड़ो जत्थे छिपे रूप में पहुंच चुके थे। मन्दिरों में सन्तों के रूप में और मस्जिदों में मुसलमान फकीरों के रूप में सिक्ख सूरमाओं के कुछ जत्थे टिके हुए थे। बाजीगरों के रूप में कई जत्थे अपने खेल दिखला रहे थे। बाजीगर यह कहते मुनादी पढ़ते थे कि हम लोग समाने जाएंगे वहां जलालुद्दीन के लड़के की शादी है। जलालुद्दीन के घर कई दिनों से ढोल-ढमाका हो रहा है और वहां सरहिन्द के जागीरदार तथा अन्य जागीरदार पहुंचे हैं। जगह-जगह के भाड-भगतिये भी वहां पहुंचे हुए हैं।

बन्दा बैरागी, सन्तनी जी और पांचों प्यारे मिलकर समाने पर हमला करने की योजना बना रहे थे। बन्दा कह रहा था कि हमारे लिए इन ६०० सिपाहियों के साथ समाने पर आक्रमण करना कहां तक उचित है। हमें पहले अपनी शक्ति परख लेनी चाहिए।

उत्तर दयासिंह ने दिया—'हमारे इन सिपाहियों में लुटेरे ही अधिक हैं। इसलिए अच्छी तरह सोचकर और परिस्थितियों को देखकर कदम उठाना चाहिए।'

बीच में ही सन्तनी जी बोल उठी—'अच्छा यह हो कि पहले कुछ बाजीगरों और भाडों को जलालुद्दीन के यहां भेजा जाए जो उसका गुण कीर्तन करें और हमें आवश्यक सूचनाएं दें। इस बीच में हम यहां तैयार होते हैं। इस प्रकार हमारे कुछ सैनिक वेश बदले हुए समाने पहुंच जाएंगे। सरहिन्द और दिल्ली से जो मेहमान जलालुद्दीन के यहां समाने आ रहे हैं उनके साथ भी कुछ सिक्ख सेवा शुश्रूषा के बहाने लग जाएं और समाने पहुंच जाएं। इस प्रकार हम समाने में अपने आदमी पहुंचाने में सफल हो जाएंगे और मैं स्वयं नर्तकियों के साथ समाने पहुंचकर जलालुद्दीन के घर में प्रविष्ट हो जाऊंगी। आप लोग मेरे संकेत की प्रतीक्षा में रहें। जब हमारी मशालें धुआं छोड़ने लगें तब आप सब लोग महल पर टूट पड़ें हम अन्दर से हमला कर देंगे।'

—'बहुत अच्छा! ऐसा ही हो! हमें मन्जूर है।' अन्य सलाहकारों के ये शब्द थे।

सन्तनी जी अपने कुछ जत्थों को लेकर कीरतपुर की ओर चल दी। बन्दे बहादुर ने अन्य जत्थों को एकत्र किया। बन्दे के मन में विचार हुआ कि क्यों न इन वीरों की एक बार परीक्षा ली जाए और सोनीपत पर हमला करके देख लिया जाए कि ये जत्थे कितने पानी में हैं। नगरी के रक्षक मुगल सैनिकों पर रात के समय सिक्ख सैनिक टूट पड़े और दिन चढ़ने से पहले उनका सफाया कर डाला। लूट-मार में इनके हाथ काफी सामान लगा। लूट-पाट करने के बाद उत्साहपूर्वक बन्दे के सैनिक कैथल की ओर अग्रसर हुए। गुप्तचरों ने मार्ग में सूचना दी कि सरकारी खजाना दिल्ली की ओर जा रहा है जिसके साथ लगभग १०० सवार होंगे। भूखे शेर की तरह सिक्ख सरकारी सैनिकों पर टूट पड़े।

मामूली सी मुठभेड के बाद सारा खजाना बन्दे के हाथ लग गया। खजाने को देखकर ललचाई नज़रो से सिक्ख सैनिक बन्दे का मुह देखने लगे। बन्दे ने पूरा खजाना सभी सिक्खो मे बाट दिया। खजाने के साथ आने वाले सैनिको मे से कुछ भागकर कैथल पहुचे और वहा के अधिकारी को इस घटना की सूचना दी। अधिकारी हिन्दू था। ४०० सवार लेकर बन्दे से टक्कर लेने के लिए आ पहुचा। बन्दा भी चतुर था। उसने कुछ सिक्खो को आगे भेज दिया और स्वय तथा अन्य साथियो के साथ जगलो मे जा छिपा। अधिकारी ने उन थोडे-से सिक्खो को पकड लिया और मुश्कें बान्ध कर घोडो पर लाद लिया। आगे बढने पर ये लोग उन झाडियो के पास पहुचे जहा बन्दे के अन्य साथी छिपे हुए थे। चारो ओर से सिक्खो ने उन्हे सहसा घेर लिया। अधिकारी को सिक्खो ने रस्सो से बान्ध लिया। सिक्खो के हाथ ४०० घोडे और अस्त्र-शस्त्र लगे। अधिकारी और उनके सैनिको को इस शर्त पर छोडा गया कि आगे से बन्दे को कर दिया करेंगे।

सिक्ख समाने की ओर बढने लगे। जलालुद्दीन के घर मुजरे हो रहे थे। एक तरफ भाड नकलें उतार रहे थे और दूसरी तरफ बाजीगर अपने करतब दिखा रहे थे। महल के अन्दर नर्तकिया नाच रही थी। पूरा गाव नशे मे चूर था। १६ नवम्बर सन् १७०९ ई० को बन्दा मजिलें पार करता हुआ समाने जा पहुचा। उसके साथ बहुत-से सिक्ख भी थे। ये लोग एक स्थान पर जा छिपे और महल की ओर एक-टक इस इन्तजार मे देखने लगे कि मशालो का धुआ कब निकलता है।

बन्दे ने कहा—'इस समय हमारे साथ कुल मिलाकर लगभग तीन हजार वीर होंगे हम गिनती मे काफी हैं। अपनी नजर समाने वाले महल की बुर्जियो पर लगाओ। गुरु तेग बहादुर का कातिल जलालुद्दीन इसी मे रहता है। अली हुसैन भी यही का निवासी है जिसने धोखा देकर गुरु गोविन्द सिंह जी से आनन्दपुर छुडवाया था। हासिल बेग और वासिल बेग के उकसाने से जिस वजीर खा ने साहबजादो को दीवारो में चिनवाया था वे भी यही के रहने वाले हैं। बहादुरो! इन सब की बोटिया नोचनी है। ढोल बजाकर आस-पास के गावो मे खबर कर दो कि जिसे समाने की लूट मे शामिल होना है वह यहा आ जाए। जो जितना माल लूटेगा वह उसी को दिया जाएगा। पर बिना आदेश के तुम लोगो को एक पग भी आगे नही बढना होगा। सब तैयार हो जाओ और अपनी जान हथेली पर ले लो। कल सवेरे या तो तुम लोग समाने के शासक बन जाओगे या स्वर्ग के दरवाजे तुम लोगो के लिए खुल जाएगे।'

बन्दे की बातो से सैनिक उत्तेजित हो उठे। उनकी तलवारें मशालो की मद्धम रोशनी मे चमकने लगी।

महल मे सन्तनी जी को मुगलो ने पहचान लिया और उसे कोठरी मे बन्द कर दिया गया। इस काण्ड का महफिल पर कुछ असर न हुआ और वह शराब

मे झूमती ही रही। सन्तनी जी के सकेत पर भाडो ने मशालें जला दी और उनका धुआ आकाश मे फैलने लगा।

धुआ देखते ही बन्दे के सैनिक महल पर टूट पडे। तलवारो से तलवारें टकराने लगी। ढालो ने छातिया तानी। बरछे अग काटने लगे। दोनो पक्षो म खूब जमकर युद्ध हुआ।

दिन चढने से पहले ही वीर सिक्खो ने अच्छी तरह तलवारो की प्यास बुझाई और लुटेरो ने भी खूब हाथ रगे।

बदे और उनके साथियो ने समाने पर अधिकार कर लिया, पर सन्तनी जी का उन्हे कुछ पता न चला। बेगमा और हुसैना ने कोठरी दिखलाई जिसमे सतनी को बद किया गया था। विजय पर सभी सिक्ख प्रसन्न थे। पर बूढे सन्त को सतनी और जीवनसिंह की चिन्ता लगी हुई थी। जीवनसिंह भी सतनी के सम्बन्ध मे सोच रहा था।

फतेह सिंह का इस विजय मे मुख्य हाथ था इसलिए बदे बहादुर ने फतेह सिंह को ही समाने का सूबेदार नियुक्त किया। सिक्खो ने अकाल पुरख और फतेह सिंह की जय जयकार की।

इतने मे फतेह सिंह जलालुद्दीन के लडके को बाधे हुए वहा आ पहुचा।

बदे ने मजाक करते हुए बूढे सन्त से कहा—'दूल्हे को बिना बारात के ही लाये हो, [illegible] [illegible]थी कहा है।'

[illegible]ने उत्तर दिया—'भाग गये हैं बुरका पहनकर।'

—'गुलाम मुस्तफा सरकार !'

—'क्या तुम भी इनके साथी हो ।'

—'नहीं सरकार ! मैं सरहिन्द का निवासी नहीं हूं । कसूर से आया हूं । मेरे सरदारों ने मुझे भेजा है और आपसे निवेदन करने को कहा है कि हम लोग मिलकर बदरुद्दीन के विरुद्ध लड़ें । गुलाम मुस्तफा ने कहा ।

—'हां ! हां !! इमानउल्ला का पुत्र बदरुद्दीन दक्षिण का बहुत बदमाश है ।' बाजसिंह ने कहा ।

—'गांव के आस-पास की कोई युवती ऐसी नहीं छूटी जिसके सफेद आंचल पर उसने धब्बा न लगाया हो । हिन्दू दुल्हिनों को तो वह डोलियों में से निकाल ले जाता है ।' माली सिंह ने कहा ।

—'नहीं सरकार । उसके लिए हिन्दू और मुसलमान में कोई फरक नहीं है । उसे तो लड़कियां चाहिए । चाहे वे किसी धर्म की हों । आप क्या सोचते हैं कि मुसलमान औरतों को वह बहनें बना कर रखता है । कभी नहीं ! वह कामुक है ! अन्धा है ! वह बड़े और छोटे की इज्जत नहीं समझता । वह पशु है सरकार ।' गुलाम मुस्तफा ने साहसपूर्वक कहा ।

'अच्छा ठहरो ! पहले इन भेड़ियों से निपट लिया जाये । फिर तुम्हारी बात सुनेंगे ।'

तब बंदे ने सिक्ख सिपाहियों से कहा—'एक भेड़िये का हाथ तोड़ दो और दूसरे की आंख फोड़ दो । यही दण्ड इनके लिए पर्याप्त है । (भेड़ियों से) मेरा एक सन्देश वजीर खां को जरूर देना । उससे कहना तैयार रहे सिक्ख आने वाले हैं । कब्रें खुदवा रखे । सिक्खों को कब्रें खोदने का समय नहीं मिलेगा । हम उसका शरीर आदरपूर्वक ताबूत में रखना चाहते हैं । (म्यान से खंजर निकाल कर) यह वजीर खां को नजर करना और कहना कि आत्महत्या करने की आवश्यकता पड़े तो इससे काम लेना । (सिक्खों से) आंखों से दूर करो इन बदमाशों को ।'

तब बंदे ने गुलाम मुस्तफा से पूछा—'कितने जवान हैं तुम्हारे हाकिमों के पास ।'

—'सौ डेढ़ सौ तो होंगे ही ।'

—'निष्ठावान हैं या नहीं ।'

—'जी हां दिन में पांच बार नमाज पढ़ने वाले हैं ।'

—'क्या नाम है तुम्हारे सरदारों का ?'

—'दीनदार खां और नसीरुद्दीन ।

—'अच्छा ले आओ । हम भी यह जुआ खेल लेते हैं किन्तु इतना समझ लें कि दगे की सजा मौत है । हम शत्रु को क्षमा प्रदान कर सकते हैं । किन्तु दगाबाज को क्षमा नहीं कर सकते ।' बंदे के मुख पर तेज चमक रहा था ।

—'मेरे हाकिम वफादार रहेंगे। वे पठान बच्चे हैं। पठान मित्र-द्रोही नही होते।' गुलाम मुस्तफा ने कहा।

गुलाम मुस्तफा चला गया। सिक्खो मे काना-फूसी होने लगी। शत्रु को घर मे बैठाना भूल है।

—'बंदे ने जो कुछ किया वह ठीक है। संसार मे केवल दगाबाज ही नही बसते, मनुष्य भी बसते हैं। यह युद्ध अत्याचार के विरुद्ध लडा जा रहा है। यह सत्य है कि हमारे शत्रु मुगल ही हैं। पर इन मुगलों मे भी अनेक पुण्य बुद्धि और भले भी अवश्य हैं। बुद्धूशाह ने भगानी के युद्ध म बैरियो का मुकाबला किया था। मियां मीर साहब भी मुसलमान थे। उन्होंने भी लाहौर की ईंट से ईंट बजा देने का संकल्प किया था। थोड़े से विलासी मुगलो ने ही अपनी जाति को बदनाम किया है। बद से बदनाम ही बुरा समझा जाता है। यह शासक और प्रजा का युद्ध है। गरीबों और अमीरो की कुश्ती है। इन पर व्यर्थ ही मजहबी रंगत चढ़ाई जा रही है। वास्तव मे शासन पलटना ही हमारा उद्देश्य है। अविश्वासी मत बनो। जो हमसे मिलना चाहता है उसका स्वागत करो इस धर्म युद्ध मे।' बूढ़े संत ने सिक्ख सरदारो से नीति की बात कही।

इतने मे गुलाम मुस्तफा अपने सरदारो के साथ वहां आ पहुंचा। बाजसिंह ने पूछा—'क्या आप ही हैं कपूर के हाकिम।'

—'हां हम ही हैं दीनदार खां और नसीरुद्दीन। हम लोग अत्याचारियो के समर्थक नही भले ही वे हमारे भाई क्यो न हो। हमारे लिए हर स्त्री की इज्जत बराबर है फिर चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान। सतीत्व मे ही उसका सौभाग्य है। शैतान उसका सतीत्व लूटना चाहता है।' दीनदार खां ने कहा।

—'अच्छी बात है तुम लोग अपने सैनिको को तैयार करो। रसद यहां से तुम्हे मिलती रहेगी।' बंदे ने कहा।

सांय का समय था। मुल्ला अजां दे रहे थे। ग्रंथी अरदासा (प्रार्थना) कर रहा था।

—'कर्म सिंह कहां से आ रहे हो।' बूढ़े संत ने पूछा।

'पुराने साथी मिले हैं दीनदार खां और नसीरुद्दीन। दोनों मेरे लंगोटिये यार हैं। जरा सी मुंह मे लगाई है कमबख्त होश ही नही लौट रहा! विजय के उपलक्ष मे हम लोग मौज मना रहे थे। दो दिन मौज-मेला कर लेने दीजिए फिर तो चूल्हे मे सिर देना ही है।' कर्मसिंह की जीभ लड़खड़ा और पांव डगमगा रहे थे।

—'वदमुद्दीन ने मेरे कलेजे पर घूंसा मारा है। मेरी इज्जत पर प्रहार किया है। लाड़-प्यार से पाली हुई बिटिया मेरी पूंजी थी। उसका सुध-पता भी इन लोगों ने लगने नही दिया। कोई कहता है कि बांदी के रूप म उसके हरम मे रह रही है। हमारे लिए तो हरम के दरवाजे बन्द हैं। कोई बात नहीं,

यदि एक दिन हमने उनकी बोटियां न नोच डालीं तो पठानी का दूध नहीं पिया।' अपनी झोंपड़ी में पड़ा हुआ दीनदार खां नशे में बड़बड़ा रहा था।

—'उसने हमारे पिता की पगड़ी उछाली है। कौन ऐसा भाई है जो अपनी इज्जत लुटती हुई देख सकता है। उसने मेरी मां की अंतड़ियों को नोचा है। यदि कहीं दांव में आ गया तो छठी का दूध याद करा दूंगा। वहां से मिलकर उस कांटे को निकालना जरूरी है। वजीर खां ने भी हमसे क्या कम किया है। मेरे चाचा को उसने खुले बाजार में कत्ल करवाया। मेरे चचेरे भाई की आंखें निकलवा दीं। उस जालिम से सरहिन्द की लड़ाई हम लोग मिलकर लड़ेंगे। बन्दा गुरु गोविन्द सिंह का चेला है। हमें उससे बुद्धूशाह का-सा प्यार मिलेगा नबी खां और गनी खां के जैसा सत्कार मिलेगा। हम अत्याचार के विरुद्ध तलवार उठानी है। और पीड़ितों के लिए जोतना है।' नसीरुद्दीन की आवाज में जोश था।

बूढ़े मस्त ने ये बातें छिपकर सुनीं।

दूसरे दिन बूढ़े सन्त ने सब सरदारों को बुलाया और उन्हें अपना निर्णय सुनाते हुए कहा—'लोहगढ़ के आक्रमण के समय लुटेरों की टोलियां सबसे आगे रहेंगी और उनके पीछे मुगलों और पठानों के दस्ते होंगे। और उनके पीछे शहीद होने वाले योद्धा चलें। सबसे पीछे हमारे सुशिक्षित तथा विश्वसनीय सैनिक होने चाहिए। दोनों ओर घुड़-सवारों की पंक्तियां हों, बीच में एक गली रहे जिससे सबार सब की देख-भाल कर सकें और समय पर सबसे आगे भी जा पहुंचें। आक्रमण पहले लुटेरे ही करेंगे। जब शत्रु की सेना थक जाये तब हमारी सुशिक्षित तथा ताजा दम सेना आगे बढ़कर शत्रु पर प्रहार करे। तोपें किसी ऊंचे स्थान पर गाड़ दी जायें। मैं, बन्दा, जोधन सिंह और पांचों प्यारे तोपों के पास रहेंगे और बाकी सरदार सेना को आगे बढ़ावेंगे। इस बात का ध्यान रखना कि यदि लुटेरे विचलित हों और लड़ाई से विमुख होकर पीछे मुड़ने लगें तो पहले उन्हीं पर हमारी सुशिक्षित सेनाएं आक्रमण करें जिसका फल यह होगा कि वे बाध्य होकर तब दुश्मन से लड़ना ही उचित समझेंगे। यदि पठान भागने को तैयार दिखाई पड़ें तो उन्हें भी कलम कर दो। ऐसा होने पर टुकड़ियां एक-दूसरे की निगरानी करेंगी। लोहगढ़ तक तुम्हें हिरन की चाल बढ़ते चले चलना होगा। वहीं पहुंचकर सांस लेना होगा। सांय की लालिमा में हमारी ध्वजा फहरावेगी और मुगलों के झंडे चिथड़े-चिथड़े कर डाले जायेंगे। कल सवेरे ही कूच का बिगुल बजेगा।'

रात विचारों में बीत गई। अतिथि मुगलों से राय लेने के बारे में किसी को न सूझी। दीनदार खां और नसीरुद्दीन का जब नशा टूटा तो वे शराब के लिए राजगुरु के पास पहुंचे। तब राजगुरु ने उन्हें देखते हुए कहा—'अरे! अभी तक आपने जरह-बख्तर नहीं पहने। हम तो कल भोर में ही कूच करना है और

कपूरी की ईंट से ईंट बजा देनी होगी। यदि कदमुद्दीन का नाको दम न कर दिया तो हमे सिक्ख कौन कहेगा। सूबेदार जी उठिये और अपने सैनिकों को तैयार होने की आज्ञा दीजिए।'

—'आप कूच का बिगुल फूंकिये। हमे तैयार ही समझिए।' नसीरुद्दीन ने उत्तर दिया।

लुटेरो की टोलियों की कोई विशेष पहचान नहीं थी। पर बूढ़े सन्त ने उनकी पहचान खूब निकाली। घाट-घाट का पानी पिये था वह सन्त। उसने पलक मारते ही सब अपने-अपने स्थान पर आ पहुंचे। लुटेरो के सरदारों को छांट छांट कर निकाला और उन सब की उसने पीठ ठोकी। बिगुल बजते ही शहीदो का काफिला चल पड़ा।

रात के समय ये लोग कपूरी पहुंचे। कपूरी नींद में बेसुध थी। इसी समय एक सवार घोड़े की पीठ पर एक व्यक्ति को बांधे हुए इतनी तेजी से ड्योढ़ी में से निकल भागा कि सिक्ख चकित हो गये। उसका पीछा सिक्खो ने किया पर वह हाथ न लगा।

वह शह-सवार निकल भागा। ड्योढ़ी का एक दरवाजा तो पहले ही खुला था दूसरा मौला ने खोल दिया। सिक्ख अलसाए हुए मुगलों के गले घोटने लगे। कदमुद्दीन शराब में नशे में चूर पड़ा था। नशे की मौज में ही सिक्खों ने उसे पकड़ लिया और एक बोरे में बन्द कर दिया। पठानों ने अपने बैर निकाले। पुरानी दुश्मनी उमड़ उठी। दिल के गुबार निकाले पठान सूरमाओं ने। दिन चढ़ने से पहले ही कपूरी का किला सिक्खों के हाथ में था। दिन चढ़ते ही बंदा और उसके साथी कपूरी में विजेता के रूप में प्रविष्ट हुए।

कदमुद्दीन ने कई भयंकर कुत्ते और रीछ पाल रखे थे। सिक्ख सैनिकों ने कुत्तों और रीछों को आपस में लड़ाकर मजा लिया। जब कुत्ते और रीछ क्रोध में भर उठे तो सिक्खों ने रीछों को तो हटा दिया और कुत्तों के आगे वह बोरा फेंक दिया जिसमें कदमुद्दीन बन्द था। जोश में भरे हुए कुत्तों ने बोरे में रीछ बन्द समझ कर उसे नोचना-काटना शुरू किया। कदमुद्दीन चिल्ला रहा था, हिंसक कुत्ते उसे नोच रहे थे और सिक्ख आनन्द लूट रहे थे।

इतने में बूढ़ा सन्त भी वहां आ पहुंचा। उसका ध्यान उस ओर चला गया। उसने कुत्तों से कदमुद्दीन की रक्षा की और उसे बंदे बहादुर के सामने ले जाने के लिए सिक्खों को आदेश दिया। कदमुद्दीन का शरीर जगह-जगह से नोचा गया था और रक्त की अनेक धाराएं उसके शरीर में से निकल रही थीं।

कदमुद्दीन गिड़गिड़ाता हुआ बंदे के चरणों पर जा गिरा। बंदा जरा भी विचलित न हुआ। कदमुद्दीन को दीनदार के हवाले करते हुए बंदा कहने लगा—'इसे ले जाओ सूबेदार जी और जैसा उचित समझो वैसा इसके साथ बरताव

करो। आपका तो हमसे भाई-चारा है। हमें बीच में पड़ने से क्या मतलब। हां! सतनी जी के सम्बन्ध में भी क्या कुछ सुराग मिला या नहीं।'

—'कौन? दरावती?' बदरुद्दीन का मुंह खुला।

—'हां! हां! दरावती।' जीवन सिंह ने कहा।

—'उसे लेकर तो करामत अभी कुछ ही देर पहले सरहिन्द भाग गया है।' बदरुद्दीन ने कहा!

नसीरुद्दीन तब बदरुद्दीन को अपने साथ ले गया और उसे उल्टा टंगवाकर कुत्तों से नुचवा दिया।

बदरुद्दीन कह रहा था—'तुम्हारे जैसे मुसलमान भाई से तो हिन्दू काफिर ही अच्छे हैं। वे काफिर हैं। लेकिन हैं, फिर भी इन्सान। तुम भाई हो पर हो जलील कुत्तों से भी बदतर।'

उस समय एक सिक्ख तलवार की धार को छूते हुए कह रहा था—'कपूरी अब हमारे कदम चूमेगी।'



१७

□□□

बांस की पोर

माडोरा के उस्मान खा को कौन नही जानता। समूचे परगने मे उसकी धाक थी। हिन्दुओ की तो वहा कुछ नही चलती थी पर मुसलमान भी अपनी पगडी का तुर्रा निकालकर वहा नही चल पाता था। उसने बुद्धूशाह का दिन-दहाडे कत्ल करवा दिया था कि उसने गुरु गोविन्द सिंह जी का साथ भगानी के युद्ध मे दिया था। बुद्धूशाह की ऊची हवेलिया थी। जब समय आया तो किसी ने उसका साथ तक न दिया।

बूढे सन्त की युक्ति सफल हुई। सेना उसी तरह बढी जैसे वह चाहता था। लूट-मार के समय भगदड कुछ अवश्य हुई। परन्तु बाद मे सब ठीक था। बहुत तेज था उस बूढे सन्त के चेहरे पर।

तोपो के मुंह घूमे और घोडो के कान फडके। सवारो ने लगामे थामी। ओज चमक पडा सूरमाओ के चेहरो पर। घोडो के खुरो मे से चिनगारिया निकली। बरछे नाच उठे। तलवारो ने अपने शरीर ऐंठे। घोडे हिनहिना उठे। तीर तरकशो मे करवटें ले रहे थे। पैदल दस्ते दमामो की लय पर आगे बढे।

जब उस्मान खा ने बन्दे का लश्कर दूर से ही देखा तो वह भयभीत हो उठा। आशा की डोरी टूट गई। क्षण भर मे बाजार सूने हो गए। भूत नाच रहे थे चौराहो पर। उस्मान खा नगर निवासियो के साथ बुद्धूशाह की हवेली मे जा छिपा। उसे आशा थी कि सिक्ख बुद्धूशाह की हवेली को नष्ट नही करेंगे। परन्तु गेहू के साथ घुन भी पिस गया। भेदिये सिक्ख सीधे बुद्धूशाह की हवेली मे पहुचे। न जाने लुटेरो ने आज इतना धैर्य कैसे रखा। किसी लुटेरे की आख तक मैली न हुई। बुद्धूशाह की हवेली का फाटक तोडकर सिक्ख अन्दर पहुच गए। हवेली कुछ ही क्षणो मे रक्तमय हो गई। ईंटे खूनी हो गईं। तडपती हुई लाशो मे किसी को उस्मान खा की लाश तक न मिली।

सिक्खों की सेना पहुचने से पहले ही शेखीबाज साढौरा छोडकर मुफलिसगढ जा पहुचे । मुफलिसगढ पहुचन के लिए सिक्खो को कुछ विशेष कष्ट नहीं करना पडा । अभी फौज ने पैर उठाए थे । दमामे बजने शुरू ही हुए थे । तलवारो ने अभी घूंघट भी नही उतारे थे । तोपो ने मुह तक न खोले थे कि मुफलिसगढ के सरदार और प्रतिष्ठित व्यक्ति नजराने लेकर रास्ते मे मिले और उन्होंने अपनी पराजय स्वीकार कर ली । बन्दे के मार्ग मे उन्होंने अपनी पलकें बिछा दी । आज बन्दा खिलखिला कर हस पडा । बन्दा मुफलिसगढ का विजेता था ।

दरबार लगा हुआ था । विजय-पर्व मनाया जा रहा था । मुह मागे पुरस्कार दिए जा रहे थे । देगो के मुह खोल दिए गए । खालसा खुशी मे फूला नहीं समाता था । किले पर सिक्खो का झण्डा लहरा रहा था । बन्दे ने सबको सम्बोधित करते हुए कहा—'आज से मुफलिसगढ का नाम लोहगढ होगा । निबोध सिंह जी इस किले की जल्दी मुरम्मत कर दी जाए । सिक्ख राज्य की नीव सरहिन्द जीतने के उपरान्त लोहगढ म ही रखी जाएगी । (नसीरुद्दीन और दीनदार खा से) आप भी कुछ माग सकते हैं । जागीर चाहे तो वह भी मिल सकती है । आज खालसा प्रसन्न है ।'

दोनों पठान वीर चुप रहे ।

तब बन्दे ने कहा—'अच्छा ! अभी आपको साढौरा के निकटवर्ती बीस गाव जागीर के रूप मे दिए जाते हैं । सरहिन्द जीतने क बाद जागीरदारी का पट्टा लिख दिया जाएगा ।'

इतने मे आवाज आई—'महाराज ! एक दिन भी भले आदमियो की तरह ये सैनिक नही रह सके । एक सिक्ख ऊचे स्वर म दुहाई दे रहा था ।

—'चुप ।' बूढे सन्त ने उस सिक्ख के मुह पर हाथ रखते हुए कहा ।

सिक्ख गुम-सुम हो गया । उल्टे पैरो वह लौट पडा । बूढा सन्त और बन्दा उसे खेमे म ले गए । उसकी बातें ध्यान से उन दोनो ने सुनी । दूसरे दिन बन्दे ने दरबार बुलाया । योद्धा अपने-अपने स्थान पर बैठ गए । बूढा सन्त बन्दे के बगल मे बैठा था । बन्दा कह रहा था—सिक्ख राज्य की नीव रखने मे हम लोग सफल हुए । देश-द्रोहियो को दण्ड देना भी हमारा धर्म हो गया है । आप कहे कि देशद्रोही को कौन-सा दण्ड दिया जाए ।'

—'मौत ।' दीनदार खा ने कहा।

दरबार मे भी यही शब्द गूज उठा ।

—'क्यो चौधरी जी विद्रोही को मौत का दण्ड देना तो अनुचित न होगा ।'

—'नही महाराज इसम अनुचित क्या है ।' मुफलिसगढ के चौधरी के गले मे से बडी मुश्किल से उक्त शब्द निकले ।

—'यदि मैं कुछ रियायत करू तो !' बन्दे के शब्दों में नम्रता थी।

—'तब हाकिम की समझदारी पर सन्देह किया जाएगा।' चौधरी ने कहा।

इतने में बूढ़े सन्त ने कहा—'देशद्रोही की सजा मौत ही होनी चाहिए। चाहे वह फिर कोई ही क्यों न हो !'

बन्दा कहने लगा—'यह अवसर ऐसा नहीं है कि हम अपना रहस्य खोलें और एक-दूसरे को दण्ड दें। बांस की पोर के भीतर झांकना उचित प्रतीत नहीं होता उसके स्वर पर ही ध्यान देना समझदारी है। अच्छा यही हो कि रहस्य रहस्य ही रहे और मैं चुप हो जाऊं।'

दरबार एक साथ पुकार उठा—'नहीं ! नहीं ! आपको नाम बतलाना ही होगा।'

'मैं विवश हूं।' बन्दे ने कहा।

तब बूढ़े सन्त ने कहा—'मैं तुम्हें आज्ञा देता हूं कि तुम तुरन्त विद्रोही की ओर संकेत करो।'

बन्दे ने एक थैली निकाली और उसे दिखाते हुए कहने लगा—'यह थैली है। मैं नहीं बताना चाहता कि इसमें क्या है। इसमें मोहरें भी हो सकती हैं, हुकुमनामे भी हो सकते हैं, सूबेदारी के पट्टे भी हो सकते हैं और किसी भेदिये द्वारा खाई हुई चुगली का कच्चा चिट्ठा भी हो सकता है।'

— मनुष्य न जाने क्या सोचकर पाप में प्रवृत्त होता है जबकि वह अच्छी तरह जानता है कि जीवन चार दिनों और चार रातों का ही है। ये रातें तो किसी प्रकार पेड़ के नीचे बैठ कर और परमेश्वर का नाम लेकर काटी जा सकती हैं। फिर किस लिए और क्या झूठे महलों के स्वप्न देखे जाएं और गड्ढे में गिरा जाए।'

तब राजगुरु बीच में ही बोल पड़ा—'ज्ञान ध्यान की बातें करने का यह समय नहीं है। बैरागी वीर ! यह समय तो नीति की चक्की की आवाज सुनने का है। दरबार की विकलता मत बढ़ाओ। सीधी तरह पूरी बात कहो। किसी की चिन्ता मत करो। बाज की डोरियों को काबू में रखो और चिड़ियों को छोड़ दो नीले आकाश में।' बूढ़े सन्त के मस्तक पर राजगुरु वाला तेज चमक रहा था।

—'ये हुकुमनामे नहीं हैं और न जागीरदारी पट्टे ही हैं। यह चुगलखोर की करतूत है। सरहिन्द के सूबेदार से शिकायत की गई है बन्दे के विषय-भोगी और विलासता-प्रिय होने की। और चुगलखोर मुझे वैसे ही अपने हाथों में लेना चाहता है जैसे चारा डालकर बहेलिया पक्षी फंसाना चाहता है।' ये बन्दे के शब्द थे।

नई दोस्ती का रंग उड़ गया। प्रीति के कच्चे धागे टूट गए, चेहरे पीले पड़ गए गुरुम के पत्ते की तरह।

वन्दे के संकेत से एक ऊटनी वाला उसके समीप आया। वन्दे ने उसकी पीठ ठोकते हुए कहा—'तेरी ऊटनी ने तो हमारे लिए सरहिन्द के दरवाजे खोल दिए हैं। जी चाहता है कि तेरी ऊटनी के खुर सोने में मढवा दू ।'

तब ऊटनी वाले ने कहा—'बास की पोर म रखकर हरकारा यह फरमान लिए जा रहा था। मेरी नई ऊटनी उस समय बहकी हुई थी। लाख प्रयत्न करने पर भी वह काबू में नहीं आ रही थी। राह चलते हरकारे के हाथ मे बास की पोर छीनकर मैं ऊटनी को मारने-पीटने लगा। ऐसा करने मे बास की पोर टूट गई और उसमें से गेद की तरह यह कागज उछलकर दूर जा गिरा।'

वन्दे ने कहा—'इस ऊटनी सवार को एक जागीर बख्शी जाती है। (सैनिकों से) ले जाओ चुगलखोरो को वुद्धूशाह की हवेली म। खाली भेडें आगे लगाओ और भेडियो को भडका दो।' वन्दे ने कहा।

उन्ही मेजवानो ने एडिया रगडी जो कल वन्दे को रास्ते मे नजराने देने और उसका स्वागत करने गए थे। ये सब मुफलिसगढ के बनिये और शासक मुगल थे। वन्दे न इनकी एक न सुनी। सिक्ख उन्हे पकड कर वुद्धूशाह की हवेली में ले गए।

एक पठान कह रहा था—वुद्धूशाह की हवेली क्या बूचडखाने से कम है ?

—'जबान खींच लो इस शैतान की।' फाहन सिंह ने कहा।

जबान बन्द थी और लाश तडप रही थी वुद्धूशाह की हवेली के सामने।



१८

□□□

सरहिन्द विजय

इरावती को करामत अली ने सब्ज बाग तो बहुत दिखाए, परन्तु वह उसकी चालों में न फंसी। इरावती सोने के कमरे में बन्द रहने से किसी निर्धन के प्रेम-सूत्र में बन्धना कहीं अधिक अच्छा समझती थी। उसे अपनी शक्ति और धैर्य पर अडिग विश्वास था। करामत अली भले ही बड़ा खिलाड़ी क्यों न हो पर वह भी चतुर और सयानी थी और घाट-घाट का पानी पिए हुए थी। उसने करामत अली की चालों को भांप लिया। वह हथकंडों को तोल और नाप सकती थी। अपनी सुकुमारता, आहों, हाय तथा हिचकियों से उसने करामत अली का मन पिघला ही दिया। करामत अली के रहम ने उसे अकेली कोठरी बख्श दी। अब बन्द थी इरा काली कोठरी में। करामत अली दिन भर में कई बार उसकी कोठरी के दरवाजे तक आता, परन्तु इरा उसकी दाल न गलने देती।

नई कली की भान्ति जब इरा के अधरों पर मुस्कान खिलती तो पहरेदार लोटन कबूतर बन जाते। इरा वैसे तो बन्द कोठरी में ही थी, पर उसे वहां सब तरह के सुभीते प्राप्त थे। करामत अली ने उसे फंसाने के उद्देश्य से ही उस काली कोठरी को भी हरम का रूप दे रखा था। फिर भी करामत अली का दिन भर चक्कर काटना पहरेदारों को खलता था।

वजीर खां ने जब यह सुना कि सिक्खों की सेना सरहिन्द पहुंचने वाली है, तो उसके पांव से जमीन खिसक गई। जब उसे यह मालूम हुआ कि मासे और कीरतपुर से ताजादम जत्थे सरहिन्द की ओर बढ़ रहे हैं तो वह सोचने लगा कि सरहिन्द का अब बाबा आदम ही रखवाला है। अल्ला ही बचा सकता है इन शैतानों से।

सरहिन्द की दीवारें डोलने लगीं। उनकी नींवों में पाप सिर उठाने

लगा। निर्दोष आत्माएं बदले की भावना से जागृत हो उठीं। जिन माताओं के पुत्र, जिन बूढ़ियों के पोते वज़ीर खां ने उनसे छीन लिए थे, वे सब उसकी आंखों के आगे नाचने लगीं। उनके चीत्कार को सुनकर वज़ीर खां सोचता उठा। वह सोचता था कि अगर मुझ पर ऐसी बीतती तो क्या मैं सहन कर पाता? मेरे जीवन की यह सबसे बड़ी भूल थी। सूरमा शेरों का शिकार करते हैं, दूध पीते बच्चों का नहीं। मैंने तो दूध पीते बच्चों के ही दांत तोड़े हैं। मां के ममता भरे हृदय को ठुकराया है। या अल्लाह! ऐ रहीम! काली कमली वाले मौला! मेरी रक्षा करो।

इधर सिख अरदासा सोध* रहे थे और सरहिन्द पर हमला करने की तैयारी कर रहे थे। घड़ी-घड़ी की खबर वज़ीर खां को मिलती रहती। वज़ीर खां भी पुराना घराट था। उसने बुलावे भेज-भेज कर फौजें इकट्ठी कर ली। पहलवानों और गतका खेलने वालों को भी उसने अपनी फौज में भर्ती कर लिया। ये लोग सरहिन्द में कुश्तियां लड़ते, गतका खेलते, मुर्गे भूनते, शराब पीते और मस्त रहते। लगता था जैसे वज़ीर खां ने कटवाने के लिए बलि के बकरे इकट्ठे कर लिए हों। घुंघरुओं की झंकार में तथा शराब के नशे में हुसैनी और बेगमा उछलती तो ये सब लोट-पोट होने लगते। हुसैनी और बेगमा राजगुरु की नीति की गोटियां थी।

एक बैठक में वज़ीर खां ने कहा—मालेरकोटले वालों को तो बुलाओ। गप्पें हांक-हांककर उन्होंने आसमान सिर पर उठा रखा है। सूने अखाड़ों में बैठकें निकाल-निकाल कर उन्होंने रियासत भर के मुर्गे खा डाले हैं। (मालेरकोटले वालों के आने पर) 'आओ सूरमाओ! उतरो मैदान में तुम्हारे दाव-पेच भी देखें। बहुत दिनों से शोर सुन रहे हैं। ऐसा कौन वीर है तुम में से जो सिक्खों को कीरतपुर से एक पग भी आगे न बढ़ने दे। कौन है अपनी तलवार की धार पर पैर रखने को तैयार? कौन मौत से निकाह करना चाहता है?' यह कहकर वज़ीर खां चुप हो गया।

—'सरहिन्द की ओर मुंह करना जने-खने का काम नहीं। मुंह तोड़ देंगे घूंसों से। शिवाजी की नाक में नकेल हमारे ही पूर्वजों ने डाली थी। इन सिक्खों का अभी पठानों से सामना नहीं हुआ है। छुरभैयों से ही अभी तक इनका वास्ता रहा है। इसीलिए ये गाल बजा रहे हैं। आए तो सही सरहिन्द में, समझ लेंगे। हम भी मालेरकोटले वाले हैं।' अफजल खां ने नशे में झूमते हुए कहा।

—'हम भी मालेरकोटले के हैं। नाक में दम कर देंगे सिक्खों के।' शेर खां ने कहा।

---

*अरदासा सोधना=सिक्खों का प्रार्थना करना।

—'अगर कहीं कीरतपुर वाले सिक्ख और बन्दे की फौजें यहां एक साथ आ पहुंचीं, तो सरहिन्द की तूती बोल जाएगी। फिर वे नहीं रहने देंगे इन चहकती बुलबुलों को। अगर ये दोनों फौजें अलग-अलग रहीं तो मैं सिक्खों के तो जरूर छक्के छुड़ा दूंगा और उधर बन्दे की फौजों से शेर खां तुम जूझो। पिंजरे में बन्द कर लेना बन्दे को।' वजीर खां ने अपनी राय दी।

पांच तोपें और पांच हजारी फौज की खिलत का फरमान शेर खां की झोली में, वजीर खां ने डाला और उसे विदा दी। 'खुदा हाफिज' वजीर खां ने कहा। उत्तर में शेर खां ने भी खुदा हाफिज कहा।

अफजल खां ने मगनी के सैनिकों को एक सीध में खड़ा कर दिया। धौंसे और नगारे बजने पर मालेरकोटले वालों ने कूच का बिगुल बजा दिया।

उधर लोहगढ़ में सिक्ख तैयारियां कर रहे थे। कुछ सिक्ख सैनिक खिसकना चाहते थे, पर लूट-मार का लोभ वे संवरण न कर सके, फलतः रुक रहे। सिक्खों ने युद्ध सामग्री अच्छी जुटा ली थी। बन्दा कोई ऐसा सेनानायक नियुक्त करना चाहता था, जो रण-नीति में निपुण हो।

राजगुरु ने कहा—'सिंह वीरो, अब परीक्षा का समय आ गया है। धक्केशाही से नहीं, बल्कि नीति और शक्ति से ही यह युद्ध जीता जा सकेगा। बाजसिंह तुम्हें दाहिनी ओर की फौजों की देख-भाल और उनका संचालन करना होगा। घुड़सवारों को फतेहसिंह अपने कब्जे में रखें। आली सिंह और माली सिंह तोपों के मुंह खोलें और अपनी बहादुरी के जौहर दिखलाएं। भालेबरदारों को काहन सिंह अपनी देख-रेख में रखें। पैदल दस्तों की देखभाल विनोद सिंह करें। यह लड़ाई स्वयं मैं लड़ूंगा। बन्दा बहादुर अपने कुछ साथियों के साथ एक टीले पर रहकर दूर से यह लड़ाई देखें। समय पर उन्हें संकेत किया जाएगा। तब वे ताजादम फौजें लेकर शत्रु पर टूट पड़ें। गांव-गांव में डुगडुगी पिटवा दो और घोषणा कर दो कि जिसे साहबजादों के खून का बदला लेना हो, वे हमारा साथ दें और जिन्हें लूट-मार करनी हो वे भी हमारे साथ हो लें।'

—'आपकी मदद के लिए नए जत्थे कीरतपुर पहुंच चुके हैं। वजीर खां घिर जाएगा। बन्दूकें बहुत हैं। तोपें भी २५ हैं। बारूद कूट-कूट कर भरेंगे और निशाने लगाएंगे। दिल्ली और लाहौर में हाहाकार मच जाएगा।' सुच्चानन्द के भतीजे ने कहा।

—'हां ठीक है। आप और आप की फौजें मेरे साथ रहेंगी।' राजगुरु ने कहा।

—'सत्य वचन!' सुच्चानन्द के भतीजे ने कहा।

काहन सिंह आदि सरदारों की ओर संकेत करते हुए राजगुरु ने कहा—'तुम लोग भालेबरदारों को साथ लेकर हमला करना।'

कीरतपुर के सिक्खो को मालेरकोटले वालो ने रोक दिया। उन्हें एक कदम भी आगे न बढ़ने दिया।

दिन चढ़ते ही राजगुरु की सेनाए सरहिन्द पहुच गईं। पाच सौ घुडसवारो को राजगुरु ने आगे बढने का आदेश दिया। इस मुठभेड मे राजगुरु को अपनी हार की सम्भावना थी। उधर वजीर खा ने इन घुडसवारो को बढते देखकर तोपचियो को गोले छोडने का हुक्म दिया। तोपें आग उगलने लगी। कुछ ही क्षणो म चारो ओर धुए के बादल छा गए। सिक्ख सिपाहियो के दिल काप उठे। निकट स्थित ऊचे टीले पर खडे बन्दे बहादुर ने जब सिक्ख सेना को विचलित होते देखा तो उसने और उसके साथियो ने तोपचियो पर तीरो की वर्षा की। तोपची कटे वृक्ष की भान्ति गिरने लगे और बचे खुचे तोपो को छोडकर जान बचाने के लिए भाग खडे हुए। सिक्ख सैनिको ने आगे बढकर वजीर खा की तोपो पर अधिकार कर लिया और उनके मुह सरहिन्द की ओर घुमा दिए। वे आगे बढते गए। उनकी प्रगति को रोकने के लिए वजीर खा के सैनिक रण-क्षेत्र मे कूद पडे। दोनो ओर तलवारें चलने लगी। शवो पर शव गिरने लगे, रक्त स भूमि लाल हो गई। चारो ओर घमासान युद्ध होने लगा। वीरो की जोश भरी हुकारो और घायलो के चीत्कारो से आकाश गूजने लगा। जीवन सिंह क्रुद्ध सिंह की भान्ति चारो ओर गरज रहा था। वह और उसके सैनिक शत्रुओं को मारते मारते आगे बढ रहे थे। वह जिस ओर निकल जाता, शवो के ढेर लग जाते।

बन्दा बहादुर टीले पर खडे-खडे बहादुरो का रण-कौशल देख रहा था। थोडी दूरी पर राजगुरु अपनी सेना को रोके खडे थे। बाहन सिंह, बाज सिंह आदि सरदार जो लडते-भिडते इधर-उधर हो तथा हट-बढ गए थे, फिर अपनी-अपनी टोलियो मे आकर खडे हो गए। लुटेरो और स्वय सेवको की टोलिया जीवन सिंह के नेतृत्व मे आग बढती चली जा रही थी। सुच्चानन्द का भतीजा एक ओर अपनी टोली के साथ खडा था। उसने एक भेदभरी दृष्टि से अपने चारो ओर देखा और तब कुछ सोचकर तथा राजगुरु की दृष्टि से बचकर आगे बढती हुई सेना म अपनी टोली सहित जा मिला। वास्तव मे वह मन का खोटा था और वजीर खा का साथी था। समय को पहचान कर उसने उच्च स्वर से कहा—'भागो ! भागो ! जान बचाओ दुश्मन दूसरी ओर से सिर पर आ पहुचा है। भागो भागो जान बचाओ।' इतना कहकर वह स्वयं पीछे की ओर भागने लगा और उसके साथी सैनिक उसके पीछे-पीछे 'भागो-भागो' चिल्लाते हुए भागने लगे। उसकी यह चाल काम कर गई। लुटेरे और स्वय-सेवक सैनिक उसे भागते देखकर स्वय भी भाग खडे हुए। परिणामस्वरूप वजीर खा के सैनिक आगे बढने लगे और भागते हुए सिक्खो को घेरने लगे। इस प्रकार पाच सौ सिक्ख जवान मुगलो के घेरे म फस गए। सिक्खो के हाथो के तोते उड गए। अपनी सेना की

दयनीय स्थिति देखकर राजगुरु विचलित होने लगे। फिर भी उस महापुरुष ने अपने को सम्भाला। वे स्वयं नीले रंग की ध्वजा लेकर फहराने लगे। यह तोपचियों के लिए संकेत था। संकेत मिलते ही तोपचियों ने अन्धाधुन्ध गोले बरसाने शुरू कर दिए। इन गोलों से मुगल सैनिक तो चनों की तरह भुन गए, परन्तु साथ में पांच सौ सिक्ख सैनिक भी गेहूं के साथ घुन की तरह पिस गए।

—'अब कोई युक्ति सोचनी चाहिए जिससे सरहिन्द का किला जीता जा सके।' आली सिंह ने बात को आगे बढ़ाते हुए कहा।

—'किले के अन्दर युक्ति से पहले घुसा जाए और तब अन्दर षड्यन्त्र रचकर वजीर खां को हराया जा सकता है।' माली सिंह ने अपनी राय दी।

—'सरहिन्द के किले में कौन घुसकर षड्यन्त्र रचने का साहस कर सकता है?' निवोध सिंह बोला।

—'मुझे आज्ञा दी जाए, मैं जाने को प्रस्तुत हूं।' जहादाद खां ने अपने को पेश करते हुए कहा।

—'तुम्हारा समय निकल चुका है जहादाद खां। अब तुम्हारे बस की बात नहीं रही।' काहन सिंह ने उत्तर में कहा।

—'पहले तो गढ़ों में पहुंचने की ही बात कठिन है। षड्यन्त्र रचने की बात तो बाद की है।' बन्दे बहादुर ने कहा।

सभी मौन होकर एक-दूसरे का मुंह देख रहे थे।

—'मैं जाता हूं।' बन्दे ने कहा।

—'सरहिन्द न मालूम जीता भी जाएगा या नहीं, पर हम अपने सेनानायक को खोने के लिए तैयार नहीं हैं।' राजगुरु ने अपना मत प्रकट करते हुए कहा और कुछ क्षण वे चुप रहे और फिर कहने लगे—'मैं और दया सिंह दोनों मिलकर इस काम को पूरा करेंगे। मेरे ही कारण पांच सौ सिक्ख शहीद हुए हैं और मैं ही सरहिन्द विजय भी करूंगा। मैं सरहिन्द को विजित करूंगा या मेरा शव आप लोगों को सरहिन्द की खाई में पड़ा मिलेगा। मेरी अनुपस्थिति में मेरा काम बन्दा बहादुर सम्भालेगा। आप लोग अपनी शक्ति बटोरने का यत्न करें और मैं वजीर खां की सेना को फोड़ने का प्रयत्न करता हूं।'

धरती लाशों से पट गई। हजारों मुगलों के शवों में सिक्ख स्वयं-सेवकों के शव भी थे। इस धर्मयुद्ध में वीरगति को प्राप्त करने वाले सिक्ख सात-आठ सौ से अधिक ही थे। बचे हुए मुगल सैनिक सरहिन्द के गढ़ (किले) की ओर भागने लगे। सिक्खों के हाथ काफी सामान और कई तोपें लगीं। सूर्य अस्ताचल की ओर बढ़ रहा था। चारों ओर सियार, कुत्ते और गीदड़ आदि मांसभक्षी पशु शवों को नोचने खसोटने में लगे थे।

पहली मुठभेड़ में सिक्ख विजयी तो हुए, किन्तु विजय का उल्लास उनमें दिखाई नहीं दे रहा था। वे सब सन्त जीवन सिंह के लिए चिन्तित थे जिसे मुगल

सैनिक अपने साथ गढ म ले गए थे। राजगुरु को अपने शिष्य पर भरोसा था कि रहस्य प्रकट करने की अपेक्षा वह अपनी जान पर खेल जाना कहीं अधिक उत्तम समझेगा। राजगुरु यह भी सोचते कि कहीं जीवन सिंह का दाव लग गया तो वह वजीर खां को चारों खाने चित्त भी गिरा सकता है।

राजगुरु यदि तोपचियों को समय पर गोला बारी करने की आज्ञा न देते तो सम्भव था कि जीती हुई बाजी हाथ से निकल जाती। मुगलों के घेरे म आए हुए पाच सौ सिक्ख सैनिक तो मरते ही, साथ ही साथ मुगलों के पैर भी दृढ़ता पूर्वक जम जाते। राजगुरु ने इन पाच सौ सिक्खों की चिन्ता छोड़कर गोले बरसाने की आज्ञा दी थी। फलस्वरूप पाच सौ सिक्ख सैनिक तो हताहत हुए ही साथ म मुगलों के कई हजार सैनिकों का सफाया भी हो गया। सिक्ख सरदार इस बात का रहस्य नहीं समझ पाए।

'—राजगुरु की भूल से पाच सौ सिक्ख मुफ्त म मारे गए।' रतन सिंह ने कहा।

—'बात तो तुम ठीक कहते हो भाई।' दयासिंह ने उत्तर दिया।

तब बन्द ने कहा—'इसम निराश होने की कौन सी बात है। यह रणक्षेत्र है। जीवन मरण के खेल म ऐसा होता ही है। रणवीर इन बातों से विचलित नहीं होते।'

—'रणक्षेत्र म शत्रु का निशाना बनकर मरना और बात है, परन्तु ये तो राजगुरु की भूल से ही मौत के शिकार बने हैं।' रणसिंह ने जोश म आकर कहा।

—'यदि राजगुरु ने यह समझदारी का काम न किया होता तो सम्भव था कि हम लोग भी प्राण गवा बैठते। राजगुरु ने जो कुछ किया है, समयोचित किया है। पाच सौ सिक्खों के मूल्य पर सरहिन्द पर विजय पाना कुछ महगा नहीं।' बन्दे बहादुर ने सिक्ख सरदारों को समझाते हुए प्रभावशाली शब्दों म कहा।

—'रणक्षेत्र म कूदने से पहले जो युक्तियां सोची और समझी जाती हैं, वे समय पर काम नहीं आतीं। समय को देखकर जैसा उचित हो वैसा ही करना बुद्धिमत्ता है। मेरे विचार से जो कुछ हुआ है, वह हमारे लिए शोक का विषय नहीं है। जो सिक्ख मुगलों के घेरे म फस चुके थे, वे तो पहले ही मरों के समान थे। मेरी युक्ति ने मरे हुओं को मारकर शत्रु के भी दो हजार सैनिक मौत के घाट उतार दिये हैं जिससे आज के युद्ध म हम विजयी रहे हैं।' राजगुरु ने प्रखर वाणी मे कहा।

—'इसी प्रकार यदि आपने एक बार पुनः कोई ऐसी चाल चली तो सरहिन्द अपना हो जायेगा, भले ही उसके लिए हम कुछ और आहुतियां क्यों न देनी

पड़े। सरहिन्द पर विजय पा लेने का अर्थ ही है—सारे पंजाब पर विजय पा लेना।' बंदे बहादुर के शब्दों मे राजगुरु के प्रति नम्रता झलक रही थी। 'प्रयत्न करता रहूंगा। आप लोग निश्चित रहें। वीरो, सरहिंद पर हमारी विजय होगी।'

राजगुरु के मुख पर एक अलौकिक तेज विराज रहा था। बंदे ने कटार से अंगूठे को चीरकर बहते हुए रक्त से राजगुरु को तिलक लगाया। चारो ओर राजगुरु की जय-जयकार होने लगी।

× × ×

कई दिन बीत गये। एक दिन सायंकाल के समय किले का चोर दरवाजा खुला। उसमें से एक आदमी निकलकर सीधा सिक्खों के डेरे की ओर चल पड़ा। सिक्ख सैनिक इस अनजबी व्यक्ति को पकड़कर बंदे बहादुर के पास ले गये। आगंतुक के संकेत से बन्दा समझ गया कि यह राजगुरु का भेजा हुआ संदेशवाहक है। कोमल वाणी में बंदे ने उससे पूछा—'कहां के निवासी हो वीर पुरुष!'

—'सरहिन्द का रहने वाला हूं हुजूर।'

—'किस प्रयोजन से तुम्हारा यहां आना हुआ?' बंदे ने पूछा।

—'अत्याचारी के विरुद्ध आवाज उठाने के लिए।'

—'धर्म भाई की गर्दन पर छुरा चलाना तो इस्लाम तुम्हें नहीं सिखाता वीर पुरुष।'

—'मुझे निश्चय है कि यह लड़ाई सिक्खों और मुसलमानों की नहीं है, बल्कि पीड़ितों और पीड़कों की है। मुगलों के बढ़ते हुए जुल्म से हिन्दू, सिक्ख और मुसलमान समान रूप से त्रस्त हैं, वे अब बौखला उठे हैं। अब उन लोगों से जुल्म सहा नहीं जाता। इसी लिए मैं इस लड़ाई को धर्म और अधर्म की, न्याय और अन्याय की लड़ाई समझता हूं।'

—'हम तुम पर किस प्रकार विश्वास करें वीर पुरुष। तुम तो मुसलमान प्रतीत होते हो।'

—'नसीरुद्दीन और जहांदाद खां भी तो मुसलमान हैं। उनसे मेरी मित्रता है, वे मुझे भली-भांति जानते हैं कि मैं न्याय पर जान देने वाला हूं। तिस पर मैं वजीर खां से जला हुआ भी हूं। उस दोजखी कुत्ते ने मेरी बहन की लाज लूटी है। उसके बेटे ने भरे बाजार मेरी पुत्री की कलाई पकड़ी है। अभी आप लोगों ने वजीर खां का बाह्य रूप ही देखा है। आवरण हटा देने पर शरीर भी नंगा हो जाता है। समझ लीजिए कि वह मनुष्य के रूप में पशु है। मैं खुदाए पाक की कसम खाकर कहता हूं कि सबसे पहले मेरा ही हाथ उस शैतान पर उठेगा।' खलील खां इतना कहकर चुप हो गया। उसके शब्दों से उसकी सच्चाई और ईमानदारी बंदे पर प्रत्यक्ष हो गई।

तब जहांदाद खां ने बंदे से कहा—'मैं अच्छी तरह जानता हूं हुजूर खलील

खा को। यह खानापरस्त मुसलमान है। यह बात का पक्का है। इस पर पूरा भरोसा किया जाये।

तब बदे बहादर ने समस्त वीरो को सबोधित करते हुए कहा—'शूरवीरो! हम जहादाद खा की बात पर तथा खलील खा की नीयत पर विश्वास करते हैं तथा इ हे एक हजारी सना का सरदार भी नियुक्त करते हैं और आशा करते हैं कि खलील खा याय और धम के इस युद्ध मे अपनी वीरता और सत्यप्रियता का पूरा प्रमाण देंगे। इसके बाद खलील खा न बदे को झुककर सलाम किया और अपनी तलवार को हाथ म लेकर कसम खाई कि आज स यह सेवक बदे क हुकम पर रक्त बहाना अपना फज समझगा।

— हमारे किसी ऐसे व्यक्ति का तुम्हे पता है जो किले में पहुच चुका हो। बदे न पूछा।

— हा एक कबतरो वाले बाबा है। गुटरग गुटरगू करते हुए जगली कबूतर उनके मजेतो पर चलते हैं। उन्ही क हुकुम स मैं आपकी सवा म आया हू। एक अन्य युवक भी मैने आपका साथी देखा है जिसका नाम जीवन सिंह है। वह वजीर खा का बन्दी है। उस पर वजीर खा ने बहुत बड बड जुल्म ढाये हैं। पर उसने सभी कष्ट वीरतापूवक सहे हैं और जबान तक नही हिलाई है। आजकल वह ब दीगह म है। सुना था कि उसने वहा के पहरेदारो को भी वजीर खा के विरुद्ध भडका दिया है। खलील खा ने सरहिन्द के अ त पुर की बहुत भी बातें भी सिक्खो को बतलाइ।

एक सिक्ख पहरेदार ने खेमे मे प्रवेश किया—'एक कबूतर उधर उडता हुआ आ रहा था। मैन उसे तीर का निशाना बनाया। वह घायल होकर जमीन पर गिरने ही को था कि उस पर एक बाज आ झपटा और उसे पजो म दबोच कर मालौग की ओर से उडा। मैन बाज पर भी तीर छोडा जिससे वह कबूतर को लिये दिय जमीन पर आ गिरा। कबूतर के पाव म यह बधा हुआ पुर्जा मिला है।' यह कहकर उसने पुर्जा ब द क हाथ म द दिया।

राजगरु क हाथ का लिखा हुआ यह पुजा था। इसम लिखा था—हमले के लिए तैयार रहो। मगल सुरा और स दरी म मस्त हैं। सिक्खो क कुछ पीछे हट जाने का यहा यह अथ लगाया जा है कि सिक्ख डरकर भाग गय हैं। इसी खुशी म जश्न मनाये जा रह हैं। परसो रात को हमला किया जाये। गढी का पिछला चार दरवाजा आपको खुला मिलगा। यदि जीवनसिंह की चाल चल गई तो आप लोगो क पहुचन स पहले ही सरहि द पर हमारा अधिकार हो चका होगा। जब गढी म से फानूस छूटें तब समझ लना कि पिछा दरवाजा की जजीरें काट दी गई हैं। जय पजाब।

बदा बहादुर पुर्जा पढने म ही लगा हुआ था कि रणसिंह ने उनका ध्यान कुछ दूरी पर उडती हुई धूल मिटटी की ओर आकृष्ट किया।

ये लोग माझे से आने वाले सिक्ख थे। 'सत् श्रीअकाल' और 'वाह गुरु की फतेह' के जयकारे आने वाले सैनिक लगा रहे थे।

—'हम लोगो को खिजरखा और शेर मुहम्मद ने रुकने पर मजबूर कर दिया था। किन्तु हमारी एक युक्ति काम कर गई। हमने अपने लड़ाकुओं को रास्ते के दोनो ओर की झाडियो मे छिपा दिया और हमारे कुछ सैनिक आगे बढ़कर मुगलो से लोहा लेने लगे। थोडी-सी मार-काट के बाद हमारे आदमी एका-एक पीछे की ओर भाग खड़े हुए। खिजर खा ने हमारे भागते हुए आदमियो का पीछा किया। थोडी देर मे वे उन झाडियो के समीप पहुचे जिनमे पहले से हमारे लड़ाकू छिपे हुए थे। संकेत पाकर झाडियो मे छिपे हुए सैनिक बिजली की तरह बाहर निकल आये और क्षण भर मे ही उन्होने खिजरखा और उसके सैनिको को चारो ओर से घेर लिया। तलवारें चल पडी और कुछ ही समय मे बहादुर सिक्खो ने सैकडो मुगलो को मौत की गोद म सुला दिया। खिजरखा ने अपने कुछ आदमियो के साथ भाग कर जान बचाई। मैदान खाली पाकर हम लोग यहा आ पहुचे है।' माझे के एक सिक्ख सरदार ने ये बातें बदे बहादुर को बतलाई।

× × ×

सिक्खो ने चारो ओर से सरहिन्द को घेरे मे ले लिया। सेना ने मुगलो की दृष्टि से ओझल रहकर अपने मोर्चे सभाल लिये। वजीरखा की दृष्टि मे धूल झोकने के लिए कुछ सिक्ख-सेना गढी के सदर फाटक के सामने खडी कर दी गई जिसे देखकर वजीर खा ने अपनी पूरी सेना सदर फाटक पर जुटा ली। सिक्ख सैनिक मुगल सेना को अपनी ही ओर आकृष्ट रखने के लिए कभी-कभी एक-दो गोले तोप के मुख से उगल देते और बढकर पुनः अपने ठिकाने आ जाते। इसी प्रकार दो दिन कट गये। सिक्खो की बहुत थोडी-सी सेना देखकर वजीर खा गढी से बाहर निकलकर उन्हे खदेडने के लिए तैयार हो गया। वह सोच रहा था कि इन थोडे से सिक्ख सैनिको को इस प्रकार मारा जाये कि पुनः जीवन भर सरहिन्द की ओर आख उठाकर देखने का भी साहस न करें। इन्ही विचारो से अभिभूत होकर वजीर खा ने अपनी सारी शक्ति सरहिन्द की गढी के सदर दरवाजे पर ही इकट्ठी कर ली। पिछली ओर का उसे ध्यान ही नही था कि उधर से भी सिक्ख दाखिल हो सकते है।

बदे बहादुर और उनके सरदारो की आखें आसमान की ओर लगी हुई थी। रात का पहला प्रहर समाप्त हो चुका था, पर अभी तक कोई संकेत उन्हे गढी से नही मिला था। सभी सरदार चिंतित थे।

—'सरकार! मेरे विचार से या तो राजगुरु की युक्ति सफल नही हुई अथवा उनका षड्यन्त्र पकडा गया है और यह भी हो सकता है कि वजीर खा और उसके साथी इस समय सचेत हो, और बेगमा तथा हुसैनी उन्हे मदहोश न कर पाई हो।' खलील खा ने कहा।

— 'तुम्हारी अन्तिम बात जचती है खलील खां। राजगुरु कच्ची चाल नहीं चलते। समय को परखकर ही पासा फेंकते हैं। जरा इन सुरा सुन्दरी के पुजारियों को रूप सागर में डूबने तो दो फिर देखना राजगुरु के हथकंडे।' खलील खां के कंधे को थपथपाते हुए नसीरुद्दीन ने कहा।

—'राजगुरु कहीं पहचान न लिये गये हों।' बंदे बहादुर ने कहा।

—'शत्रुओं की ध्वजाएं फाड़ते समय राजगुरु को कोई पहचान ले तो बात दूसरी है, पर वैसे तो किसी माता ने ऐसा पुत्र ही नहीं जना जो उन्हें पहचान सके।' खलील खां ने अपना मत प्रकट करते हुए कहा।

रात और भी गहरी होती जा रही थी। सिक्ख सरदार संकेत की प्रतीक्षा कर रहे थे।

× × ×

करामत अली इरावती पर लट्टू हो रहा था। इरावती ने उस पर अपने यौवन और रूप का ऐसा जादू डाला कि वह उसका उपासक बन बैठा। वजीरखां जब अपनी महफिल में डूब जाता तो करामत अली चुपके से उठकर इरावती के बन्दीगृह में आ जाता। वह बन्दीगृह तो नाम मात्र का ही था, वास्तव में था वह एक प्रकार का महल ही। इरावती को वहां सभी प्रकार के सुख थे, किन्तु वह इस ताक में थी जैसे भी हो यहां से भाग निकलना चाहिए। उसने अपने रूप के जाल से बन्दीगृह के प्रहरियों को भी अपने वश में कर रखा था। वह सब से हंसकर बोलती और उनमें से प्रत्येक को यही विश्वास दिलाती कि वह उसी पर जान देती है। इसी कारण प्रहरी भी एक दूसरे के जानी दुश्मन हो चुके थे। करामत अली का प्रहरियों का इरावती के पास अधिक आना-जाना अच्छा नहीं लगता था। जिस रात बंदा बहादुर को राजगुरु की ओर से गढ़ी पर हमले का संकेत होने वाला था, उसी रात को इरावती भी कुछ करने को उतावली हो रही थी। उसने प्रहरियों से पहले ही सांठ गांठ कर रखी थी। करामत अली जब इरा के पास आया तो उसने तिरछी नजरों से आज पहली बार उसे देखा। करामत अली दिल थामकर रह गया। उसने इरावती को छूना चाहा, किन्तु वह मचल कर दूर हट गई। करामत अली बैठ गया। इरावती ने मदिरा से भरी सुराही निकाली और उसे कई प्याले अपने हाथों से पिलाये। आज इरावती के अंग-अंग में मस्ती छाई हुई थी। करामत अली बन्दीगृह की चाबी अपने ही पास रखा करता था, यह बात इरावती जानती थी। जब करामत अली मतवाला होकर इरावती का आलिंगन करने के लिए उतावला हुआ तो इरावती नखरा करती हुई इधर-उधर भागने लगी। इरावती एक बार तो उसके बाहु पाश में फंस ही गई, किन्तु तुरन्त ही उसने करामत अली को ऐसा धक्का दिया कि वह औंधे मुंह जमीन पर जा गिरा और बेहोश हो गया। इरावती बन्दीगृह से बाहर निकल आई और फुर्ती से उसका दरवाजा बन्द कर दिया तथा उसमें ताला भी लगा दिया। उसने तालियों का गुच्छा करामत अली की कमर

से निकाल लिया था और सम्भवतः वह इसी कार्य के लिए करामत अली के बाहुपाश मे बधी भी थी। एक प्रहरी दूर खड़ा यह तमाशा देख रहा था। इरावती ने उसे सकेत से अपने पास बुलाकर प्रेमभरी वाणी मे कहा—चलो यहा से हम तुम भाग चलें।

प्रहरी की वाछे खिल गई। वह आगे-आगे चलने लगा और इरावती उसके पीछे-पीछे। रास्ते मे एक अन्य प्रहरी से मुठभेड भी हुई। दूसरा प्रहरी इस मुठभेड मे खेत रहा। प्रहरी के साथ इरावती आगे बढी। चलते-चलते वह उस जगह पहुच गई जहा अन्य कैदी बन्द थे, जिनमे जीवनसिंह भी था। इरावती ने अपनी कमर से छुरा निकालकर आगे चलने वाले प्रहरी की गर्दन मे घुसेड दिया। वह चू तक भी न कर सका। इरावती ने इस बन्दीगृह का फाटक खोल दिया और सभी कैदियो को उन्मुक्त कर दिया। बन्दी जीवनसिंह के प्रभाव म आ चुके थे। इन सब ने मिलकर महल पर हल्ला बोल दिया और लूट-पाट आरम्भ कर दी। कुछ तलवारें और बदूकें भी इन लोगों के हाथ लग गई। फिर क्या था। सब लोग मार-काट करते हुए उधम मचाने लगे। इसी समय राज-गुरु का सकेत पाकर बदा बहादुर अपने साथियो के साथ गढी के अन्दर जा पहुचा और चारो ओर मार-काट होने लगी। इधर तो जोरो से मार-काट हो रही थी पर उधर महल मे वजीर खा नशे म पडा था।

बदे बहादुर ने कत्ले आम की आज्ञा दे दी। आज वह गुरु गोविन्द सिंह के उन निर्दोष बच्चो के रक्त का बदला सरहिन्द के एक-एक व्यक्ति से ले चाहता था। मकान और दुकानें लूटी जाने लगी, गली-कूचो मे आग लगा गई। चारो ओर ताडव नृत्य हो रहा था। मुगलो और पठानो को घरो खीच-खीचकर कत्ल किया जा रहा था। चारो ओर हाहाकार मच गया। सर्व तरफ भगदड मची हुई थी, किन्तु भागकर जाने वालो को चारो ओर तलवारें ही तलवारें दिखाई देती और उनके सिर धड से अलग हो जाते। बदा बहादुर शाही मस्जिद की सीढ़ियो पर जाकर खड़ा हो गया और उच्च स्वर से कहने लगा—'बहादुरो! जब तक मेरी तलवार म्यान मे नही जाती तब तक कत्ले आम जारी रहे। दिन चढने तक यहा कोई शत्रु बचा हुआ नही रहना चाहिए। आज जी भर कर उन निर्दोष आत्माओं का बदला ले लो।'

वजीर खा को तब सूचना मिली जब पानी सिर से गुजर चुका था। उसने अपना मुह पीट लिया। अपनी जान बचाने की उसे पहले पडी। सरहिन्द के सदर फाटक पर अभी कुछ मुगल तोपो की मार से बचे हुए थे। वजीर खां घोड़े पर चढ़कर उसी ओर बढा। फाटक खुलवाकर वह निकल जाना चाहता था कि सदर दरवाजे के सामने डटी हुई सिक्ख सेना ने उसे रोक लिया। वजीर खा तलवार निकालकर उन सिक्खो को गाजर-मूली की भाति काटने लगा। उसके कुछ सिपाही भी उसके साथ थे। जब जान पर आ बनती है तब गीदड भी

शेर हो जाता है। उसी तरह बचे खुचे मुगलों ने भी अपनी जान की बाजी लगा दी। मरना तो उनको दोनो तरफ से था ही, फिर क्यो न दो-चार को मार कर मरें। उन्होने भी सिक्ख सैनिको की खूब खबर ली। उड़ती-उड़ती यह खबर बंदे बहादुर तक जा पहुंची। वह उछलकर घोड़े पर सवार हो गया और वजीर खां के सामने जा डटा। एक ही वार से उसने वजीर खां के घोड़े का काम तमाम किया और दूसरा वार वजीर खां की गर्दन पर किया, किन्तु तलवार गर्दन पर न पड़कर कंधे पर पड़ी। जिससे वजीर खां जख्मी होकर धरती पर गिर पड़ा। फिर क्या था, वजीर खां के साथी मच्छरों की भांत मसल डाले गये। वजीर खां की मुश्कें कसकर उसे बन्दी बना लिया गया। जीवन सिंह और इरावती ने महल पर जाकर उसके लहराते झडे को फाड़ फेंका। खालसा राज की ध्वजा इन दोनो ने सरहिन्द के किले पर फहरा दी।

प्रातः के सूर्य ने सर्वप्रथम पताका के दर्शन किये।

●

१८

□□□

अपराधी

तीन दिनो तक लूट-मार जोरो से होती रही। कई मन लहू मोरियो मे बह गया। उपलो के ढेर की भाति लाशो के ढेर लग गये।

थैली दिखाकर तो कोई भी अपनी जान बचा सकता था, परन्तु बिना थैली के किसी के लिए जीवित बचना असम्भव था। घायल और तड़पते हुए व्यक्तियो को पूछने की किसी को फिक्र न थी। किसी को ईश्वर का ध्यान न आया। मौत सिक्खो की तलवारो की दासी बन गई और काल को उन्होंने अपनी मुट्ठी मे बंद कर लिया। उस समय मुर्गे का तो कुछ मूल्य समझ मे आता था, परन्तु मनुष्य का नही। कसाई तथा बूचड का मन भले ही कभी सहमा हो परन्तु सरहिन्द के विजेताओ का मन जरा भी नही सहमा। कोई वलीअल्लाह वहा न पहुचा और न ही किसी की प्रार्थना ही कारगर हुई। महलो के दरवाजो की चौखटो तथा बाजारो के चौराहो पर ऐसे हाकिमो के सिर लटका दिये गये जिनकी आज्ञा के बिना सरहिन्द मे चिड़िया भी नही फड़फड़ा सकती थी। आदमियो को वृक्षों से बाधकर तीरो से बींधा गया। मेहदी से रगी हुई दाढ़ियो मे से खून टपकने लगा। बाग तो वहा कोई क्या देता, डर के कारण किसी के मुह से अल्लाह का नाम भी नही निकल रहा था। हिन्दुओ के घरो मे छिपकर अनेक मुगलो तथा पठानो ने जान बचाई।

लुटेरो ने खूब लूट-मार की, लड़ाकुओ ने खूब मार-काट की। कुछ पाशविक वृत्ति वालों ने मुसलमान औरतो से अनुचित व्यवहार भी किया। अत्याचार और दुराचार देखकर बदा सहम उठा। उसने ढिंढोरा पिटवाया और घोषणा की—

'खून से लथ पथ तलवारो को पोछ डालो। अब किसी की तलवार म्यान से बाहर न रहे। लूट-मार करता हुआ अब जो पकड़ा गया, उसे राजकीय

अपराधी घोषित कर दिया जायेगा। उसे मृत्यु-दंड दिया जायेगा। ऐसी राजगुरु की आज्ञा है।'

उक्त घोषणा के होते ही सरहिन्द में लूट-मार और अत्याचार बन्द हो गया।

सिक्ख सरहिन्द में विजयोत्सव मनाने लगे। बंदे ने वजीरखां की गद्दी पर बैठते ही दरबार किया जिसमें अनेक मुसलमान भी सम्मिलित थे और मुगल तथा पठान भी। अनेक पठान और मुगल जीवन-रक्षा की याचना करने के लिए वहां उपस्थित थे। राजगुरु दरबारियों को सम्बोधित करते हुए कहने लगे—'आज सरहिन्द हमारा है। हम मुसलमानों के बैरी नहीं। सिक्ख यदि हमारा दाहिना हाथ हैं तो मुसलमान बाया। हमारे धर्म म शासन की दृष्टि से हिन्दू और मुसलमान में कोई अन्तर नहीं है। मनुष्य पांच तत्वों का पुतला है। मन्दिर और मस्जिदों में समान रूप से ईश्वर का निवास है। इतना बड़ा कत्लेआम हम सरहिन्द में न करते, परन्तु साहबजादों की याद आते ही हमारा खून खौलने लगता है। इन साहबजादों के खून का बदला लेने वाले हम में बहुत से मुसलमान भाई भी हैं। अपराधी को सजा मिलनी ही चाहिए। दुःख इसी बात का है कि दुष्टों के कारण सज्जनों को भी कष्ट मिला है। हमारी किसी से भी अब शत्रुता नहीं है। अपराधी हमारे वश म हैं। हम सबके सामने इन्हें दण्ड देंगे। मुसलमान को सरहिन्द म रहने का उतना ही अधिकार है जितना कि एक हिन्दू को।' इतना कहकर राजगुरु चुप हो गये।

'सिक्ख राज्य जिंदाबाद', 'बंदा बैरागी जिंदाबाद', 'राजगुरु जिंदाबाद' के जयकारों से सरहिन्द का दरबार गूंज उठा। इसके उपरान्त निबोधसिंह ने खड़े होकर कहना शुरू किया—'महाराज! वजीर खां के खजाने से दो करोड़ की मोहरें हाथ लगी हैं। लगभग एक लाख रुपयों के मूल्य के गहने सुच्चानंद के घर से मिले हैं। पांच लाख के हीरे और जवाहरात भागते हुए सुच्चानन्द से छीने गये हैं। ५० तोपें और १००० घोड़े, ४०० हाथी, १००० नौबतें और नगाड़े हमें सरहिन्द से मिले हैं।

'ये सब कुछ राजगुरु को सौंप दिया जाये।' बंदे बहादुर की यह आज्ञा हुई।

'आप लोगों की वीरता और बलिदान से सिक्ख राज्य की स्थापना होगी। आने वाली पीढ़ियां आप लोगों को आंखों पर उठावेंगी।' राजगुरु कह रहा था।

इतने में दयासिंह दरबार में आया। जिसे आता देखकर राजगुरु ने पूछा—'कहां रहे दयासिंह ?'

—'तस्बीहों के ढेर का हृदय इस नीयत से टटोलता रहा कि कहीं खुदा से भेंट हो जाये।' दयासिंह ने कहा।

—'खुदा से क्या भेंट हुई भी ?'

—'कैसे होती ? वह तो हृदय के किसी कोने मे छिपा बैठा है। इन मन्दिरो और मस्जिदो मे रहकर उसे क्या कलंकित होना है।' दयासिह इतना कहकर चुप हो गया।

राजगुरु ने धीरे से दयासिह को समझाते हुए कहा—'दयासिह, हमे सिक्ख राज्य की स्थापना करनी है, कोई धर्मयज्ञ नही रचाना है जिन तस्वीहधारियों मे तुम खुदा को खोज रहे हो, वे काले नाग हैं। समय की प्रतीक्षा मे बैठे हुए अवसरवादी है। इन पर दया दिखाना अपने पावों पर कुल्हाडी मारना है। राज्य की स्थापना डंडे से ही हो सकती है।'

बंदे बहादुर ने बाजसिह को सबोधित करते हुए कहा—'बाज सिह, जरा सरहिन्द के अधिपति को यहा ले आइये। लोग उनके दर्शन के लिए उत्सुक बैठे हैं।' बंदे का आदेश पाकर बाज सिह ने सैनिक को आज्ञा दी कि वजीर खा को हाजिर किया जाये।

कुछ ही क्षणो मे रस्सियो मे जकडे हुए वजीर खा को दरबार मे सैनिक ले आये।

खलील खा ने वजीर खा को परामर्श देते हुए कहा—'घुटनो के बल दरबार मे चलो वजीर खा सम्भवतः तुम्हारी दीनता देखकर नर केसरी, बैरागी वीर बंदे बहादुर के मन मे तुम पर दया आ जाये।

वजीर खा ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया—'जिसने हमेशा सलामी ली हो, जिसके अदब मे बडे-बडे बहादुरो की गर्दन झुकती रही हो, वह किसी के आगे सिर झुकाने की अपेक्षा सिर कटवा देना अधिक उत्तम समझता है।'

वजीर खा की दिलेरी देखकर सभी दरबारी क्रोध से दात पीसने लगे। किन्तु बैरागी वीर के मुख पर प्रसन्नता और आश्चर्य की रेखाए खिच गई। बंदा वीर था और वीरो का मान करना भी जानता था। किन्तु बाज सिह का मुख क्रोध से लाल हो गया। उसने कडककर सैनिको को आज्ञा दी—'इसके घुटने लाठिया मार-मार कर तोड दो जिससे यह घुटनो के बल चलने के लिए बाध्य हो जाये।'

बाजसिह की आज्ञा पाकर कुछ सैनिक लाठियो से प्रहार करने ही वाले थे कि बंदे बहादुर ने कडकती आवाज मे कहा—'ठहरो।' सिपाहियो के हाथ उठे ही रह गये। लोग बंदे बहादुर का मुह ताकने लगे। बंदे बहादुर के मुख पर एक अलौकिक तेज विराज रहा था। उसके अधर पर भीनी-भीनी मुस्कान खेल रही थी। वजीर खा की दृष्टि भी उधर ही थी। बंदे ने कोमल वाणी मे कहा—'हम प्रसन्न हैं वजीर खा तुम्हारी निर्भीकता और बहादुरी पर। तुम लडाई हारे हो, किन्तु दिल नही हारे। यह वीरो का लक्षण है। तुम जिस शान से आज तक चले हो, उसी शान मे दरबार मे आ सकते हो।'

बंदे की बात सुनकर बाजसिह की गर्दन झुक गई। सारे दरबारी बंदे—

की वीरता पर वाह-वाह करने लगे। वजीर खां पर बंदे की बातों से उलटी प्रतिक्रिया हुई। उसने प्रखर वाणी में कहा—'मरहबा मरहबा वैरागी बहादुर! जिस बात को मनवाने के लिए तुम्हारी सारी शक्ति मुझे मजबूर नहीं कर सकती थी, उसी बात को मानने के लिए तुम्हारी दानिशमंदी ने मुझे मजबूर कर दिया है। तुम्हारे जैसे वीर के सामने घुटनों के बल क्या सिर के बल भी चलने में मैं अपना फर्ज समझूंगा।' यह कहकर वह बैठ गया और घुटनों के बल धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा। दरबार भर में दोनों वीरों की बहादुरी की चर्चा होने लगी। अपने सामने खड़े वजीर खां को देखकर वैरागी ने कहा—'सूबेदार वजीर खां जिस सरहिन्द पर तुम्हें नाज था, आज तुमने अपनी आंखों से उसकी दशा देख ली होगी और तुम यह भी जान गये होगे कि मृत्यु का पंजा तुम्हारे गले तक पहुंच चुका है। मैं आशा करता हूं कि मेरे प्रश्नों का सच-सच उत्तर दोगे। मरते समय झूठ बोलकर अपना परलोक नहीं बिगाड़ोगे। बता, क्या तूने आनन्दपुर और साहबपुर पर आक्रमण नहीं किया था? तूने झूठी कसम खाकर, गुरु गोबिन्द सिंह जी को झूठा विश्वास दिलाकर उनसे किला खाली नहीं करवाया था? क्या तूने चालीस भूखे सिक्खों को अपने लाखों सैनिकों के घेरे में लेकर शहीद नहीं किया था? क्या उस समय तुझे यह नहीं मालूम था कि एक दिन तुम्हें भी जान देनी होगी? क्या उस समय तेरी मेंहदी से रंगी दाढ़ी और हाथ की उंगलियों में फिरने वाली तस्बीह ने तुम्हें ऐसा करने से रोका न था! निरीह साहबजादों को नींव में चुनवाते समय तेरा ईमान न डोला, तेरा दिल न पसीजा? मूर्ख, यदि तूने एक बार करबला को भी याद कर लिया होता तो तुझसे ऐसे कुकर्म न होते।' कहते-कहते बंदे बहादुर के मुख पर क्रोध की लालिमा फैल गई। उसके होंठ फड़फड़ा रहे थे और नेत्र आग बरसा रहे थे। वजीर खां दृष्टि उठाकर उसकी ओर देखने का साहस न कर सका।

वह गर्दन झुकाये चुपचाप खड़ा रहा। वीर वैरागी ने पुन: कड़कते हुए स्वर में कहा—'मैं समझ गया कि इन प्रश्नों का तेरे पास कोई उत्तर नहीं है। अब अपने कुकर्मों का फल भोगने के लिए तैयार हो जाओ। (अपने सैनिकों से) इसे रस्सों से जकड़कर खम्भे से बांध दो और इसकी आंखों के सामने इसके सगे-सम्बन्धियों को मौत के घाट उतार दो।'

सैनिकों ने तत्काल आज्ञा का पालन किया और एक सरदार सुच्चानन्द को रस्सियों से जकड़ और गधे की पीठ पर बैठा कर दरबार में ले आया, जिसे देखते ही बन्दे ने खिलखिलाकर हंसते हुए कहा—'अहा, सुच्चानन्द सरहिन्द के दीवान! कहिये, यह सवारी आपको पसन्द तो है?'

उत्तर न पाकर बंदे ने फिर कहा—'बोलते क्यों नहीं नीच। अब चुप क्यों हो! मासूम बच्चों को नींव में चुनवाते समय तो तुम्हारी जबान कैंची की

तरह चलती रही होगी। उन मासूम बालकों ने तुम्हारी कौन सी खेती उजाड़ी थी। क्या नुकसान किया था उन नन्हे बालकों ने तेरा ? नीच, पामर ! हिन्दू-कुल कलंक, उत्तर दो ! चुप क्यों हो ? कदाचित् तुमने उन बालकों को नींव में चिनवाने के समय इस लिए सहायता दी थी कि तुम्हारी दीवानी सदा बनी रहे। हिन्दू होते हुए भी तुमने ऐसे अत्याचार से मुंह न मोड़ा, तुम्हारे लिए लज्जा की बात है। आने वाली पीढ़ियां तुम्हारे नाम पर थूकेंगी, तुम्हारे चरित्र को घृणा की दृष्टि से देखेंगी।'

क्रोध के मारे बंदे के मुख से आग निकलने लगी थी। जिसे देखकर सुच्चानन्द थर-थर कांपने लगा। सजा का स्मरण करके गिड़गिड़ाते हुए दीन वाणी में कहने लगा—'रहम अन्नदाता, रहम ! भगवान् के नाम पर रहम !'

उत्तर में बाजसिंह ने कहा—'बहुत जल्दी ही भगवान् याद आ गया तुम्हें जहरीले सांप ! उस समय क्या भगवान् नहीं था जब तुमने अपने सुख-सुभीते के लिए कोमल फूलों जैसे साहबजादों को मौत की गोद में जाने दिया था ? कहां था उस समय तेरा भगवान् जिसके नाम पर तू इस समय रहम मांग रहा है। उन मासूमों पर क्या तुमने रहम किया था ! बालकों की दादी ने भी कदाचित् तुमसे यही शब्द कहे होंगे। उसने भी भगवान् के नाम पर तुमसे रहम की प्रार्थना की होगी। क्या उस समय तुम्हें रहम आया था ? (सैनिकों से) तोड़ डालो इस विषधर के दांत। न रहेगा दांत और न यह किसी को काटेगा।'

उसी समय आज्ञा का पालन हुआ। बिलबिलाते हुए सुच्चानन्द के दांत सहसियों ने पकड़कर खींच लिये गये। तब बंदे बहादुर ने आज्ञा दी—'इस नीच कुल-कलंक का मुंह काला कर दो, गले में जूतों की माला पहना दो और गधे पर चढ़ाकर गली-गली भीख मंगवाओ, जिससे दूसरों को शिक्षा मिले कि देश और धर्म के द्रोहियों को अन्त में ऐसा ही दण्ड मिलता है। इसके बाद इसे उलटा लटकाकर तीरों से बींध दो।'

आज्ञा का पालन हुआ। सरहिन्द में हाहाकार मच गया। एक राही सिक्ख गा रहा था—

पापी कर्म कमावदे, करदे हाए हाए।
ज्यूं मथन मथनिया मानवा, त्यूं मथे धर्म राए॥

[पापी पहले बुरे कर्म करते हैं और बाद में हाय-हाय करते हैं। जिस प्रकार मथानी दही को मथती है, उसी प्रकार धर्मराज उस पापी का मन्थन करते हैं।]

'खलील खां को इस नगरी का कोतवाल बनाया जाता है।' बन्दे की लिखित आज्ञा राजगुरु ने पढ़कर सुनाई। चारों ओर जय-ध्वनि होने लगी। दिन भर विजयोत्सव मनाया गया। बन्दा बहादुर तख्त पर बैठा है। उसने देखा—काहन सिंह एक सन्दूक लिए आ रहा है। पास पहुंच कर काहन सिंह ने झुककर

वन्दे का अभिवादन किया और कहने लगा—'इस पेटी को पठान लिए जा रहे थे, मैंने उनसे छीन ली है। सेवा मे उपस्थित है।'

—'लूट का माल होगा।' खलील खा ने कहा।

—'तब सोच क्या रहे हो, ताला तोड दो इसका।' बाज सिंह ने आज्ञा दी।

सैनिको ने सन्दूक का ताला तोड दिया और उसका ढक्कन उठाते ही वे चौक पडे। पेटी मे एक युवती गहनो से लदी बैठी थी और पेटी सोने-चादी के सामान से ठसाठस भरी थी। वह लडकी सहमी हुई बाहर निकल आई। वह भय से काप रही थी।

—'कौन हो तुम ?' बाज सिंह ने करख्ती आवाज मे पूछा। उस युवती ने कुछ उत्तर न दिया। पास खडे खलील खा ने उसे पहचानते हुए कहा—'यह तो वजीर खा की पुत्री है।'

इतना सुनते ही सब लोगो का ध्यान वजीर खा की ओर गया जो हक्का-बक्का सा अपनी पुत्री को देख रहा था। उसके मुख का रग सफेद हो चुका था। नेत्रो म मौत की-सी उदासी छाई हुई थी। वीर वैरागी ने एक बार वजीर खा की पुत्री को देखा और फिर वजीर खा को देखा और फिर वजीर खा से कहने लगा—'कैसा बर्ताव किया जाए तुम्हारी पुत्री के साथ वजीर खा ?'

वजीर खा की आखें भीग गई। याचना भरी दृष्टि से एक बार वैरागी की ओर देखा और फिर गर्दन नीचे झुका ली।

वीर वैरागी ने प्रखर वाणी मे कहा—'चिन्ता न करो वजीर खा। हम तेरे जैसे खूखार भेडिये नही। (सैनिको से) इसे सम्मानपूर्वक पालकी मे बैठाकर दिल्ली पहुचा दिया जाए और दिल्ली पहुच कर यह अपने भाई से कह दे कि तेरा बाप दोजख मे तेरा रास्ता देख रहा है।'

पालकी आई और वजीर खा की पुत्री अपने पिता को करुण दृष्टि से देखती हुई पालकी मे जा बैठी। कहारो ने पालकी कन्धो पर उठा ली। पालकी म से निकले हुए ये शब्द सभी ने सुने—'खुदा हाफिज अब्बाजान।'

उत्तर म वजीर खा ने कहा—'आमीन' और अपनी अश्रुपूर्ण दृष्टि झुका ली। वजीर खा फिर कहने लगा—'कितने न्यायप्रिय है ये सिक्ख। कितने ऊचे विचार हैं इनके। मेरे गुनाहो को बख्शो मेरे मालिक!'

तब वन्दे ने अपने सैनिको से कहा—'इस नीच की मुश्कें बाधकर बैलो की जोडी के पीछे बान्ध दो, जिससे बैल इसे सरहिन्द म घसीटते फिरें। इतने पर भी यदि इसकी जान न निकले तो इसे जलती चिता म फेंक दो।' ऐसी आज्ञा देकर बन्दा बहादुर अपने स्थान से उठ खडा हुआ। दरबार बरखास्त हुआ और सूर्य अस्ताचल मे जा छिपा।

दूसरे दिन सूर्य की किरण फूटने से पहले ही वजीर खा का इस ससार से नामोनिशान मिट चुका था।

१९

□□□

नवजीवन

विजयी योद्धा और वीर तथा परजित कायर और निकम्मे कहे जाते है। चढ़ते सूर्य को लोग नमस्कार करते हैं, डूबते को नही। तलवार का फल तो एक धार वाला होता है, पर यह दुनिया तो दोधारी तलवार है। संसार न तो किसी को अत्यधिक सुखी ही देख सकता है और न अत्यधिक दुःखी ही। जो संसार के लिए जीता और मरता है, उसी का यह स्वार्थी संसार मान करता है। केवल अपने लिए जीने और मरने वालो को यह संसार घृणा की दृष्टि से देखता है।

आज से कुछ दिन पहले वजीर खां विजयी था, शक्तिशाली था। उस समय लोग उसके आगे झुकते थे। आज मैं विजयी हूं, सभी लोग मेरे आगे झुकते हैं और आज उसी वजीर खां को लोग तिरस्कार-पूर्वक देख रहे हैं। मेरी शक्ति क्षीण होने पर लोग एक दिन मुझसे भी घृणा करने लगेंगे। अवश्य करेंगे। आज जो लोग मुझे देवता समझते हैं, वे कल मुझे दीन भी समझेंगे। क्या है यह संसार! धोखे और स्वार्थ से भरी यह दुनिया क्यो अपने आपको और दूसरो को भी ठगती है। इस छाया रूपी माया के पीछे सभी दीवाने बनकर क्यो दौड़ रहे हैं। अपने साथ कोई क्या ले जाएगा। धोखे और चालाकी से लाखो नर-नारियो का रक्त बहाने, इतना वैभव और धन-धान्य इकट्ठा करने पर भी वजीर खां अपने साथ क्या ले गया और मैं ही क्या ले जाऊंगा? प्राणी जैसे खाली हाथ आता है, वैसे ही खाली हाथ चला जाता है। तो फिर किस लिए यह मारकाट! किस लिए यह राज-पाट! जब संसार की कोई भी वस्तु अपने साथ जाने वाली नही है, तब लाखों निर्दोषो की हत्या करने से क्या लाभ!

इसी तरह के विचार वीर वैरागी के मस्तिष्क में चक्कर काट रहे थे। वह शान्त और निश्चिन्त रहने का अभ्यस्त था। गुरु गोविन्द सिंह की प्रेरणा से उसने पुनः दुःखों के साम्राज्य में प्रवेश किया था, जहां शान्ति का नाम भी नहीं था।

वैरागी न तो लालची ही था और न राज्य का भूखा ही। वह पंजाब का शासक अवश्य था, पर उसने विजित इलाके अपने सरदारों को दे दिए। वैरागी ने बहुतों को जागीरें दीं तो अनेकों को सूबेदारियां। लोहगढ को बन्दे ने अपने शासन में रखा। वहां सभी सिक्ख सरदार और सैनिक प्रतिदिन आनन्दोत्सव मनाते थे। सभी अपने में मस्त! मदिरा पीने वाले मदिरा में, भंगेडी अपनी भांग में और पोस्ती अपने पोस्त में उलझे रहते थे। किन्तु वैरागी इन सब से अलग था। वह इस वैभव में उसी भान्ति रह रहा था जैसे कीचड़ में कमल।

एक स्थान पर कुछ पोस्ती बैठे आनन्द मना रहे थे।

—'कहो भाई सिंगारा, कुछ मजा मिला इन पोस्त के डोडों से ?'

—'अजी छोडो भी! हर समय पोस्तियों वाली बातें ही करते रहते हो। यह भी कोई नशा है। मदिरा पीकर देखो, शेर बना देती है। शेर मुख पर लाली आ जाती है एक ही प्याले में।' एक शराबी कह रहा था।

—'भाई, परसों वाली बात खूब रही। पथरल्ली ने तो कमाल कर दिखाया था।' नत्थासिंह ने कहा।

—'अरे हां यार, सुना तो मैंने भी था पर बात क्या हुई थी जरा सुनाओ तो सही।' सिंगारा सिंह ने पूछा।

—'गुलाब सिंह ने कहा था कि जब हम सरहिन्द से लौटे तो चार साथी थे। यहां आने पर एक साथी और आ मिला। अब हम पांचों की इच्छा सुक्खा घोटने की हुई। हम में से एक ने कहा—यार, आज तो पथरल्ली घोटी जाए। हम लोग नहीं जानते थे कि पथरल्ली क्या बला है, केवल उसकी हां में हां मिला दी। फिर क्या था, सुक्खा रगडा जाने लगा। दौरी में डण्डा इस प्रकार चलने लगा जैसे महफिल में कोई नर्तकी नाच रही हो। हमने सुक्खे को रगड-रगड कर मेंहदी की तरह मुलायम कर दिया। इसके बाद हमारे पांचवें साथी ने उसमें थोडी-सी अफीम मिला दी और उसके बाद किसी ने लाल रंग का पानी भी मिला दिया। बाद में उसने बताया कि वह शराब थी। हम लोगों ने उन सभी चीजों को रगड-रगड कर एक-दिल कर दिया। तत्पश्चात् उसने थोडे-से पोस्त के छिलके भी डाल दिए और इतने से ही उसने बस नहीं किया, बल्कि ऊपर से कुछ धतूरा भी मिला दिया। इन सब चीजों को घोटने में आधा दिन लग गया। सुक्खा तैयार हो गया। कुछ अन्य भंगेडी भी आ जुटे। हमने तीन कटोरे तो निहंगसिंह को दे दिए और अन्य लोगों को दो-दो चम्मच। हम पांचों ने चुल्लू में भर कर पी। बाकी बची हुई विजया पानी में मिलाकर चार घोडों को पिला दी गई। बस फिर क्या था, पांच-सात पलों में ही सबको तारे नजर आने लगे। उधर घोडे हिनहिनाये और रस्सियों को तोडकर भाग खडे हुए। घोडे लोहगढ भर में ऊधम मचाते फिरे और कई सैनिक उनके पीछे दौडते रहे। उन नशीले घोडों ने कुछ के खोंचे उलटाये और कुछ के पांव कुचल डाले। हम लोग तो

दूसरे दिन होश मे आये, किन्तु जिन लोगो ने कटोरा भर-भर कर पी थी, वे तो तीन दिन तक बेहोश पड़े रहे। सेर-सेर भर घी उन लोगो के सिर पर डाला गया तब कही जाकर वे लोग सचेत हुए। उसी दिन से पथरलो घोटना लोहगढ मे अपराध माना जाने लगा है।'

—'तब तो पथरलो ने अच्छा रंग जमा लिया था लोहगढ़ मे।' सिगारा सिंह ने कहा।

—'सिगारा सिंह, तुमने इतनी लडाइया जीती हैं, कोई अपनी बहादुरी का किस्सा तो सुनाओ।' नत्था सिंह ने कहा।

—'तो सुनो, हमने सामाना जीता, सरहिन्द पर विजय पाई, करनाल और बनूरी की कमर तोड़ी। हम हाथ मे तलवार लेकर जिधर भी निकल गए, उधर शत्रुओं का सफाया हो गया। सब ने हमारी तलवार की धाक मान ली। एक बार जब हम करनाल पर चढ़ाई कर बैठे तो घमासान युद्ध हुआ। मुगल और पठान भाग खड़े हुए। किन्तु जिसके साथ मेरी टक्कर हो रही थी, वह बड़ा ही दिलेर और बहादुर निकला। मैंने अपनी तलवार से उस जवान का बाजू काट दिया, उसके सीने पर गहरा जख्म कर दिया किन्तु उस बहादुर ने सी तक न की। गुरु की सौगन्ध, बड़ा ही वीर था वह। पर मैं भी पीछे न हटा। अपनी तलवार से उसकी बोटी-बोटी काट दी। मैं कोई मुख मोडने वाला कायर तो नही हू जो डर जाता। पूरा जवान हू।'

—'पर उसका सिर तुमने क्यो नही काट लिया। एक बार मे ही छुटकारा हो जाता।' नत्था सिंह ने पूछा।

—'अरे नही यार, उसका सिर तो पहले से ही कटा हुआ था।' नत्था सिंह यह सुनकर खिलखिला पडा। दारा सिंह के पेट म भी गुदगुदी होने लगी और वह बोला—'तुमने तो अपनी बहादुरी के झण्डे गाड दिए। मैं भी तुम लोगो को ताजी वारदात सुनाता हू।'

—'जब सरहिन्द पर हमला करने की राजगुरु ने आज्ञा दी तो हमारी बन्दूकें हमसे भी अधिक उतावली हो रही थी। किन्तु सामना होते ही शत्रुओ की ओर से गोलियों की वर्षा होने लगी। मेरे सभी साथी घायल होकर परलोक सिधार गए। शत्रु को बढते देखकर मैं भी उन मृतकों मे लेट गया। एक मुगल सरदार हमारे पास आया और पावों से ठोकर मार-मारकर देखने लगा कि कोई जीवित है या नहीं। मेरे पास पहुच कर उसने मुझे एक ठोकर मारी। मैंने तत्काल उठकर कहा—'तुम इतने बड़े सरदार और बहादुर हो। हम शहीदो के साथ दिल्लगी करना तुम्हे शोभा नही देता।' मेरी बात सुनकर वह खिलखिलाकर हस पडा और बोला—'तुम भी क्या याद करोगे। जा, भाग जा अपनी जान बचा कर।' फिर क्या था, मैं सिर पर पाव रखकर भागा। अपने डेरे पर पहुच कर ही मैंने दम लिया।'

एक दिन बन्दे बहादुर का दरबार लगा हुआ था। दरबारी यथा-स्थान अपने आसनो पर बैठे थे। राजगुरु ने खड़े होकर दरबार म कहा—'सभासदो, आप यह तो जानते ही हैं कि पजाब पर हमारा अधिकार हो चुका है। सारे पजाब पर सिक्खो की हुकूमत है। अब सिक्ख छाती तानकर रास्ता चल सकते हैं। अब नही रहा सिक्खों को पकड-पकड कर कत्ल कर दन का समय। पजाब पुन हरा-भरा और सुखी तथा समृद्ध हो चुका है। अब हम अपने आपको पहचानना चाहिए। हम सिक्ख हैं, हमारा अपना सिक्का होना चाहिए। हमारी सेना सुशिक्षित और लडाकू होनी चाहिए। हम अपन पावो पर खडा होना चाहिए। अब केवल लाहौर का मोर्चा जीतना ही हमारा ध्येय है, दिल्ली की ओर अभी दृष्टि उठाने की आवश्यकता नही। दिल्ली का बादशाह सोच-समझ कर ही हमारी ओर दृष्टि करेगा। अब हमारे लिए केवल लाहौर फतेह करना ही बाकी है। किन्तु लाहौर पर चढाई करके उसे जीत लेना कोई सुगम कार्य नही। हम लाहौर पर धावा करन से पहले भली प्रकार सोच-समझ लेना अति आवश्यक है।

उपस्थित लोगो ने एक स्वर म उत्तर दिया—'हम राजगुरु की हर बात स्वीकार करते हैं। राजगुरु जो चाहे करें, हम लोग उनके साथ हैं।'

—श्री गुरु गोविन्द सिंह का बख्शा हुआ केसरी निशान हमारा निशान होगा और हमारे बादशाह वीर बैरागी, बन्दा बहादुर होगे। मोहर बन्दे बहादुर के नाम की और सिक्का राजगुरु के नाम का होगा। हमारी राजधानी सरहिन्द ही होनी चाहिए।' बाजसिंह ने अपनी राय दी।

—'मैं इस बात के विरुद्ध हू।' राजगुरु ने समझाते हुए आगे कहना आरम्भ किया—'यह ठीक है कि सरहिन्द बनी-बनाई राजधानी है। पक्का किला और लम्बी चौडी खाई भी है, जिसम प्रकृति की ओर से हर समय पानी भरा रहता है। यह भी ठीक है कि सरहिन्द म न्यायालय भी चल रहे हैं किन्तु सरहिन्द को राजधानी बनाने म हर समय खतरा है। क्योकि सरहिन्द दिल्ली स लाहौर जान वाली सडक पर बसी हुई नगरी है और सडक भी पक्की है। आज-कल दिल्ली का बादशाह हम वक्र दृष्टि से देख रहा है। किसी भी समय वह सरहिन्द पर हमला कर सकता है। इसलिए मेरी राय म सरहिन्द को राजधानी बनाना बडी भारी भूल होगा। मेरे विचार म लोहगढ से अधिक उपयुक्त स्थान कोई दूसरा नही मिलेगा। इसलिए लोहगढ को राजधानी बनाया जाना चाहिए।' राजगुरु की बातों का सब लोगो ने समर्थन किया। राजगुरु फिर कहने लगे—'मैं आज से यह प्रतिज्ञा करता हू कि जिस किले की मै आज स्थापना करूगा उस पर झूलन वाला केसरी निशान साहिब मेरे प्राणो के साथ रहेगा और मेरे प्राण उसके साथ। जब तक मेरे तन म प्राण रहगे, तब तक यह केसरी निशान अमर

रहेगा। (बाजसिंह से) लाओ बाजसिंह निशान साहिब, आज मैं अपने हाथों से उस लोहगढ़ पर झुलाऊंगा।'

बाजसिंह निशान साहिब ले आया और उसकी विधिवत् पूजा करके उसे लोहगढ़ के बुर्ज पर झुला दिया गया। बीस तोपों की सलामी दी गई और सब लोगों ने उसे झुककर सलामी दी। उसी दिन शुभ लग्न में वैरागी बीर को लोहगढ़ का बादशाह बनाया गया। लोहगढ़ में धूमधाम से यह दिवस मनाया गया। नया सिक्का ढालने की आज्ञा दी गई, बन्दे बहादुर के नाम की मोहर तैयार करवाई गई और इस प्रकार सिक्ख राज की पूर्ण रूप से स्थापना हो गई। बाहर के गावों में डुगडुगी पिटवा दी गई कि सभी किसान तथा जमींदार अपनी मालगुजारी लोहगढ़ में जमा करवाए और सारी सेना को लोहगढ़ से ही वेतन मिले।'

एक दिन दरबारे आम में वैरागी बीर सिंहासन पर बैठे थे। बाईं ओर राजगुरु आसीन थे और दाहिनी ओर बाजसिंह तथा अन्य दरबारी-गण भी यथा-स्थान विराज रहे थे। बन्दे ने दरबार के बाहर कुछ हल्ला-गुल्ला सुनकर बाज सिंह की ओर देखते हुए पूछा—'बाहर यह कैसा शोर-गुल मचा हुआ है बाजसिंह ?'

—'भापा मैं तो कोई परदेसी व्यक्ति मालूम होते हैं सरकार !' बाजसिंह ने उत्तर में कहा।

—'उन्हें अन्दर बुलाओ। वे क्या चाहते हैं ?'

बाजसिंह ने एक सिपाही को संकेत से बुला कर हल्ला करने वाले व्यक्तियों को दरबार में लाने के लिए कहा।

कुछ ही क्षणों में वह सिपाही उन सब व्यक्तियों को अपने साथ दरबार में ले आया। आगन्तुक व्यक्ति संख्या में लगभग पचास थे। वे सभी कृषक मालूम होते थे। इनके कपड़े मैले-कुचैले तथा फटे-पुराने थे और मुख पर निराशा छाई हुई थी। सिर पर फटी पगड़ियां ये लपेटे हुए थे।

बन्दे बहादुर ने उन्हें देखकर कोमल वाणी में कहा—'कृषक राजाओ ने कैसे कष्ट किया ? क्या आज्ञा है मेरे लिए ?'

—'हम लोग बहुत दुःखी हैं सरकार। हमारे घर उजाड़ दिए गए हैं, मवेशी छीन लिए गए हैं। हमारे आदमियों को हमारी आंखों के सामने ही मौत के घाट उतार दिया गया है और हम लोगों की जमीन छीनकर हमें भगा दिया गया है। हम लोग इसी बात की फरियाद करने सरकार की सेवा में आए हैं।' आगन्तुकों में से एक ने आगे बढ़कर कहा।

—'अन्नदाता, तुम्हारे राज्य में इस बूढ़े पर बड़ा जुल्म हुआ है। मेरी सफेद पगड़ी में दाग लगा दिया गया है। मेरी युवा बेटी को मेरी आंखों के

सामने साम्प्रदायिकता की आग में जलाया गया है। उस भोली-भाली बालिका का चीत्कार मुझे अब भी सुनाई पड़ रहा है। रक्षा करो अन्नदाता, रक्षा करो।'

एक मुसलमान चौधरी जिसका नाम अब्दुल्ला था, रो-रोकर अपनी विपत्ति सुना रहा था। इतने में एक अन्य व्यक्ति ने आगे बढ़कर कहा—'मेरा नाम जमाल बेग है सरकार, मेरा घर-द्वार सभी कुछ उजाड़ दिया है। हुजूर उन शैतानों ने मेरे पुत्र के चार टुकड़े करके उसे कुएं में फेंक दिया और पुत्र-वधू को वे उठा ले गए। इन शैतानों से मेरी रक्षा करो।'

उन सब लोगों की याचना सुनकर बन्दे बहादुर के नेत्रों में खून उतर आया। वह दांत पीसता हुआ बोला—'कौन है यह नर पिशाच जो अपनी मौत से खेलना चाहता है, क्या नाम है उसका ?'

—'जलालाबाद का जमींदार अमीरबेग। उसने कुछ लफंगे और बदमाश पाल रखे हैं, जिन्होंने हमारी दुर्गति की है।' याचकों में से एक सिक्ख ने कहा।

—'उनके अत्याचार के विरुद्ध क्या तुम लोगों से कुछ न बन सका ?'

—'नहीं सरकार। वे बड़े जालिम हैं, खूंखार भेड़िये हैं, उनके सामने हमारी एक न चली।' याचकों ने एक स्वर में उत्तर दिया।

उनकी बात सुनकर बन्दा ठट्ठा लगाकर हंस पड़ा। हा-हा-हा का शब्द सारे दरबार में गूंज उठा। सभी व्यक्ति विस्मित होकर बन्दे का मुख देखने लगे। इतने में बन्दे की हंसी रुक गई और वह उग्र वाणी में बोला—'कायरो ! लाज नहीं आती तुम्हें रोते हुए। अपनी बहू-बेटियों को छिनवाकर मेरे पास फरियाद करने आए हो। तुम्हारे जैसे डरपोक और कायरों को तो चुल्लू भर पानी में डूब मरना चाहिए। वह पांच-सात बदमाश थे और तुम लोग थे पचास। उन लोगों के बारह या चौदह हाथ होते और तुम लोगों के सौ। अगर एक-एक हाथ भी तुम उन लोगों पर जड़ देते तो उनका कचूमर निकल जाता। जी चाहता है कि तुम सबको तोप के आगे खड़ा करके उड़ा दूं। जो अपनी रक्षा स्वयं नहीं कर सकता, उसे जीने का क्या अधिकार है। जाओ यहां से और अपना बदला स्वयं लो। मेरी सहायता तुम लोगों के साथ है। वीर बनकर जाओ और विजयी होकर लौटो तथा मुझसे इनाम लो।'

आगन्तुकों की भावना को चोट लगी और उनका सुप्त पुरुषार्थ जाग उठा। बन्दे बहादुर से प्रेरणा पाकर वे सभी वीर हो गए और अपना बदला उन दुराचारियों से लेने के लिए कटिबद्ध होकर लौट गए। बन्दे ने अपने कुछ लड़ाके भी इनके पीछे भेज दिए, जिससे समय पर इनकी रक्षा हो सके।

२०

□□□

बावरे नयन

कंघा, कच्छा, केश, कड़ा और कृपाण ये पाच ककार गुरु-घर के शिष्य धर्म के चिह्न हैं। जिस प्रकार पाच तत्वो के मिश्रण से यह मनुष्य रूपी पुतला बना है, उसी प्रकार ये पाच ककार भी मनुष्यत्व से ऊंचा उठाकर देश, धर्म और जाति का रक्षक, परमार्थी तथा त्यागी बना देते हैं। मनुष्य वस्तुत. बिना सींग-पूंछ का पशु है, किन्तु वही पशु गुरु-कृपा से अलौकिक गुणो की सिद्धि प्राप्त कर शिष्य की पदवी प्राप्त करता है। गुरुजन गुदड़ी म छिप हुए लाल को पहचानने मे समर्थ होते हैं। जिस प्रकार चुम्बक पत्थर बालू म से लोहकणो को खीच लेता है, उसी प्रकार मनुष्यो मे से श्रेष्ठ मनुष्य-रत्नो को गुरुजन भी अलग कर लेते हैं। जिस प्रकार अलग किए हुए लोहकणो को ढालकर विशेषज्ञ उसे फौलाद का रूप देता है, उसी प्रकार गुरुजन भी साधारण मनुष्य को मनुष्य-रत्न बना देते हैं। अश्व विशेषज्ञ जब बछड़े की पीठ पर जीन रखते हैं तो उसका यही अर्थ होता है कि उस बछड़े मे घोड़े के सभी गुण पूर्ण रूप से विद्यमान हो चुके हैं। गुरुजन भी इसी भान्ति मनुष्यो मे से मनुष्य विशेष को पहचान कर और उसे अमृत पिलाकर गुरु-घर का सिक्ख (शिष्य) बना लेते हैं और इस प्रकार मनुष्य के गुण उसमे उजागर हो उठते हैं।

—'यह जपजी साहिब का पाठ कौन कर रहा है ?' दयासिंह ने पाठ की आवाज सुनकर एक सैनिक से पूछा।

—'पाच सिक्ख अमृत तैयार कर रहे हैं। ग्रन्थी जपजी साहब का उच्चारण कर रहा है। आज तीन सन्त अमृत छकेंगे।' सैनिक ने उत्तर दिया।

—'कौन कौन लोग अमृत-पान के अभिलाषी हैं ?'

—'राजगुरु के प्रमुख शिष्य रेहड़ी, नसीरुद्दीन और दीनदार खा। ये सभी अपना चोला आप मंजीठे रग मे रगेंगे।'

सैनिक की बात सुनकर दयासिंह मन ही मन विचारने लगा। दीनदार खां का ईमान अमृत का आनन्द लेने के लिए खिसकने लगा है। दूसरों को फतवे देने वाला नसीरुद्दीन भी आज अमृत-पान के उद्देश्य से अंजलि फैलाए बैठा है। आज कायरों की काया पलट रही है। फिर कुछ सोचकर वह मन ही मन बुदबुदाने लगा। ठीक है कौन जानता है कि यही तीनों सिक्ख साम्राज्य की नींव के पत्थर हों। सोचते-सोचते वह अपने डेरे की ओर चल पड़ा। उसके हाथ में सुमिरनी थी और उंगलियां उसके मनके टटोल रही थीं।

तीन भिन्न-भिन्न दृष्टियां एक ही ज्योति में प्रविष्ट हो रही थीं। अरदास (प्रार्थना) का भोग पड़ा और सिक्ख धर्मार्थियों के हाथों में अमृत के पात्र थमा दिए गए। उसी समय तीन मूर्तियां आकर उन तीनों के पास बैठ गईं। स्वच्छ चोलों में लिपटी हुई ये तीन रमणियां थीं—इरा, बेगमा और हुसेनी। इन तीनों ने भी अमृत पान किया। ग्रन्थी सिंह ने अमृत के छींटे सब पर दिए, जिससे उन सबके मुख कुन्दन की तरह चमकने लगे। इतने में मंडप में दया सिंह प्रविष्ट हुए और कहने लगे—'रेड्डी को गुरु-कृपा से जीवन सिंह का नाम तो पहले ही दिया जा चुका है। नसीरुद्दीन को आज से हम नसीर सिंह के नाम से पुकारेंगे और दीनदार खां को दीनदार सिंह के नाम से। अकाल पुरुष इन्हें सिक्खी सिदक (सिक्ख-गौरव) बख्शे।'

अभी दिन नहीं चढ़ा था। प्रभाती की मनमोहक सुरीली तान ने रागिनी की कोख से जन्म नहीं लिया था। आकाश पर अभी तारे टिमटिमा रहे थे। हवन-कुण्ड की लपटें ऊंची उठकर मंडप को प्रकाशित कर रही थीं। सामग्री की भीनी-भीनी सुगन्ध चारों ओर फैल रही थी। होता हवन-मन्त्र उच्चारण करते हुए कुण्ड में आहुतियां डाल रहे थे। अन्तिम आहुति के पश्चात् उन तीनों युवतियों का वे तीनों पुरुष पाणि ग्रहण करने वाले थे। विवाह की वेदी फूलों से सुसज्जित थी। हुसेनी, बेगमा और इरावती का शृंगार किया जा रहा था। मेंहदी से रंगे कोमल हाथों की सुकुमार कलाइयों में सुहाग की चूड़ियां खनखना रही थीं और अन्य तरुणियां सुहाग-गान कर रही थीं। तीनों कन्याओं के हृदय में उमंगें हिलोरें ले रही थीं। लाज से मुख लाल हो रहे थे, नेत्रों में मस्ती-सी छाई हुई थी। आज नारी जीवन सफल होने वाला था।

धीरे-धीरे दिन चढ़ आया। मंडप स्त्री पुरुषों से खचाखच भरने लगा। राजगुरु पधारे। उनके मस्तक पर तेज विराज रहा था। बन्दा बहादुर भी एक उच्चासन पर विराजमान था। निबोध सिंह, बाज सिंह और अन्य शूरवीर भी वहां खड़े थे। समय को परख कर राजगुरु ने कहा—'लग्न का समय हो गया है, कन्याओं को बुलाइए।'

—'दो कन्याएं तो यहीं हैं महाराज, परन्तु तीसरी नहीं दिखाई दे रही है।' एक ब्राह्मण ने भयभीत स्वर में उत्तर दिया।

—'लग्न निकला जा रहा है, आप कार्य आरम्भ करें पण्डित जी।' राजगुरु ने आज्ञा दी।

पुरोहित मन्त्रोच्चार करने लगा। फेरे पड़ने लगे। दोनों वर-वधुओं के गठबन्धन किए गए। मडप से उठकर वर-वधू राजगुरु के चरणों में झुक गए। राजगुरु ने आशीर्वाद दिया—'दूधो नहाओ, पूतो फलो।'

आसन पर बैठा हुआ रेड्डी इरा की प्रतीक्षा कर रहा था। इतने में कुछ तरुणियां इरावती को पकड़ कर ले आईं और उन्होंने उसे रेड्डी के पास बैठा दिया।

—'विलम्ब हो चुका है राजगुरु। मुहूर्त तो निकल चुका है।' दबी जबान से पुरोहित ने कहा।

इरा का मन रेड्डी के कर-स्पर्श के लिए उतावला हो रहा था और उधर रेड्डी फेरों की प्रतीक्षा कर रहा था।

पुरोहित पत्रे में दूसरा मुहूर्त खोजने लगा। राजगुरु मन ही मन भगवान् को याद कर रहे थे। वे चाहते थे कि ये दोनों प्रेमी जो नदी के तट पर पहुंच कर भी प्यासे ही रहे हैं, शीघ्र ही एक हो जाएं। राम ही इनका रखवाला है। ये दोनों देशभक्त एक-दिल होते हुए भी सोते समय अपने बीच में तलवार रख लेते थे। इन सच्चे देश-सेवकों का अकालपुरुष शीघ्र मिलन कराए। दया सिंह मन ही मन भगवान् से यह प्रार्थना कर रहे थे।

राजगुरु ने पण्डित से पूछा—'अभी कितना विलम्ब है महाराज?'

—'यही समय है कन्यादान का। कन्या के पिता को बुलाया जाए।' पण्डित ने कहा।

इतना सुनकर राजगुरु स्वयं उठे और बोले—'मैं हूं इसका पिता। मैं कन्या-दान करूंगा।'

पण्डित जी मन्त्रोच्चार करने लगे। अग्नि प्रज्वलित हो उठी। गठबन्धन किए हुए रेड्डी और इरा फेरे लेने लगे। युवतियां मधुर स्वर में सुहाग-गान गाने लगीं। सहसा एक कर्कश स्वर ने रंग में भंग कर दिया। एक दक्षिणी कह रहा था—'यह विवाह नहीं हो सकता। दक्षिणी हिन्दू किसी ऐसी कन्या से विवाह नहीं कर सकता जो मुसलमान के घर में रह चुकी हो।'

पण्डित का मन्त्रोच्चार बन्द हो गया। फेरे लेते हुए वर-वधू के पांव रुक गए? राजगुरु ने उस दक्षिणी की ओर देखा और उससे पूछा—'तुम कौन हो?'

—'मैं दक्षिणी हूं और रिश्ते में रेड्डी का मामा हूं। यह लड़की हमारी गृहलक्ष्मी बनने के योग्य नहीं है।' इरा के सुन्दर मुख का रंग एकदम सफेद हो गया। उसे ऐसा लगा जैसे कोई उसके कोमल हृदय को आग में झोंक रहा हो। रेड्डी ने घूरते हुए अपने मामा को देखा, पर वह चुप ही रहा। राजगुरु बोले—

'इरावती वह सोना है जो आग में तपकर अपनी शोभा और बढ़ा लेता है। ऐसी देश और धर्म की सेविका को तो सहर्ष स्वीकार करना चाहिए।'

—'नहीं यह कभी नहीं हो सकता घाट-घाट का पानी पीने वाली को रेड्डी की विवाहिता नहीं बनाया जा सकता। रेड्डी मूर्ख है जो विष को जानबूझ कर निगलने लगा था। आवारा लड़की किसी कुलीन की स्त्री नहीं बन सकती।'

उसकी बातें सुनकर सिक्ख सूरमाओं के मुख लाल हो गए। अनायास ही उनके हाथ तलवारों की मूठों पर जा पड़े। क्रोध में भरे हुए दयासिंह ने कड़क कर कहा—'हम यह नहीं सहन कर सकते कि एक अदना-सा व्यक्ति मंडप में पहुंचकर उपद्रव खड़ा करे। अमृत छक लेने पर सभी पाप धुल जाते हैं, तिस पर इरावती तो सती-साध्वी है।'

—'किन्तु मैं इसे किसी भी तरह अपनी पुत्र-वधू बनने नहीं दूंगा। सत्यं शिवं सुन्दरम्।' उस दक्षिणी के शब्द पुनः गूंजे।

—'कौन ऐसा माई का लाल है जो इस विवाह को रोकने का साहस कर सकता है।' यह कहकर बाजसिंह ने म्यान से तलवार निकाल ली।

—'मैं इस विवाह में रुकावट डालने वाला हूं।' बूढ़े दक्षिणी के माथे पर बल उभर आए और उसने तलवार निकालकर रेड्डी और इरावती के गठबन्धन को काट दिया। राजगुरु मौन थे। इरावती का माथा चकरा रहा था। रेड्डी का मुंह दहक रहा था। बन्दे बहादुर का भी क्रोध उबल रहा था। इरावती मन ही मन सोच रही थी कि कहीं ऐसा न हो कि सुहाग के सिन्दूर की जगह मेरे माथे पर रक्त की लालिमा चढ़े।

—'इस तलवार से शत्रुओं का मस्तक तो नवाया जा सकता है, पर किसी दृढ़ग्राही ब्राह्मण को नहीं झुकाया जा सकता। तुमने कदाचित् किसी ब्राह्मण का हठ नहीं देखा। तिरिया हठ, बाल हठ और राज हठ जिस प्रकार तीनों अटल हैं, उसी प्रकार ब्राह्मण हठ भी डोलने वाला नहीं। तुम्हारी तलवार से मुगल तो भयभीत हो सकता है, पर बूढ़ा ब्राह्मण नहीं।' बूढ़ा ब्राह्मण बाजसिंह से कह रहा था।

—'इस धर्म ने हिन्दुस्तान के पांवों को सदियों से बेड़ियों में जकड़ रखा है। अभी कल तो आपका धर्म गजनी में नीलाम हो रहा था। कन्याकुमारी से बद्रीनाथ तक और द्वारिका से पुरी तक इस धर्म ने नित्य नए-नए खण्डों में विभक्त किया है। सुहागिनें लौंडियां बन गईं। मन्दिरों ने मस्जिदों के रूप अपनाए। तुम्हारे धर्म से छेके हुए हजारों व्यक्ति मुसलमान बनने पर विवश हुए। धर्म को नंगा होने से तुम्हें बचाना चाहिए।'

—'यदि अब भी ब्राह्मण देवता के मन में दया न उपजी तो मुझे बाध्य होकर ...।' इससे आगे बाजसिंह और कुछ न कह सका। उसकी जबान रुक गई।

बन्दा बहादुर सोच मे डूबा हुआ था। अन्त मे उसने कहा—'परिणाम को सोच-समझ कर ही कोई कदम उठाना।'

रेड्डी वेदी पर सहमा हुआ बैठा था। इरावती भी भयभीत होकर लाजवन्ती के फूल की तरह ईश्वर की लीला देख रही थी।

क्रोध चाडाल होता है। ब्राह्मण को जोश आ गया। भरी सभा मे उसने तलवार निकाल ली। दोनो की तलवारें बजने लगी। सम्भव था कि बाज सिह एक ही झटके से उस ब्राह्मण को गिरा देता। यदि राजगुरु बीच मे न पड़ते तो न जाने क्या होता।

—'बाजसिह तलवार रोको। नही जानते कि तुम किस पर वार करने जा रहे हो—अपने सम्बन्धी पर।' यह कहते-कहते राजगुरु की आखें भर आईं। एक साधारण ब्राह्मण के आगे राजगुरु झुक गए।

ब्राह्मण ने अपनी तलवार से रेड्डी और इरा का गठबन्धन पहले ही काट दिया था। इरा बिल्ली से डरी हुई जगली कबूतरी की तरह वहा से भागने लगी।

रेड्डी के नेत्रो मे से आसू ढुलकने लगे। दोनो प्यासी दृष्टि से परस्पर आलिंगन करना चाहते थे। पर धर्म ने उनके रास्ते बन्द कर दिए। सभा मौन थी।

कदाचित् किसी लोक मे प्यासी आत्माए और तृषित नयन परस्पर मिलते हों। इरावती कुछ ऐसा ही सोच रही थी।

२१

□□□

प्रतिज्ञा

वैरागी और अन्य सिक्ख सरदारों के पराक्रम से सतलुज और यमुना के बीच का क्षेत्र अब सिक्खो के अधिकार मे था। बन्दे ने अपने सेनानायकों को प्रसन्न रखने की दृष्टि से उन्हें विभिन्न प्रदेशो का सूबेदार बना दिया। करनाल और पानीपत की सूबेदारी बिनोद सिंह को मिली। सरहिन्द के सूबेदार बाज सिंह बना दिए गए। इसी प्रकार दीनदार सिंह, नसीर सिंह आदि को भी अन्य बड़े-बड़े इलाकों की सूबेदारियां दी गईं। बन्दा स्वयं लोहगढ मे चला आया। मण्डी की एक अछूत कन्या से उसने विवाह भी कर लिया

मुगलों की छाती पर सांप तो लोटता था पर उनके लिए कुछ हो नहीं रहा था। बन्दे बहादुर से जूझने का साहस उनमे नही था। वे उसके प्रभाव से आतंकित थे। उनकी धारणा थी कि बन्दा कोई सिद्ध पुरुष है जो अपनी सिद्धियों के बल पर शत्रुपक्ष का नाश कर देता है। वे लोग बन्दे को मलकुल मौत के नाम से याद करते थे।

सिक्खो की देखा-देखी राजपूताने के भी कई राजा अपने को स्वतन्त्र घोषित करने लगे। दक्षिण मे जब बहादुरशाह को पंजाब और राजस्थान सम्बन्धी समाचार मिले तो वह बहुत दुःखी तथा विकल हुआ। वह मंजिल पर मंजिल तय करता हुआ अजमेर शरीफ पहुंच गया। ख्वाजा की दरगाह मे जाकर उसने सिर झुका दिया और क्षमा मांगी। तत्पश्चात् उसने विभिन्न सेनानायकों को राजपूताने के विद्रोही राजाओ को कुचलने की आज्ञा दी। पंजाब मे सिक्खो की करतूतों के उसे ठीक और पूरे समाचार भी यहां मिले। वह सोच नही पा रहा था कि सिक्खो से कैसा बर्ताव किया जाए। उस पर सिक्खो के बहुत एहसान थे, जिनसे वह अपने आपको दबा हुआ समझता था। वह कृतघ्न नहीं बनना चाहता था। वह अच्छी तरह समझता था कि मुगल साम्राज्य तभी तक सुरक्षित रह सकता है, जब तक सिक्ख और राजपूत उसके रक्षक बने रहे।

एक दिन कई सूबेदारों के साथ बहादुरशाह दरगाह में बैठा हुआ था। एक जागीरदार उससे यों कहने लगा—'आलमपनाह ! बन्दे ने सरहिन्द की ईंट से ईंट बजा दी है। वहां अब कोई इस्लाम का नाम लेने वाला नहीं बचा। वह इस्लाम का नाम-निशान मिटाने पर तुला हुआ है। मस्जिदों को उसने मन्दिरों का रूप दे दिया है।'

—'मस्जिदों में बूचड़खाने तो नहीं खोले, गुरुद्वारे ही बनाए हैं। वहां भी भगवान् की ही भक्ति होती है। अच्छा सोचेंगे इस बात पर भी।' बहादुर शाह ने कुछ झिड़ककर उत्तर दिया।

—'मालेरकोटला, जयपुर, जगराओं, जालन्धर और लुधियाना को जला कर राख बना दिया है जहांपनाह।'

जहांपनाह बौखला उठे—'शर्म नहीं आई तुम्हें अपनी आंखों से यह देख कर। नाक कटवाकर अपनी बहादुरी और जवांमर्दी की कहानी सुनाने आए हो। क्या सिक्ख संख्या में तुम लोगों से अधिक थे? क्या उन लोगों के पास तुम लोगों से अधिक जंगी सामान था? कौन सी ऐसी बात है, जिससे वे विजयी हुए हैं और तुम लोग पराजित?'

इन बातों का गुलमुहम्मद के पास कोई उत्तर नहीं था। वह नीची गर्दन किए हुए कहने लगा—'व्यास नदी से लेकर रावी तक के इलाके में किसी मुसलमान की हिम्मत नहीं थी कि एक पग भी रख सके। सिक्ख अब शालीमार बाग तक पहुंच चुके हैं। गांव-गांव में उन लोगों ने डुगडुगी पिटवा दी है कि सारी मालगुजारी लोहगढ़ पहुंचनी चाहिए। सिक्ख आपसे विमुख हो चुके हैं, अन्नदाता।'

—'तुम डरपोक और कायर हो, अपनी जान बचाकर भाग आये हो। विजय बहादुरों के चरण चूमती है, कायरों के नहीं। दूर हटो, मेरी आंखों के सामने से।' मुगल सम्राट् ने झल्लाते हुए कहा।

—'वैरागी के धनुष से निकला हुआ बाण तीन वृक्षों को पार करता हुआ निकल जाता है आलमपनाह! जनता में यह बात प्रसिद्ध है कि बंदे के पास कई प्रसिद्ध वीर हैं। उसके वीर शत्रुओं की आत्माओं को अपने वश में कर लेते हैं। वैसे तो वह मलंग-मौला ही है, जो कुछ प्राप्त करता है औरों को दे देता है। उसने जितने स्थान भी जीते, वे सभी अपने सरदारों में बांट दिये हैं। उसने सरहिन्द के मंदिरों में जाकर सिर नवाया तो उसका भाग्य जाग उठा। हिन्दू उसे अवतार समझते हैं, सिक्ख उसे गुरु मानते हैं, संगत उसके दर्शनों के लिए हुमहुमा कर आती है। उसने जीते हुए प्रदेशों में यह घोषणा करवा दी है कि जो व्यक्ति सिक्ख धर्म स्वीकार करेगा उसे जमीन मुफ्त दी जायेगी और जमीन का लगान भी छोड़ दिया जायेगा। जनता धड़ाधड़ सिक्ख बन रही है। सिक्खों

की संख्या टिड्डी-दल की तरह बढ़ रही है। पहाड़ी राजा उसका साथ देने को तैयार नहीं हैं। मालेरकोट के राजा अजमेर चन्द ने तो उसे साफ-साफ लिख दिया है कि बैरागी तुम्हारी भी तुम्हारे गुरु की तरह कोई खुर-खोज पंजाब में नहीं मिलेगी। इस उत्तर से वदा क्रुद्ध हुआ। मालेरकोट पर उसने चढ़ाई कर दी। कई राजाओं ने अजमेर चन्द की सहायता भी की, पर बैरागी की तोपों की मार के आगे उसके पैर उखड़ गये। परिणामत अजमेरचन्द बैरागी से मेल करने को राजी हो गया। मेल कर लेने पर भी वह बैरागी का कट्टर शत्रु है।'

—'बैरागी का ठाट-बाट बढ़ गया है। राजाओं की तरह अब रहने लगा है। यही समय है जहांपनाह! सभी पहाड़ी राजा बैरागी से जले हुए हैं, आपकी सहायता मिलने पर बंदे से लोहा लेने के लिए तैयार हो जाएंगे।'

हरदयाल सिंह ने बहादुरशाह को युक्तिपूर्वक समझाया। मुगल सम्राट् सोच में पड़ गया। उसका मन सिक्खों के विरुद्ध कदम उठाना नहीं चाहता था। पर सरदारों के समझाने-बुझाने में वह पंजाब पर आक्रमण करने के लिए तैयार हो ही गया। राज्य की भलाई तथा अखण्डता के लिए उसने तै कर लिया कि पंजाब पर चढ़ाई कर देनी चाहिए।

एक दिन बहादुरशाह ने भरी सभा में अपनी तलवार निकाली और अपने सिंहासन के नीचे रख दी। इसके बाद घोषणा करवा दी कि जो वीर पंजाब को जीतने के लिए अपने को समर्थ हो वह आगे बढ़ कर तलवार को उठा ले। दरबार में सन्नाटा छा गया। वहां एक से एक बढ़ कर मुगल, पठान और राजपूत योद्धा उपस्थित थे, पर तलवार उठाने का कोई भी साहस न कर सका। बैरागी से लोहा लेने में कोई भी अपने को समर्थ नहीं समझता था। सभी एक दूसरे की ओर कनखियों से देख रहे थे।

यह स्थिति देखकर बहादुरशाह तिलमिला उठा। क्रोध से उसका मुख लाल हो गया, उसकी आंखों में खून उतर आया। वह अपने आसन से उठा और ऊंचे स्वर में कहने लगा—'क्या मेरा दरबार शूरवीरों से खाली हो चुका है? क्या मैं समझ लूं कि मुगलानियां, पठानियां और राजपूतनियां अब बहादुरों को नहीं, बल्कि कायरों को जन्म देने लगी हैं। क्या इस दरबार में एक भी ऐसा वीर नहीं रहा जो बैरागी का सिर काटकर मेरे सामने ला सके?' सभी सरदार मौन रहे। जान-बूझकर जलती आग में कोई कूदना नहीं चाहता था। तब बहादुरशाह ने फिर कड़क कर कहा—'लानत है तुम लोगों की बहादुरी पर! जाओ घरों में चूड़ियां पहनकर बैठो। उतार दो लटकती हुई तलवारों को और इन्हें रख दो इस तलवार के साथ। मेरे दरबार में हिजड़ों को स्थान नहीं मिल सकता।'

यह कहकर वह सिंहासन पर बैठ गया। सभी सरदार एक एक करके आगे बढ़ने लगे और अपनी-अपनी तलवार म्यान से निकालकर उस नीचे रखी हुई तलवार के साथ रख देते और सिर झुकाकर एक ओर खड़े हो जाते। देखते—

देखते बहादुरशाह की तलवार के पास तलवारो का ढेर लग गया। गीदड़ो के पीछे लगकर शेर राजपूत भी गीदड़ बन गये। शायद वे बंदे से लड़ना नही चाहते थे। सम्भवतः वे हिन्दू थे और हिन्दू या सिक्ख राज्य के विरोधी नही थे। हो सकता है कि वे एक मुसलमान शाह के लिए दोनो ओर हिन्दुओ और सिक्खो की गर्दनें कटाना उचित न समझते हो। अन्त मे एक दुबला-पतला सिक्ख आगे बढ़ा, जिसका नाम ठाकुर सिंह था। उसने आगे बढ़कर शहनशाह की तलवार उठा ली और उसे चूमकर कहने लगा—'मैं लोहगढ़ जीतूंगा। सिक्ख मौत से नही डरता। कायरो के साथ रहकर वह भी कायर हो गया था किन्तु सिंह, सिंह ही होता है। मै प्रतिज्ञा करता हूं कि या तो बैरागी को हजूर के सामने लाऊंगा या रणक्षेत्र मे अपने प्राण दे दूंगा।'

बहादुरशाह का मुख चमक उठा। उसने प्रसन्न होकर कहा—'मरहबा ठाकुर सिंह मरहबा। ठाकुरसिंह जिन्दाबाद!' बहादुरशाह के पीछे सब लोगो ने 'ठाकुर सिंह जिन्दाबाद' का नारा लगाया। तब बहादुरशाह ने उठकर कहा—'आज से ठाकुर सिंह दस हजारी सेना का सेनानायक नियुक्त किया जाता है। मेरे सभी सरदार इसकी आज्ञा और संकेतो पर चलेंगे।'

कुछ दिनो बाद इसी सिक्ख के नायकत्व मे मुगल सेना ने कूच किया।

२२

□□□

ढलता सूर्य

सामाने, साढौरा, लोहगढ़ और सरहिन्द के किलो पर तथा आस-पास की असख्य गढ़ियो पर सिक्खो की ध्वजाए फहराने लगी। उक्त किलो तथा उसके आस-पास के क्षेत्रो का शासन बदे के निर्देशन मे उसके प्रमुख सरदार करने लगे। स्वय बंदा लोहगढ के किले मे चला आया। जिस उद्देश्य की सिद्धि के लिए बदे ने एक दिन अपने सात्विक वातावरण को छोडा था और गुरु गोविन्द सिंह जी की प्रेरणा से रजोगुणी प्रवृत्तियो मे प्रवृत्त हुआ था, उसका वह उद्देश्य अब सिद्ध हो चुका था। उसने पजाब मे सिक्ख राज्य की नीव रख दी थी और गुरु गोविन्द सिंह के निर्दोष बालको का पूरा बदला भी सरहिन्द के सूबेदारो से ले लिया था। अब उसका इस रजोगुणी वातावरण मे दम घुटने लगा था। वह पिंजरे मे बन्द पक्षी की तरह उन्मुक्त आकाश मे स्वप्न देखने लगा। अनेक वर्षों की कठोर तपस्या और योग-साधना मे प्राप्त की हुई शान्ति को वह पुनः खोजने लगा। राज-काज उसे बोझ के समान प्रतीत होने लगा। अन्त मे उसने यात्रा का निश्चय किया। अपने कुछ सरदारो के साथ एक दिन उसने अमरनाथ की चोटियो की राह भी पकड ली।

जब तक वैरागी लोहगढ म रहा, पजाब के समस्त कार्य सुचारु रूप से चलते रहे। परन्तु उसके लोहगढ छोडते ही पजाब का वातावरण दूषित होने लगा। राजगुरु लोहगढ मे उपस्थित तो थे, पर वे पजाब को नियन्त्रण मे रख न सके। नीति, युक्ति और बुद्धि मे राजगुरु अवश्य वैरागी से बढे-चढे थे, फिर भी वे वैरागी की तरह प्रभावशाली अपने को न बना सके। वैरागी का व्यक्तिगत प्रभाव वैरागी के साथ चला गया। सिक्ख सरदार राजगुरु की आज्ञा की अवहेलना करने लगे। सरदारो की ढिलाई से सैनिक भी अपने को स्वतन्त्र समझने लगे और दिन-दहाडे लूट-पाट तथा मार-काट करने लगे। कुछ बिगडे सिक्ख बढते-बढते लाहौर की ओर जा निकले और शालीमार बाग (जिसे आजकल बागवानपुर कहा जाता है) पर कब्जा कर बैठे।

उन दिनो लाहौर का सूबेदार असलम खा था। उसने अनेक प्रकार से उन सिक्ख सैनिको को डरा-धमकाकर लाहौर से दूर ही रखना चाहा, किन्तु सिक्ख खाली हाथ नही लौटना चाहते थे। असलम खा चाहता था कि किसी प्रकार बिना

रक्तपात के ही यह बला टल जाये, किन्तु बाध्य होकर उसने उन सिक्खों के मुकाबले के लिए मुगल सेना भेजी। मुगल सिक्ख सैनिकों को वागवानपुर से न खदेड़ सके। शालीमार बाग पर उन्होंने एक बार अधिकार तो कर लिया परन्तु दूसरे दिन सिक्खों ने फिर उस कब्जा कर लिया। सिक्ख लाहौर में प्रवेश करने वाले सौदागरों को रास्ते में ही लूट लेते थे। लुटे-पिटे सौदागर लाहौर में पहुंच कर अपनी करुण कहानी लाहौर के मुसलमानों से कहते। सूबेदार की असमर्थता देखकर लाहौर के मौलवियों ने स्वयं सिक्खों से लोहा लेने की ठानी। उन्होंने लाहौर में हैदरी झंडा फहराया और जहाद की दुहाई देकर एक अच्छा-खासा जत्था खड़ा कर लिया। अनेक गण्यमान्य व्यक्तियों ने भी उनका साथ दिया। नीले वस्त्र पहने हुए स्वयं सेवक सिक्खों पर जा टूटे। शाही सेना ने उनका पूरा-पूरा साथ दिया। दो दिन तक तो सिक्खों ने डटकर उनका मुकाबला किया, पर तीसरे दिन वे भाग निकले। बिना सेनापति के फौज कब तक लड़ सकती थी। लूट-मार के उद्देश्य से वह दुरे का माना धारण किये हुए सिक्ख भला मार-काट के सामने कैसे टिक सकते थे। सिक्खों को खदेड़कर स्वयं सेवक और शाही सेना की टुकड़ी विजेताओं के रूप में विजय-गीत गाती हुई लाहौर वापस आ गई।

राजगुरु जब इन छोटी-छोटी तथा बिना सोचा-समझी की लड़ाइयों की बातें सुनते तो बहुत दुःखी होते। उन्होंने सिक्खों को काबू में रखने का भरसक प्रयत्न किया, परन्तु सिक्खों ने उस बूढ़े राजगुरु की एक न सुनी। निराश होकर राजगुरु राज-काज से अलग होने की सोचने लगे। पंजाब छोड़कर अन्यत्र चले जाने के लिए एक दिन वे घोड़े की पीठ पर सवार हो गये। लोहगढ़ की सीमा के लांघने ही वाले थे कि उनकी राह वाजसिंह, विनोदसिंह और दीनदारसिंह ने रोक ली। उन दिनों ये सभी सरदार लोहगढ़ आये हुए थे।

दीनदार सिंह ने आगे बढ़कर हाथ जोड़कर राजगुरु से कहा—'आपके आगे हम सब सिर झुकाते हैं और प्रतिज्ञा करते हैं कि हम सब आपकी आज्ञा का पालन करेंगे और अन्य सरदारों को भी आपकी आज्ञानुसार चलने के लिए बाध्य करेंगे।'

राजगुरु ने उत्तर दिया—'तुम नहीं जानते दीनदारसिंह, शाही सेना ने पूरे पंजाब को घेर रखा है। नामी मुगल तथा राजपूत योद्धा इन सेनाओं का नायकत्व कर रहे हैं और इधर पंजाब में बाजीगरों का-सा तमाशा हो रहा है। कलाबाजियां लगाकर शाही सेना का मुकाबला नहीं किया जा सकता। यदि हम एक होकर न लड़ सके तो हमारा पतन निश्चित प्राय है।'

शाही सेना ठाकुरसिंह की कमान में बढ़ी चली आ रही थी। पानीपत और करनाल विजय करती हुई यह सेना सरहिंद की सीमा में आ पहुंची। बिलासपुर के मोर्चे पर सिक्खों ने मुगल सेना से लोहा लिया और मुगल सेना को आगे

बढने से रोक दिया। समय के पारखी बिलासपुर के राजा भीमचन्द ने आस-पास के राजाओ को बुला भेजा। कुछ ही दिनों म बिलासपुर पहाडी राजाओं का गढ बन गया। उन सब राजाओ के आ जाने से मुगल सेना सशक्त हो गई। इसी समय कसूर से मुहम्मद खा रण-भेरी बजाता हुआ सरहिंद की ओर बढने लगा। बाजसिंह और रामसिंह ने अमीनगढ के किले के पास ही मुहम्मद खा को रोक दिया। सरहिंद शाही सेना के घेरे म था, इस लिए सिक्खो को वही स सहायता नही मिल सकती थी।

मतवाले हाथियो ने सरहिंद के किले के मुख्य द्वार को ठोकरें मार-मारकर तोड दिया। सिक्खो और मुगलो का जमकर युद्ध हुआ। हजारो वीर मृत्यु की गोद म जा सोये। विजय मुगलो के हाथ ही लगी। बहुत से सिक्ख सैनिक मारे गये। कुछ ने भागकर जान बचाई। रक्त से लथ-पथ किले पर शाही झंडा फहराने लगा।

शाही सेना को सामाने और साढौरा के किले जीतने म कुछ विशेष परिश्रम नही करना पडा। साढौरा मे रुककर मुगल लोहगढ जीतने की तैयारिया करने लगे। इधर राजगुरु लोहगढ में अपने मोर्चे को सुदृढ करने मे तल्लीन थे। सिक्खो ने लोहगढ की बुर्जियो पर तोपें जमा दी। रसद-पानी की चीजें किले मे जुटा ली। सिक्ख अपने राज्य की रक्षा के लिए अपना तन, मन और धन पूर्ण रूप से निछावर करने को प्रस्तुत थे। आपद् की इस घडी म वे बदे बहादुर को स्मरण अवश्य कर रहे थे। उसकी अनुपस्थिति इन्हे अखर रही थी।

पंजाब से दूर होते हुए भी वैरागी को पजाब की स्थिति का पूरा ज्ञान हो चुका था। उसे यह भी मालूम हो चुका था कि शाही सेना शीघ्र ही लोहगढ को घेरे मे ले लेगी। वह शीघ्रातिशीघ्र लोहगढ पहुचने की सोचने लगा। अपनी यात्रा से वह साथियों सहित लौट पडा। लोहगढ से कुछ दूर ही वह रुक गया और उसने कुछ गुप्तचरो को लोहगढ की वर्तमान स्थिति का पता लगाने के लिए भेजा। उन्होंने लोहगढ से लौटकर बदे को वहा की सामयिक स्थिति से अवगत करा दिया। सायकाल होते ही बदा और उसके साथी उस ओर चल पडे जहा मुगल सिपाही डेरा डाले हुए थे। आधी रात के समय वे उनके डेरे के पास पहुच गये।

चारो ओर सन्नाटा था। सेना सोई हुई थी और प्रहरी ऊंघ रहे थे। बदे ने समय को पहचाना और भूखे बाघ की तरह सोई हुई सेना पर टूट पडा। इस धावे से मुगल सरदार तथा सैनिक पूर्णतया अनभिज्ञ थे। वे गाजर-मूली की भाति कटने लगे। ऊंघते हुए मुगल सैनिको का सिर बिछौने से उठने से पहले ही कट कर अलग हो जाता। बदे वैरागी और उसके साथियो ने खूब मार-काट की। कुछ ही क्षणो म उन्होने हजारो सैनिको को हमेशा के लिए सुला दिया। मुगल

शाहज हो चुके थे। वह आंधी की तरह आया और तूफान की तरह मुगल सैनिकों को तहस-नहस करते हुए लोहगढ़ की ओर निकल गया।

फिरोजखान के पुत्र मसावदेग ने तुरन्त ही अपने सैनिकों को सुसज्जित किया और लोहगढ़ की ओर भागते हुए सिक्खों का पीछा किया। मुगल सेना के इन्तजाम को सुनकर लोहगढ़ वाले सिक्ख सावधान हो चुके थे। कुछ ही क्षणों में वे न लोहगढ़ पहुंचने की उन्हें गुप्तचरों से कभी-कभी सूचना मिली थी।

वे का लोहगढ़ का मुख्य द्वार खुला मिला। वहाँ और उसके साथियों को देखकर सिक्ख फूले नहीं समाये। किन्तु बढ़ने पर मसावदेग को सैनिकों के साथ किले की ओर बढ़ता देखकर सिक्खों ने उन पर गोले बरसाये। मुगल सिपाही थोड़ी नहीं वचीन पर गुड़को लगे। सिक्ख घुड़सवारों ने भी उनको खूब खबर ली। मसाव बेग और उसके बचे-खुचे साथियों ने भागकर अपनी जान बचाई।

बंदे के आ जाने से सिक्ख सैनिकों का उत्साह तो अवश्य बढ़ा किन्तु शाही सेना की संख्या का अनुमान जब वे लगाते तो उनका धैर्य छूटने लगता। जब उन्हें यह पता चला कि बहादुरशाह स्वयं सेना लेकर यहाँ आ पहुंचा है तो वे कुछ चिन्तित भी हो उठे। लोहगढ़ की रक्षा प्रकृति अवश्य कर रही थी। लगातार कई दिनों तक वर्षा जोरों से होती रही। तंबुओं में रहने वाले मुगल त्राहि-त्राहि कर उठे। उनके तंबुओं के चारों ओर नदियां बहने लगी। ऐसी अवस्था में लोहगढ़ पर आक्रमण करने का मुगल साहस नहीं कर सके। दिन-रात भीगते रहने के कारण हजारों मुगल सैनिक भागने की फिक्र करने लगे।

बहादुरशाह ने जब यह स्थिति देखी तो उसने अपने सरदारों को अपने खेमे में बुला भेजा। उस समय भी वर्षा जोरों से हो रही थी। जब सब सेनानायक आ गये और उचित स्थानों पर बैठ गये तब बहादुरशाह कहने लगा—'आप लोगों को इस आंधी-पानी में अपने डेरे छोड़कर यहाँ आने में कष्ट तो अवश्य हुआ होगा, पर आप लोगों से कुछ परामर्श करना आवश्यक था। आप लोग वर्तमान स्थिति बहुत अच्छी तरह से जानते होंगे। इस वर्षा और आंधी ने हमें बहुत नुकसान पहुंचाया है। सिक्खों के कुछ छिट-पुट हमलों ने हमारे बड़े-बड़े सरदारों के नाक में दम कर दिया है। हमारे हजारों सैनिक शहीद हो चुके हैं। प्रकृति और सिक्खों के अतिरिक्त एक और भी बड़ा कारण है जिसके परिणामस्वरूप हम लोगों को इतनी बड़ी क्षति हुई है। क्या आप लोग जानते हैं कि वह कौन सा कारण है ?'

सभी सरदार मौन रहे, किसी को उत्तर देने का साहस न हुआ। सब को चुप देखकर बहादुरशाह ने फिर कहा—'कारण यही है कि हमारे सरदार और सैनिक आराम-तलब हो चुके हैं। उनमें अब वह शक्ति नहीं रह गई जो एक बहादुर और साहसी योद्धा में होती है। ठंडी रात को मांस भूनने, मदिरा के प्याले छलकाने और किसी तरुणी की पायल की झंकार सुनने के लिए होती

है। क्यो है न यही बात ! डूब मरना चाहिए चुल्लू भर पानी मे ! लानत है तुम्हारी बहादुरी पर ! मैं अनुभव करता हूँ कि सिक्ख सैनिक हमसे, हमारे सरदारो और सैनिको से बहुत अच्छे हैं। वे लडाके, वीर और आत्मत्यागी हैं। मैंने सात सात दिनो के भूखे-प्यासे सिक्खो को रणक्षेत्र मे शेरो की तरह आधी और पानी मे भी लडते और विजय पाते देखा है। हमारे मुगल और पठान सेनानायक अपनी गिनती बहादुरो मे करते हैं और मूछो पर ताव देते हुए डीगें भी बडी-बडी हाकते हैं। डूब मरना चाहिए चुल्लू भर पानी मे ऐसे बहादुरों को जो मुट्ठी भर भूखे-प्यासे तथा अधमरे सिक्खों को काबू मे न ला सकें।' बहादुरशाह के शब्द मुगल सरदारो के हृदय मे तीरो की तरह गडने लगे। पर शाहे आलम के आगे सिर उठाना उनकी शक्ति के बाहर था। वे सिर झुकाये चुप बैठे रहे।

खानखाना ने मौन भग किया। वह कहने लगा—'शाहआलम, हमारे बहादुर सर्दी से जकड रहे हैं। हमे न दिन को चैन मिलता है और न रात मे नीद ही आती है। ऐसी अवस्था मे आधी और पानी से सताये हुए तथा सर्दी से जकडे हुए हमारे बहादुर चतुर और शक्तिशाली शत्रु से किस प्रकार लड सकते हैं। यदि जहापनाह हमारे प्राणो की आहुति मात्र चाहते हो तो हम आहुति देने को भी प्रस्तुत हैं,' खानखाना की युक्तिपूर्ण बातें सुनकर बहादुर शाह का क्रोध कुछ ठण्डा पडा और तब वह कुछ नरमी से कहने लगा—'इस हालत मे भी तो नुकसान हमारा ही हो रहा है। सिक्ख लुक-छिपकर हमला करते हैं और हमारे सैकडो बहादुरो को मौत की नीद सुला देते हैं और हमारी रसद लूटकर ले जाते हैं। इस सम्बन्ध मे भी हम तुम्हारी राय जानना चाहते हैं।'

—'हुजूर इस गुलाम की यह राय है कि अभी लोहगढ पर हमला न किया जाए। छुट-फुट हमला करने वाले सिक्खो से हम अवश्य जागरूक रहना चाहिये और अपनी सामग्री की भी उनसे रक्षा करनी चाहिए। इस बीच मे हमे अपना घेरा और मजबूत करना चाहिए। कब तक किले मे पडे-पडे सिक्ख अन्न के दर्शन करते रहेगे। अन्त मे एक दिन मजबूर होकर उन्हें किले से बाहर निकलना ही पडेगा। ऐसी अवस्था मे अधमरे तथा भूखे-प्यासे सिक्ख या तो स्वय अपने को हमारे हवाले कर देंगे अथवा हमारी तलवार उन्हे हमेशा के लिए ठण्डा कर देगी, और तब तक बरसात भी समाप्त हो जायगी। इस बीच मे लोहगढ पर आक्रमण करने के उपायो पर हम विचार और अच्छे मौसम की इन्तजार करते रहे।'

तब वजीर खा ने कहा—'मेरा विचार है कि पहले हमारे गुप्तचर पूरा पता लगा लें कि लोहगढ मे सिक्खो की स्थिति इस समय कैसी है और दूसरे यह भी पता करें कि लोहगढ का कौन-सा भाग कमजोर है। यदि उत्तर सन्तोषजनक मिले तो उन पर आक्रमण करना ही बुद्धिमता होगी। बरसात न जाने कब रुके। हमे और अधिक समय व्यर्थ मे नही गवाना चाहिए।'

वजीर खा की युक्ति का खानखाना ने समर्थन किया।

उधर लोहगढ मे राजगुरु, बदा और अन्य सरदार मुगलो की गतिवि
की चर्चा कर रहे थे। राजगुरु कह रहे थे—'मुझे ऐसा लग रहा है कि मुगल
वर्षा मे ही हम पर आक्रमण करने की योजना बना रहे हैं। उनकी यह चुप्पी
शान्ति जैसी है जो तूफान से पहले सागर मे होती है। इसके सिवा और यह
हो सकता है कि उन्होने यह सोचा हो कि अन्त मे सिक्ख कब तक पक्षी भांति इ
किले रूपी पिंजड़े मे फड़फड़ाते रहेंगे। सम्भवतः उन्होने यह सोचा है कि आखि
एक दिन तो हमे किला छोडना तथा लाचार होकर मैदान मे उतरना ही पड़ेगा।
बहुसख्यक मुगल हमे इस प्रकार कुचल डालेंगे। उनका ऐसा सोचना स्वाभाविक
ही है। यदि किले मे रहकर हम उनसे लडते रहे तो हम उनके छक्के छुडा सकते
हैं। मुझे उन सिक्ख वीरो की चिन्ता है जो बाहर मोर्चों पर खड़े हैं। उन पर
मुगल रात के अन्धेरे मे कही हमला न कर दें। दिन मे तो हम उन वीरो की
सहायता कर सकते हैं। उजाले मे तो हम मुगलो को तोपो से भून सकते हैं पर
रात के अन्धेरे मे ऐसा करना सम्भव नही है। रात मे हमे शत्रु और मित्र की
पहचान करने मे दिक्कत होगी। सम्भव है कि हमारे सैनिको को विवश होकर
किले की ओर भागना पड़ेगा। ऐसी स्थिति मे यदि हम किले का द्वार खोलते हैं
तो मुगल सेना भी अन्दर प्रविष्ट हो सकती है। इस लिए मेरी सम्मति यह है कि
किले मे इने-गिने सिक्ख ही रहे और बाकी बाहर जाकर लड़ें तथा बाहर वाले
सिक्खो का हाथ मजबूत करें। सम्भव है इस प्रकार हम शत्रु के दात खट्टे करने
मे सफल हो जाए।

बैरागी ने कहा—'ठीक है। मुझे भी मोर्चे पर रहना होगा।'

—'हमारे शवो को कुचलकर भले ही मुगल सेना किले मे प्रवेश कर ले,
परन्तु हमारे जीते जी उनका साया भी किले से दूर रहेगा। बैरागी किले के
रक्षार्थ किले मे ही रहे।' बाजसिंह और दयासिंह दोनो ने एक स्वर मे कहा।

राजगुरु और बदा तो किले मे ही मे रहे और अन्य सिक्ख सरदार अपने
वीरो के सहित किले से बाहर निकले। उन्होने नये सिरे से मोर्चे कायम किये
और मुगलो के धावे की प्रतीक्षा करने लगे।

रात के अन्धेरे मे सिक्ख सावधानी से अपने मोर्चे सम्भाले बैठे। एकाएक
कुछ दूरी पर हजारो मशालें जल उठी। जोश मे भरे हुए मुगल 'अल्ला हो
अकबर' के नारे लगाते हुए सिक्खो की ओर बढे। इधर सिक्खो ने भी 'जो
बोले सो निहाल सत् श्री अकाल' का नारा लगाया और भूखे बाघ की तरह
मुगलो पर टूट पड़े। दोनो ओर से तलवारें चमकने लगी। योद्धाओ से योद्धा
भिड गये। मारकाट का बाजार गर्म हो गया, शवों पर शव गिरने लगे।
दोनो ओर के वीर जान को हथेली पर रखे हुए थे और एक-दूसरे के रक्त के प्यासे
हो रहे थे। लोहे पर लोहा बज रहा था। योद्धा एक-दूसरे पर सिंह की भांति
झपट रहे थे।

खानखाना ने एक ऊंचे टीले पर अपनी तोपें पहले से ही चढा रखी थी। समय को भाप कर उसने किले पर तोपें दाग दीं। इस प्रकार किले की एक ओर की दीवार मुगल गिराने में सफल हुए। इतने में किले की तोपें भी आग उगलने लगी। इनके गोलो के शिकार मुगलो की तोपे भी हुई और तोपची भी। खानखाना बच निकला। वह प्रसन्न था। आज उसने बहुत बडा काम किया था। वह इस चिन्ता में था कि कब दिन चढे और उनके सैनिक किले में घुसें और अपना झण्डा फहरावें।

मुगल सिक्खो से दसगुने से भी अधिक थे। दिन निकलने तक सैंकडो सिक्खो के साथ हजारो मुगलो के शव पड़े थे। मुगलो की सेना इतनी अधिक थी कि सिक्खो के लिए उसका पार पाना सम्भव न था। रात भर लडते-लडते वे थक भी गये थे। कुछ सिक्ख तो किले में लौट आये, कुछ मुगलो की रक्षा-पंक्ति चीरकर इधर-उधर जा निकले। दिन के प्रकाश में जब खानखाना ने दूर से किले की दीवार पुनः बनी हुई देखी तो वह क्रोध से दांत पीसने लगा।

लोहगढ में निराशा छाई थी। राजगुरु, वैरागी और अन्य सरदार चिन्तित थे। किले में अब गिनती के ही कुछ सिक्ख बचे थे। अब उन्हें बाहर से भी सहायता मिलने की कोई आशा नही थी। सभी सिक्ख सरदार घबरा उठे थे और कुछ तो वैरागी को भला-बुरा कहने लगे थे।

कुछ दिन यो ही निकल गये। मुगलो ने इस बीच कोई आक्रमण न किया। गढ का अन्न-भण्डार समाप्त हो चुका था। चार दिनो से अन्न का एक दाना भी किसी के मुह में नही पड़ा था। घोडो के मांस से उदर-पूर्ति हो रही थी। कुछ सिक्ख वैरागी और राजगुरु को परामर्श देने लगे कि पराजय स्वीकार कर ली जाये और इस प्रकार अपनी जान बचाई जाये।

—'पराजित होने पर तुम लोग क्या अपनी रक्षा कर सकोगे? मुगल तुम लोगो को कभी जीवित नही छोडेंगे। मरना तो दोनो ओर से है बहादुरो! तो फिर क्यो न बहादुरों की मौत मरा जाए। कायर बनकर मरने से कही अच्छा है कि शत्रुओं को यमलोक पहुचाते हुए स्वयं वीरगति प्राप्त करना। यह शरीर नाशवान है। अमर आत्मा पर कायरता का धब्बा लगाकर मरना ठीक नही। मुगलो को बता देना चाहिए कि जब तक एक भी सिक्ख जीवित है तब तक किले में उनकी हवा भी नही घुस सकती। अभी तो हम बहुत हैं और सम्भवतः बाहर से कोई सहायता भी हमे मिल जाए। यदि ऐसा न हुआ तो रात के अन्धेरे में मुगल सेना को चीरते हुए निकल जाना।' राजगुरु की वाणी कुछ भर्राई हुई सी थी।

इधर खानखाना का धैर्य छूटा जा रहा था। वह स्वयं बंदे को बन्दी रूप में बहादुरशाह के सामने ले जाना चाहता था। उसने एक दिन अपनी सेना को आक्रमण करने की आज्ञा दे दी। किन्तु लोहगढ किले की खाई को

पार करना बडा कठिन हो गया। मुगल तख्ते लगाकर उस ओर जाना चाहते
थे, किन्तु ऊपर से गोलो और पत्थरो की वर्षा होने लगी जिससे मुगल मर-मर
कर खाई को भरने लगे। मुगल लकडी की सीढिया लगाकर किले पर चढ जाना
चाहते थे किन्तु ऊपर वाले सिक्ख उन्हे बकरे की तरह झटका देते। दिन भर
लडाई मे हजारो मुगल मरे। अन्त मे बाध्य होकर खानखाना ने हमला रोक
दिया और उसके थके-मारे सैनिक दिन भर की थकान मिटाने के लिए बैठ गये।

आधी रात बीत चुकी थी। लोहगढ मे बैठे बख्शी गुलाब सिंह और अन्य
सिक्ख सरदार बैरागी से बातें कर रहे थे। इतने मे राजगुरु खून से लथ-पथ
कपडो मे वहा आ पहुचा। उसके हाथ मे टूटी तथा खून से भीगी हुई तलवार
थी। वह घबराये हुए कह रहा था—'बैरागी, तुम जैसे भी हो यहा से निकल
जाओ। तुम्हारे हाथो मे हथकडिया और पावो मे बेडिया मैं अपनी आखों से
नही देखना चाहता। ऐसा होने पर हमारी आशाओ पर पानी फिर जायेगा।
मुझे गुप्तचरो से मालूम हुआ है कि सिक्ख सैनिक कीरतपुर मे तुम्हारी प्रतीक्षा
कर रहे हैं। जाओ, तुम निकल जाओ। किले की रक्षा मैं स्वय कर लूगा।
इस सिहासन की रक्षा भी मैं स्वय कर लूगा। सिक्ख सेना को सेनानायक
की आवश्यकता है। तुम तुरन्त निकल जाओ बैरागी।'

बन्दे ने कहा—'मैं आपकी टूटी हुई तलवार देखकर ही अनुमान कर चुका
हू कि हमारी पराजय निश्चित है। पर इस लोहगढ के लिए इतनी बडी बलि
देने को तैयार नही हू। राजगुरु रहेगे तो हजारो लोहगढ बन सकेंगे। राजगुरु
अपने बल और बुद्धि से हजारो बदे जैसे व्यक्ति बना सकते हैं, किन्तु हजारो
बदे मिलकर एक राजगुरु नही बना सकते। यदि जाना ही हो सबको चलना
होगा। बिना आपको साथ लिये मैं अकेला नही जाऊगा।'

—'मुगलो ने किले की दीवार फिर तोड दी है। अब वे समझ रहे हैं कि
दीवार टूट गई है और सिक्खो मे उत्साह भी नही रह गया। अनायास ही मेरी
दृष्टि उस ओर पड गई और मैं वहा जा पहुचा। मेरी इस तलवार ने कई मुगलों
के सिर धड से अलग कर दिये। अन्त मे इसने भी मेरा साथ छोड दिया।
मुगलो ने वहा दो बार हमला किया और दूसरी बार तो वे अपना झण्डा गाडने मे
भी सफल हो गये। किन्तु मैंने उसकी धज्जिया उडा दी। अब मुगल उस ओर से
भाग गये हैं। मैं तुम्हे भगवान् के नाम पर कहता हू कि तुम यहा से चले जाओ
और बिखरे हुए सिक्खों को एकत्र करो और फिर सिक्ख राज्य की नीव रखो।
यहा लोहगढ पर सिक्खो का झण्डा मेरे जीवित रहते नही झुकेगा। शीघ्रता
करो, रात आधी से अधिक बीत चुकी है।' राजगुरु के माथे पर ठण्डा पसीना चू
रहा था। पर बन्दा अब भी चुप था।

—'गुलाबसिंह! आगे आओ! सिहासन पर बैठो। सिहासन पर तुम्हे बैठा
कर मैं तुम्हारी पूजा कर लू और बदे को शीघ्र ही वहा से भेज दू। सभी सिक्ख
लडने-मरने के लिए तैयार रहें।' राजगुरु के होंठ फडक रहे थे।

गुलाबसिंह को वैरागी की पोशाक मे सिंहासन पर बैठाया गया। राजगुरु ने उसकी आरती उतारी। सबने उसे झुककर सलामी दी। स्वय वैरागी ने गुलाबसिंह को झुककर तीन बार सलाम किया और प्रस्थान की आज्ञा अपने साथ जाने वालो को दे दी। रात अभी बहुत बाकी थी। किले का फाटक खुला। वैरागी तथा उसके साथी वीर मुगलो पर जा टूटे और मारो-मारो कहते हुए घोडो को भगाते हुए सैकडो मुगलो को मौत की घाट उतारते हुए निकल गये। जब तक मुगल लडने के लिए तैयार होते तब तक किले का फाटक पुनः बन्द हो चुका था।

दिन चढ आया। लोहगढ मे कुल बारह सिक्ख बाकी थे जिसमे राजगुरु भी थे। उन सब ने जाते हुए वैरागी को बारह तोपों की सलामी दी। अन्त मे गुलाबसिंह जो बरे की पोशाक मे था, किले की बुर्जी पर आया। खानखाना ने और उसके अन्य साथियो ने गुलाबसिंह को वैरागी समझा। खानखाना ने सेना को किले पर टूट पडने के लिए आज्ञा दी। और पुनः 'अल्ला हो अकबर' के नारे लगाते हुए मुगल बढ चले। किले म सिक्खो ने भी नारे लगाये। मुगलो की ओर से तोपें दहाडने लगी। गोले आग बरसाने लगे। दिन भर की गोला-बारी से भी मुख्य फाटक न टूट सका। किले म राजगुरु पूजा पर बैठ गये। जो बात सारा दिन शक्ति व्यय करने पर नही हुई वह स्वय ही हो गई। सबने देखा कि अनायास ही मुख द्वार खुला है और ठाकुर सिंह मुस्कुराता हुआ खानखाना को अन्दर आने के लिए सकेत कर रहा है। फिर क्या था, मुगल सेनाए धडाधड अन्दर घुस गई। जो दो-चार सिक्ख थे वह कत्ल कर दिये गये। खानखाना महलो की ओर गया। उसने देखा राजगुरु पूजा पर बैठे हैं और चारो ओर बारूद के थैले पडे हैं। एका-एक राजगुरु ने अपने सामने रखी हुई ज्योति को नमस्कार किया और फिर उसी ज्योति से उन्होने बारूद मे आग लगा दी। क्षण भर म दिल दहला देने वाला जोर का एक धमाका हुआ और उस निष्ठावान व्यक्ति वीर शिरोमणि राजगुरु की आत्मा महान् असीम मे विलीन हो गई। उनके शरीर के चिथडे-चिथडे होकर इधर-उधर बिखर गये। खानखाना ने गुलाब सिंह को पकड लिया और एक पिंजडे मे बन्द करवा कर मू छो पर ताव देता हुआ सैनिको सहित बनावटी वैरागी को बहादुरशाह के सामने पेश करने के लिए ल चला। मन में वह बहुत खुश था। बडे रुआब से अकडकर बोला—'आज मैंने वैरागी को पकड लिया है। जिसके नाम से सब कापते थे, आज मेरे पजे म है। (गुलाबसिंह से) कहो भाई कहा गई वह तेरी करामात और बहादुरी!'

—गुलाबसिंह मुस्करा दिया। उसने कोई उत्तर न दिया।

खानखाना पुन बोला—'अब तो मुह मे जबान भी नही रही।'

ठाकुर सिंह भी साथ हो जा रहा था, उसने कहा—'बाज तो उड गया, यह तो रगा हुआ तोता है।'